माया सीरीज़ नं० २४

संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ

(पाँचवाँ भाग)

सम्पादक

क्षितीन्द्रमोहन मित्र

अनुवादक

लक्ष्मणसहाय माथुर

मूल्य—आठ आना

इटली

मालगरी

लेखक—ए० फ्रोगात्सारो

हज़ारों वर्ष हुये एक वृद्ध कवि ने जो किसी सुदूरवर्ती देश का राजा था, समुद्र के किनारे घूमते समय एक गीत बनाया। अपने ही रचे हुये गीत का उस पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि उसकी आँखों में आँसू आ गये। रोदन के वे अश्रु-बिन्दु समुद्र में जा गिरे और सुन्दर मोती बन गये।

अब तीन सौ साल पहले की कथा सुनिये। एक मछुये ने समुद्र में मछली पकड़ते समय, उन मोतियों में से सब से सुन्दर एक मोती पाया। इस मोती का आकार हृदय के समान था। मछुये ने वह मोती वेनिस नगर के शासक को जाकर दिया। वेनिस के शासक ने उसे लेडी कोंतारीना कोन्तारीनी को, जिनका पति राज्य का बड़ा भारी अफ़सर था, भेट कर दिया।

लेडी कोंतारीना बहुत ही सुन्दर और सहृदय थीं, किन्तु सुखी न थीं, क्योंकि विवाह के तीन साल बाद ही उनकी एकमात्र कन्या की मृत्यु हो गई थी। जिस समय की यह कहानी है (है बिलकुल सच्ची कहानी) उस समय बालिका की मृत्यु को बारह वर्ष हो चुके थे और कोंतारीना और उसके पति, सन्तान प्राप्ति की सब आशायें त्याग चुके थे।

एक दिन, गिरजा जाते समय, जब 'काम्पो सान सानीकोलो' में अपने बजरे से (वेनिस में सड़कों के स्थान पर नहरें हैं) कोंतारीना

उतर रही थीं, एक भिखारिन स्त्री ने अपने दो दुर्बल गंदे बच्चों को सामने कर भिक्षा माँगी। जब कोंतारीना ने उसके हाथ में एक गिन्नी थमा दी, तो भिखारिन के आश्चर्य का पारावार न रहा। कृतज्ञता से गद्गद होकर वह बोली—

"भगवान् आपका भला करें, आपके सारे कुटुम्बी अनन्त सुख पावें। आपको ईश्वर सदा सुखी रक्खे!"

कुछ देर बाद कोंतारीना 'सान सानी कोलो' नामक गिरजा में पहुँच गईं। वहाँ एक भिक्षु शिक्षा पर व्याख्यान दे रहा था और ठीक उसी समय सुनने वालों को एक रोमन रमणी कर्नेलिया की बात सुना रहा था, जो अपने बच्चों को दिखा कर कहा करती थी कि—'यही मेरे हीरे जवाहिरात हैं।' कोंतारीना ने सुन कर सोचा—"अहा, यदि शासक के दिये हुये सुन्दर मोती के स्थान पर एक सुन्दर-सी बालिका होती!"

प्रार्थना के बाद अपने बजरे पर चढ़ कर कोंतारीना, 'मादोन्ना देल ओर्तो' में अपने महल को वापस गईं। मार्ग में ज़रा झपकी आ जाने पर उन्हें स्वप्न दिखाई दिया कि किसी की आवाज़ बार-बार उन से कुछ कह रही है। पर उन शब्दों का वे कुछ अर्थ न निकाल सकीं। आवाज़ कह रही थी—'अगर तुम उसे खोना नहीं चाहतीं, तो संगीत और कविता से दूर रखना!'

महल में पहुँच कर उन्होंने देखा कि नौकरों में बड़े ज़ोर का झगड़ा हो रहा है। कोंतारीना को देखते ही, वे सब उनके पास दौड़े आये और गला फाड़ कर एक साथ चिल्लाने लगे। कोंतारीना ने बड़ी कठिनाई से सुन पाया कि वे लोग एक दूसरे पर सदर फाटक खुला छोड़ देने के लिये दोषारोपण कर रहे हैं—किसी ने तो फाटक खुला छोड़ा ही नहीं, तो कैसे कोई अन्दर आकर एक बच्चे को रख गया? नौकरों ने बच्चे का रोना सुना था। ढूँढ़ने पर मालकिन के

कमरे में ही बच्चा लेटा हुआ था—खास चाँदी के पालने में जो बारह साल से वैसा ही खाली पड़ा था ।

कोंतारीना के मुख से अस्फुट चीख निकल गई। नौकरों की भीड़ को हाथ से धक्का देकर चीरती हुई, वे अपने कमरे की ओर दौड़ीं। वहाँ पालने में ताज़े दूध के समान श्वेत, छोटी-सी बालिका, जिसके नेत्र सागर के समान नीले थे, लेटी थी। जब कोंतारीना कमरे के अन्दर पहुँचीं, तो बालिका ने रोना बन्द कर दिया और उनकी ओर दोनों हाथ बढ़ा दिये, मानो पहिचान लिया हो। कोंतारीना फ़ौरन अपनी तिजोरी खोल कर जवाहिरात देखने लगीं। तिजोरी का ढक्कन खुला था और शासक की दी हुई भेंट ग़ायब थी। तब उनकी समझ में आया कि किस प्रकार भगवान् ने उनके विचार पढ़ कर उस भिखारिन स्त्री की दुआ पूरी कर दी।

उनकी प्रसन्नता का ठिकाना न था। उन्होंने जल्दी-जल्दी अपनी पहली बच्ची के कपड़े उस शिशु को पहिनाये और अपने पति को बुला भेजा। पति को उन्होंने सारा हाल सुना डाला—भिखारिन का कहना, अपनी प्रार्थना और नवजात शिशु बालिका का आगमन !

उनके पति, जोवान्नी कोन्तारीनी ने समझाने की चेष्टा की कि कोई चोर इस बच्चे को छोड़ गया है और मोती को लेकर चम्पत हुआ है; लेकिन लेडी कोंतारीना इतनी खुश थीं कि पति महाशय और अधिक कुछ बोल नहीं सके और अन्त में उस बच्ची को गोद ले लेने को भी तैयार हो गये।

उस दिन सेण्ट मारगरेट (त्योहार) का भोज था। मारगरेट का अर्थ 'मोती' ही होता है। मगर जब बच्ची ने बोलना सीखा, तो वह अपने को केवल 'मालगरी' कह कर पुकारती थी, पूरा 'मारगरेट' ठीक नहीं बोल पाती थी; अन्त में 'मालगरी' ही उसका नाम पड़ गया।

मालगरी दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ने लगी। अगर वह इतनी

सफ़ेद न होती, तो वेनिस भर में सबसे सुन्दर बालिका होती। कोंतारीनी परिवार के नौकर और डाह करने वाली वेनिस की सुन्दरियाँ कहतीं कि वह इतनी सफ़ेद इसलिये है क्योंकि उसमें 'जिप्सी' (बंजारे) खून की मात्रा है। लेकिन मालगरी की छबि इतनी सुन्दर और सुडौल थी कि ऐसी ऊलजलूल बातें कोरी गप्प मात्र प्रतीत होती थीं।

बालिका का स्वभाव बहुत ही कोमल था। वैसे तो वह सारे दिन खेलती-कूदती, हँसती, फिरती थी; किन्तु यदि ज़रा भी किसी के मुख से कोई कर्कश या कर्णकटु शब्द सुन लेती, तो उसके हृदय को ठेस लगती थी। यदि कोई उसके सामने बुरा काम करता अथवा उससे किसी के दुख की कोई बात कहता, तो वह एकदम गम्भीर हो कर बैठ जाती। इन बातों से उसे बड़ा क्लेश होता था। अगर कोई उसके सामने झूठ बोलता, तब तो उसे बहुत ही दुख होता था।

गर्मी का मौसम था। रात के समय कोई नाव में बैठा 'मादोन्ना देल ओर्तो' नहर में बहता गाता चला जा रहा था। उसके सितार की मीठी झंकार सुमधुर स्वर फैला रही थी। मालगरी उस समय केवल चार वर्ष की थी और अपनी माँ के साथ सो रही थी। संगीत सुनते ही वह पलंग से उठ कर भागी और खिड़की के पास जा कर खड़ी हो गई और जब तक कि संगीत का शब्द क्षीण पड़ कर लुप्त न हो गया, वहीं खड़ी रही और फिर धड़ाम से बेहोश होकर गिर पड़ी।

जब उसे होश आया तो माँ के बिस्तर पर थी। उसने कोंतारीना से बहुत कहा कि मुझे खिड़की के पास जाकर गाना सुनने दो। फिर उसे बड़े ज़ोर का बुखार चढ़ आया और तीन दिन तक दिन और रात तेज़ बुख़ार में पड़ी बड़बड़ाती रही, केवल एक ही बात दोहराती थी कि उसे कोई पुकार रहा है और उसे जाना ज़रूर है; वह वेनिस की नहीं है; उसका देश उसे बुला रहा है। और बार-बार वह कोंतारीना का चुम्बन करती और कहती, "माँ, प्यारी माँ! मुझे वहाँ ले चलो!"

कोंतारीना को अपने स्वप्न के शब्द याद आ गये। उन्होंने निश्चय कर लिया कि वह वेनिस नगर में बच्ची को संगीत (अगर कविता नहीं) सुनने से रोक नहीं सकतीं, इसलिये अपने पति से कह कर वेनिस छोड़ देंगी और एक यूनानी टापू सीरा, जहाँ उनका एक महल था, जाकर बसेंगी। सीरा का महल नारंगी, ज़ैतून और फूलों के बाग़ के बीच में खड़ा था और एक ओर समुद्र का सामना पड़ता था। टापू के उस भाग में बाग़ के मालियों को छोड़ कर और कोई नहीं बसता था।

लेकिन पति कोंतारीनी ने फिर अनुमति देने में हीला-हवाला किया। कहा कि वेनिस छोड़ कर जाना उनके लिये सम्भव नहीं है। कोंतारीना फिर भी ज़ोर देती रहीं और अन्त में अकेली मालगरी को लेकर सीरा चल दीं।

टापू के सब निवासियों को कड़ी आज्ञा थी कि किसी प्रकार का कोई बाजा आदि न बजावें और न कोई गाना आदि गावें। यहाँ तक कि गिरजे के घंटे बजना भी बन्द हो गये, क्योंकि पहले ही दिन, महल में पहुँचते ही, 'आवे मारिया' के गिरजे के सुन्दर घंटे का स्वर और लहरों की धीमी आवाज़ सुन कर मालगरी विचलित हो उठी थी।

लेकिन उस बालिका का सारा उत्साह, सारी हँसमुख किलोलें ठंडी पड़ गई थीं। वह बहुत कम खेलती थी और हँसती तो शायद थी ही नहीं; फिर भी वह समुद्र को पास देख कर सुखी थी और घंटों किनारे बैठी वरुण देव का घोष सुना करती थी।

ज्यों-ज्यों वह बड़ी होती गई, उसका मन पढ़ने में अधिक लगने लगा। महल के पुस्तकालय में वह सारा दिन काट देती। एक दिन उसकी माता ने उसे 'तास्सो' की कविता पढ़ते पाया। कविता ने उसे बहुत ही उत्तेजित कर दिया और भावों के संघर्ष मे उसके मुख पर दमक छा रही थी और नेत्र उद्दीप्त थे। अगले ही दिन कोंतारीना ने सारी कविता पुस्तकें निकलवा कर जलवा दीं।

उनके पति कं.तारीनी साल में केवल एक दो बार ही आते थे और दो-तीन दिन ही ठहरते थे। आकर उन्होंने अपनी प्यारी पुस्तकें न देखीं, तो बड़े बिगड़े (अपनी पत्नी का पागलपन बताया) पर फिर शान्त हो गये।

माता-पिता के बीच का प्रेम दिनों-दिन घटते देख, मालगरी को बड़ा दुख होता था। उसने कई बार माँ को समझाया कि वेनिस वापस चली चलो। अपने जन्म के रहस्य के बारे में वह अभी तक कुछ नहीं जानती थी। वह यही समझती कि बचपन में कभी बीमार पड़ कर उसने वेनिस छोड़ने के लिये कहा था और वे छोड़ कर यहाँ आ गये थे। लेकिन माँ वेनिस लौटने को राज़ी नहीं हुईं; सिर्फ़ चुम्बनों, दुलार और आँसुओं से वे समझाती रहीं।

एक दिन जब मालगरी लगभग तेरह साल की थी, एक नौकरानी ने निकाल दिये जाने पर बिगाड़ कर उससे यह कह दिया कि उसे चोर बंजारे कोन्तारीनी के मकान में डाल गये थे। सुनते ही मालगरी सिहर कर सफ़ेद पड़ गई—बिलकुल मोतियों के समान। नौकरानी से यह कह कर कि 'मैंने तुम्हें क्षमा किया,' वह भागी हुई माँ के पास गई। वह पूरा हाल सुनना चाहती थी और अपनी ज़िद पर अड़ी रही।

कोन्तारीना को बताना पड़ा कि किस प्रकार वह आई थी। कहते-कहते वे काँप रही थीं। मालगरी के मुख पर सूर्योदय की आभा छा गई, "माँ, माँ ! मैं जानती हूँ, मैं बंजारों की कन्या नहीं हूँ; मैं मोतियों की पुत्री हूँ; मैं वही मोती हूँ। तुम किसी को मेरे बारे में बताना मत, हवा तक को नहीं—वह शायद मुझ से दग़ा कर जाय; समुद्र को भी नहीं—वह शायद मुझे पकड़ कर ले जाय। लेकिन माँ ! मुझे यह बताओ कि तुम किसी को गाने क्यों नहीं देतीं ? मुझे तुमने वह सुन्दर किताब क्यों नहीं पढ़ने दी ?"

कोन्तारीना ने कोई भी सीधा उत्तर न दिया और मालगरी ने अधिक आग्रह भी नहीं किया। माँ का चुम्बन कर वह कह गई—"लेकिन माँ, मैं तो वेनिस जाना चाहती हूँ..."

उसी दिन शाम को मालगरी समुद्र के किनारे घूमने गई और एकान्त में दो बड़ी चट्टानों के बीच बँधे थोड़े से पानी में जाकर लेट गई। उथला जल साफ़ चिकने रेतीले फ़र्श पर सो रहा था; किनारे पर लगे चीड़ के पेड़ मन्द वायु से घुल-घुल कर बातें कर रहे थे।

मालगरी को बड़ा भला लग रहा था। उसे समुद्र इतना अधिक पसन्द कभी नहीं आया था। वह रेत में पैर अटका कर लेट गई और सिर से पैर तक पानी में ढँक गई। छोटी-छोटी लहरें उसके ऊपर खेलने लगीं। सागर का जल ऐसा गरम, कोमल और सुखदायक प्रतीत होता था कि मालगरी उससे धीमे स्वर में बातें करने लगी, मानो वह मोती बन कर लेटी हो। उसने सागर के सामने अपना हृदय खोल कर रख दिया और अपनी असली माँ, समुद्र से विनती करने लगी कि फिर एक बार वही सुख मिले जो उस बार वेनिस में रात्रि के संगीत ने दिया था और जो एक बार फिर पुस्तकालय में क्लोरीन्दा और तांक्रेदी की कहानी पढ़ते समय मिला था।

ऐसा मालूम पड़ा, मानो सचमुच सागर ने बालिका के शब्दों का उत्तर दिया हो और अधिक सुख का वचन दिया हो। फिर आकाश में अंधकार बढ़ने लगा और सागर का जल भी काला पड़ गया और धीरे-धीरे मालगरी ने देखा (वह नहीं कह सकती कि वह सो रही थी या जाग रही थी) कि तमाम चमकते हुये प्रकाश-बिन्दु उसकी ओर बड़ी दूर से आ रहे हैं। और तब उसने देखा कि प्रत्येक बिन्दु छोटा-सा मनुष्य का चेहरा है और वहाँ हज़ारों बालिकाओं के सुन्दर मुख थे, किसी के सुनहरे बाल, किसी के भौंरे के समान काले; पानी

की अनगिनती उज्ज्वल बूँदों में उछलते हुये गोरे-गोरे हाथ, चमचमाते जल को चीरते हुये आगे बढ़ रहे थे।

वे मालगरी के गड्ढे के बिलकुल पास से निकल गये। मालगरी वहीं लेटी हुई उनकी अनुपम ज्योति निरखती रही। उनके प्रकाश से सारी चट्टानें, किनारा, वन आदि आलोकित हो रहे थे। सब चीज़ें मालगरी के सामने से निकलते समय उसकी ओर गरदन घुमा कर देखती थीं; किन्तु रुक कर उसके पास तक कोई नहीं आई, केवल जब अन्तिम बार सामने से निकली, तो वह रुक गई और मुड़ कर चट्टानों के बीच फुदकती हुई उसके पास आ गई और उथले जल में ज़रा हट कर बैठ गई।

"तुम कौन हो?" मालगरी ने पूछा।

"मत्स्य-बालिका!"

"मत्स्य-मानव हो? तब तो तुम भविष्य बता सकती हो।"

"हाँ।"

"अच्छा, तो मेरा भविष्य बताओ।"

उत्तर देने से पहले 'मत्स्य-बालिका' उसे थोड़ी देर तक देखती रही।

"तुम्हारी उत्पत्ति संगीत और कविता से हुई थी, और संगीत और कविता ही में तुम लौट जाओगी।" उसने बताया।

मत्स्य-बालिका का मुखड़ा बड़ा ही सुडौल और कोमल था—बेलकुल ज़रा-सी कन्या जैसा, किन्तु नेत्र विशाल थे—षोड़षी जैसे।

"तुम बड़ी सुन्दर हो", मालगरी ने कहा, "मेरे पास आकर बैठो।"

"मैं नहीं आ सकती। मत्स्य-मानव किनारा नहीं छू सकते।"

"तो फिर कभी मिलोगी?"

"मैं समुद्र की हूँ," मत्स्य-बालिका बोली, "किन्तु तुम आकाश की हो।" और बिना बिदा लिये हुये ही वह मुड़ कर अपनी बहिनों के दल में मिलने के लिये गहरे जल में विलीन हो गई।

मालगरी घर लौट आई। उसने मत्स्य-बालिका के बारे में किसी को कुछ भी नहीं बताया। परन्तु उसने कभी फिर कौंतारीना से नहीं पूछा कि संगीत और कविता से उसे क्यों दूर रक्खा जाता है।

उस दिन के बाद फिर वह कभी नहीं हँसी। वह और भी अधिक गम्भीर होती जाती थी और बहुत ही दयालु हो गई थी।

टापू में जो कोई भी किसी कष्ट में होता, तो वह दौड़ी जाती और उसकी तकलीफ़ दूर करने की चेष्टा करती और अपनी सहानुभूति और सहायता बिखरा कर उसे आनन्दित कर देती। उनके घरों में स्थान पाने के साथ ही साथ, वह उनके हृदयों में भी स्थान पा गई थी। वह जहाँ पहुँचती उजेला कर देती और लोगों को प्रसन्न-चित्त छोड़ कर आती।

शाम को वह अक्सर समुद्र के किनारे जाती, किन्तु फिर कभी उसे मत्स्य-बालिकायें न दीखीं।

जब वह पन्द्रह वर्ष की हुई, तो उसके सुन्दर मुख और लम्बे सुगठित शरीर को देख कर, कोई भी उसे अठारह वर्ष की बता सकता था। कौंतारीना को उसके लिये वर की चिन्ता होने लगी।

जोवान्नी कौंतारीनी दो वर्ष से नहीं आये थे। वे पत्र भी बहुत कम लिखते थे, दो महीने में केवल एक बार जब कि बोरसारी सौदागर के जहाज़ रिआल्तो से आते समय टापू के पास से निकलते थे।

एक बार जहाज़ कोई पत्र नहीं लाया। केवल यही समाचार था कि वेनिस में प्लेग का विकट प्रकोप है।

कौंतारीना की परेशानी का ठिकाना न रहा। अपने पति के संकट का विचार आते ही वे अपने को दोष देने लगीं कि वे बेचारे वहाँ प्लेग में पड़े होंगे और वे यहाँ दूर बैठी हैं। उनकी परेशानी, मालगरी की यह बात सुनकर कि वेनिस लौटना हम लोगों का कर्त्तव्य है, और भी बढ़ गई। मालगरी अपने निश्चय पर दृढ़ रही।

कोंतारीना को मालगरी की बात माननी पड़ी। भगवान् की इच्छा समझ कर वे वेनिस-लौटने को राजी हो गईं और दो सप्ताह बाद दोनों 'मादोन्ना देल ओर्तो' में अपने महल पहुँच गईं, जहाँ एक दिन पहले जोवान्नी कोंतारीनी की मृत्यु हो चुकी थी।

कोंतारीना शोक से विह्वल हो गईं। रोते-रोते उन्होंने मालगरी से फ़ौरन वेनिस छोड़ चलने को कहा; किन्तु वह हठीली बालिका फिर अड़ गई। अगर उसके पिता कोंतारीनी, परिवार के दूर रहने के कारण बिना मिले ही चल बसे, तो दोष उन्हीं लोगों का है और प्रायश्चित्त करना ही होगा। उसने अपने लिये यह कह दिया कि वह अब परिचारिका बन जायगी और महामारी में ग्रसित बीमारों की सेवा करेगी।

कोंतारीना को भय लग रहा था, किन्तु अपनी पुत्री का विरोध करने का साहस न था, क्योंकि उस समय मालगरी देवी मालूम हो रही थी।

सेवा-कार्य मालगरी ने तत्काल आरम्भ कर दिया। बीसियों परिवारों के लोग प्लेग से बचने के लिये घर छोड़ कर भाग गये थे और बेचारे रोगियों को मरने के लिये सड़क पर घिसट-घिसट कर आना पड़ रहा था।

मालगरी की अलौकिक सुन्दरता, मधुर वाणी और कोमल कर-स्पर्श ने सब को मोहित कर लिया—ग़रीब अमीर सभी उसको पूजते थे। रोगी उसे 'स्वर्ग के उपवन की रानी' कहते थे।

वह एक नवयुवक रोगी को भी दूसरे रोगियों के साथ देखती थी। यह संगीतज्ञ था और उत्तर में अपना निवास-स्थान छोड़ कर इटली में संगीत-निपुण बनने आया था। बेचारा ग़रीब, सुन्दर, भला युवक अच्छा होते-होते अपनी परिचारिका मालगरी को जी-जान से प्रेम करने लगा था। किन्तु अपना प्रेम जताने का उसे अवसर ही न मिला, क्योंकि मालगरी अभी तक अपने को ठीक-ठीक समझ नहीं पाई थी

और यह समझ कर कि प्रेम करने का अभी कोई समय नहीं है, उसने युवक से मिलना छोड़ दिया।

प्लेग के चले जाने के बाद भी, वह अक्सर उसे याद करती रही, किन्तु फिर मिली नहीं।

मालगरी की सेवाओं का राज्य ने उचित सम्मान किया, यहाँ तक कि नये शासक ने अपनी समझ में उसका मान बढ़ाते हुये उससे विवाह का प्रस्ताव भी कर दिया।

मालगरी के साफ़ मना करने पर भी कौंतारीना तय नहीं कर पाईं कि शासक की इच्छा-पूर्ति न करना ठीक होगा कि नहीं। उन्हें मना करते हुये बड़ा भय लग रहा था। किन्तु मालगरी अपने निश्चय पर दृढ़ रही और मज़ाक में उसने यह कह दिया कि अगर शासक वेनिस की प्रत्येक ग़रीब लड़की को दहेज़ दे और नगर के हरेक भिखारी को वार्षिक सहायता देने का वचन दे, तो शायद वह निश्चय बदलने की कृपा करेगी। और अगर शासक 'कम्पानीले' को (जो उसे फूटी आँखों भी नहीं सुहाता था) 'पिआत्सा सान मार्को' से हटा दे, तो वह अवश्य विवाह कर लेगी

नगर-शासक ने उत्तर दिया कि पहली दो शर्तें तो वह स्वीकार करने को तैयार है, मगर तीसरी विवाह के तीन वर्ष बाद पूरी कर देगा।

अब तो मालगरी बड़ी दुखी हुई, क्योंकि अगर अपने शब्द वापस लेती है, तो सैकड़ों दीन-दुखियों का भला नहीं करती है; और शासक से विवाह करना उसे बिलकुल न भाता था। अन्त में ग़रीबों के भले के लिये उसने अपने को बलिदान कर देना ही निश्चित किया और विवाह करने को राज़ी हो गई।

विवाह का दिन और दूर सरकाने के लिये उसने निश्चित तिथि से एक दिन पहले पूछा कि अगर शादी सीरा टापू पर हो, तो बड़ा अच्छा हो। शासक इस बात पर भी सहमत हो गया और राज्य के

दो जहाज़ों पर चढ़ कर, रिश्तेदारों और नौकर-चाकरों की भीड़ के साथ दोनों, टापू के लिये रवाना हो गये।

अगस्त मास का शुक्ल पक्ष था। यात्रा की दूसरी रात्रि को, लगभग एक बजे मालगरी बाहर डेक पर चाँदनी और ठंडी हवा का मज़ा लेने आई और जंगले के पास एक बेंच पर बैठ कर समुद्र को देखने लगी। उसने देखा कि एक मल्लाह उससे बातें करना चाहता है, किन्तु उसकी हिम्मत नहीं होती है।

मधुर स्वर में उसने पूछा कि क्या चाहिये। मल्लाह पास आकर बोला—"मुझे पहिचाना नहीं!" यह वही युवक संगीतज्ञ था जिसकी प्लेग के दिनों में उसने सेवा की थी। उसके शब्द सुन कर मालगरी बहुत उद्विग्न हो उठी; किन्तु पूछा नहीं कि उसका जहाज़ पर इस वेश में रहने का कारण क्या है। उसने केवल इतना ही बताया कि अपनी सुन्दर परिचारिका के एकाएक छोड़ कर चले आने पर उसे बड़ा दुख हुआ था और अब उसे धन्यवाद देने का अवसर पा कर उसे बड़ी ख़ुशी है।

युवक के वचन सुन कर जीवन में पहली बार मालगरी के मुख पर लालिमा दौड़ गई। वह इस पर कुछ बोली नहीं और इधर-उधर के प्रश्न करने लगी।

उसके प्रश्नों के उत्तर में युवक ने अपने देश के बारे में बताना शुरू किया। उसका देश उत्तर दिशा में बहुत दूर है। गर्मी के दिनों में आँधी-तूफ़ान आते हैं और जाड़ों में शीत का कोप होता है। सारा देश उदास है; ऊबड़-खाबड़ चट्टानों, झीलों और जंगलों से भरा हुआ। पेड़ों की छाल ही अकाल के दिनों में रोटी बन जाती है। निवासी अधिकतर सीधे-सादे मछली पकड़ कर पेट पालने वाले हैं, जो वहाँ की झीलों में पेड़ों को खोखला कर नाव बना, मछली मारने जाते हैं। कभी-कभी शिकारी जंगली बतख़ों को खोजते हुये समुद्र

के किनारे भी पहुँच जाते हैं। जाड़ों में बर्फ़ की गाड़ियों पर बैठ कर भेड़िया, लोमड़ी और रीछ का शिकार होता है। "हमारा देश सोने चाँदी में दरिद्र है", युवक ने बात समाप्त करते हुए कहा—"परन्तु संसार की सब से सुन्दर वस्तुओं में बहुत अमीर है—संगीत और कविता में।"

"किन्तु—क्या मतलब ? ऐसा कैसे कह सकते हो ?" वह बोली।

तब युवक ने अपने देश की सुन्दर रीतियों और त्योहारों का वर्णन किया। किसान लोग जाड़ों में आग के चारों ओर बैठ कर संगीत-चर्चा करते हैं। गर्मी में झीलों के किनारे उगे सुन्दर फूलों के बीच नृत्य करते हैं। उसने अपने देश की कथायें सुनाईं—प्रेम की, घृणा की, युद्धों की, शान्ति की। और एक प्राचीन कवि राजा की भी कथा सुनाई, जो समुद्र के किनारे बैठ कर गाया करता था और अपने बनाये गीत पर इतना द्रवित हुआ था कि उसके आँसू बह चले थे और सागर में गिर कर मोती बन गये थे।

मालगरी चाँद की ओर पीठ किये बैठी थी और चाँदनी उसके सुन्दर बालों से टकरा कर युवक के मुख पर पड़ रही थी। उसकी कथायें वह बड़ी उत्सुकता से हाथ से वक्षःथल को दबाये, विस्फारित नेत्रों से सुन रही थी। प्रेम और दुख से उसका हृदय भर आया था।

कथा समाप्त होने पर वह बोली, "मैं तुम से पहले क्यों न मिली ?"

यह शब्द कहते ही वह अपने ऊपर पश्चात्ताप करने लगी और गर्दन फेर कर समुद्र में दृष्टि फेंकी। अचानक बहुत दूर पर जल में रुपहली धारायें उसे दिखाई दीं। मत्स्य-बालिकाओं के छोटे-छोटे सुन्दर मुख पानी में हीरों की भाँति दमक रहे थे।

उसे लगा कि एक को उसने पहिचान लिया, क्योंकि केवल एक ही ने जहाज़ की ओर दृष्टि फेंकी थी। उसे लगा कि उसकी दृष्टि मत्स्य-बालिका की आँखों से मिल गई और उनका भाव समझ लिया।

आवेश में आकर उसने सामने बैठे हुये युवक से कहा—"वृद्ध कवि का गीत मुझे सुना दो!"

युवक उठा और अपना इटैलियन बेला उठा लाया।

"धन्यवाद," मालगरी बोली, "ज़रा ठहर जाओ...अगर और लोग आ गये तो मुझे देख न लें।"

और कूद कर वह जहाज़ के जंगले और पास लगी तोप के बीच में लेट गई।

देश-भक्त, कलाकार और प्रेमी युवक ने अपना स्वर्गीय संगीत प्रारम्भ किया और उसकी आत्मा बेला के स्वरों में मिल गई।

मत्स्य-मानव संगीत से मोहित हो कर जहाज़ के पीछे-पीछे चलने लगे। जहाज़ के मल्लाह, अफ़सर, नौकर, मालिक सभी इस अलौकिक संगीत को सुनने के लिये दौड़े आये। युवक बजाने में तल्लीन था; उसे भीड़ को देखने की उसे सुध न थी। एकाएक उसे होश आया। अपने पास मनुष्यों का जमाव देख कर वह संगीत बन्द कर उठ खड़ा हुआ और मालगरी से बिदा माँगने लगा। वहाँ मालगरी का कोई पता न था, केवल आँसुओं से भींगा एक रूमाल पड़ा था।

लोगों ने समझा कि शासक के साथ विवाह करने से बचने के लिये वह समुद्र में कूद पड़ी।

कोंतारीना कोन्तारीनी अपनी पुत्री को सागर के गर्भ में फिर मोती बन जाते देख, मारे दुख के चल बसीं। किन्तु असली बात तो हम लोग ही जानते हैं। मोती स्वयं कवि के आँसुओं और आत्मा से बना था और इसीलिये मालगरी के स्थान पर आँसुओं से भींगा केवल एक रूमाल मिला था। और हमें उस मत्स्य-बालिका के शब्द भी याद हैं:—"मैं तो समुद्र की हूँ। तुम अकाश की हो।"

इटली

शत्रु

लेखिका—कारोला प्रोस्पैरी

बाहर से बीबी ने उसे पुकारा तब वह अपने कमरे में, सिगार मुख में दबाये, खिड़की के पास, मेज़ पर कुहनी टेके, बाहर की ओर एक-टक दृष्टि से देख रहा था।

"पीयेत्रो, मैं अन्दर आ जाऊँ? बड़ी ज़रूरी बात तुम्हें बतानी है।"

क्योंकि भीतर से कोई उत्तर नहीं आया, वह कुछ देर चुप रह कर फिर बोली—"केवल एक क्षण के लिये आने दो; बहुत ही ज़रूरी बात है; तुम्हें सुनना ही होगा।"

उसने दरवाज़ा खोल कर ज़रा शरमाते हुये मुस्करा कर क्षमा प्रार्थना-सी दिखाई और चुपचाप पंजों के बल चल कर आई।

"तुम बहुत सिगरेट पी रहे हो। स्वास्थ्य के लिये यह अच्छा नहीं है, तुम तो जानते हो...यहाँ अँधेरे में क्यों बैठे हो?"

धुआँ उड़ाने के लिये अपने रेशमी रूमाल से उसने हवा करने की चेष्टा की; उसके रेशमी वस्त्र हिलने के कारण हवा में पत्तों की तरह खस-स-स शब्द करने लगे। हीरे के ईयर-रिंग अँधेरे में जुगनू की तरह चमक उठे। उस दिन घर पर दावत था, इसलिये वह खूब सजी हुई थी।

आज़िज़ी दिखाते हुये उसने खूब मुँह फाड़ कर जम्हाई ली; उठ कर बत्ती का बटन दबा कर रोशनी कर दी और वैसा का वैसा ही खड़ा रहा। अपनी बीवी की ओर वह बड़ी परेशानी और क्षुब्ध दृष्टि से देख

रहा था, मानो जी ऊब गया हो; ज़बर्दस्ती की लाई हुई मुस्कराहट उसके ओठों पर रूठ रही थी; उसके नथुने फूल गये थे—इसका मतलब था कि वह कोई दिल को जलाने वाली बात कहने वाला है।

"न जाने तुम इस उमर में ऐसे बाल क्यों सँवारती हो?"

उस बेचारी के ओठ काँपने लगे और आँखें, उसके थके हुये, पीले किन्तु अब भी सुन्दर मुख पर लाल हो कर अश्रुओं की बूँदें ढुलका लाईं; वह बच्चों की तरह आँसू बहाती हुई सफ़ाई देने लगी।

"कभी-कभी घुँघराले करवा कर न रक्खूँ तो मेरे बाल ठहरते ही नहीं हैं। जब मिलने-जुलने वाले चार आदमी आते हैं, तो कम से कम बाल तो ठीक होने चाहिये।"

"जी हाँ, जी हाँ, ज़रूर!" व्यंग्यात्मक गम्भीर स्वर बना कर उसने कहा—"ज़रूर, साहिबा; आज तो आप का ख़ास दिन है—बड़ी पार्टी का। आज तो..."

"अच्छा, सुनो तो," पास आकर, पति को क्षमा करती हुई मुस्करा कर वह फिर बोली—वह विजयी सी लगने लगी थी। बड़े उल्लास से बोली—"मालूम है आज कौन मिलने आया था? सिंयोरा (श्रीमती) सालवेत्ती, गुइदो सालवेत्ती की माँ; वही गुइदो जो बैरिस्टिर है। तुम्हें ख्याल आया?"

"मुझे कुछ भी याद-वाद नहीं," उसने कड़े स्वर में बीच ही में टोक दिया। वह चेष्टा कर रहा था कि मानो इन बातों में उसे कुछ मज़ा नहीं आ रहा है।

"वाह, तुम्हें याद तो ज़रूर होगा। अरे वही बैरिस्टर, बड़ा सुन्दर-सा युवक है, बड़े शील स्वभाव का।"

"मुझे कुछ याद नहीं है। मैं ऐसे सुन्दर बढ़िया लोगों की याद कैसे रक्खूँ?"

उसे इस नवयुवक की याद तो थी, पर उस समय तो वह किसी भी तरह क़बूल नहीं कर सकता था कि उसे याद है। •

"ख़ैर, जाने दो," मीठे स्वर में पत्नी ने कहा; "कभी फिर उसे देखोगे तो ख़याल आ जायगा। असली बात तो इस वक़्त यह है कि उसकी माँ ने ऐलेना के बारे में मुझ से बड़ी अच्छी तरह बातें की हैं और कहती थीं कि उनका बेटा उसे बहुत प्यार करता है। इन बातों से उन्हें बड़ा सुख मिलता है। कहती थीं कि ऐलेना को अपनी पुत्र-वधू बनाना चाहती हैं, बस सारी बात यही है। उन्होंने पूछा है कि उनके पति एक आध दिन में आकर सब बातें पक्की कर जायँ, तो कैसा हो। मैंने कह दिया है कि ज़रूर।"

"अच्छा, अच्छा, तो आपने कह दिया है कि ज़रूर आये?"

"पीयेत्रो डार्लिंग! इस से अच्छी जोड़ी बन नहीं सकती। और फिर ऐलेना सचमुच उसे प्यार करती है।"

"हाँ, ऐलेना सचमुच उसे प्यार करती है, क्यों?"

वह बहुत ही रूखे ढंग से बात कर रहा था। अपना मुँह ऐसे खोलता और बन्द करता था, मानो अपनी बातों के भयानक व्यंग्य से सारी कड़वाहट निकाल कर, ख़ुद चख कर मुँह चला रहा हो। फिर वह ग़ुस्से में भर कर अटक-अटक कर शब्द कहने लगा—"और ऐलेना को उसे प्यार करने का मौक़ा कैसे मिला? पहले-पहल कैसे मिले आपस में? कहाँ मिले? क्या मैं पूछ सकता हूँ आप से? और तब तुम कहाँ थीं? बड़ी अच्छी माँ हो तुम कि ऐसा हो जाने दिया! तुम ने अपनी बेटी को एक ऐसे आदमी के प्रेम में फँस जाने दिया जिसको मैं जानता तक नहीं! वे तो एक दूसरे को ख़त भी लिखते ही होंगे! तुम तो हमेशा बादलों में ढँकी बैठी रहती हो, कुछ देखने की फ़ुरसत कहाँ से पाओगी। शायद तुम्हीं उनके ख़तोकिताबत में मदद देने वाली होगी? क्यों?"

पत्नी ने अपने हाथों से मुख ढाँप लिया और वहीं सोफ़े पर बैठी चुपचाप रोती रही, फिर सिर हिलाती हुई बोली :—

"मैं तो सोचती थी कि सुन कर तुम ख़ुश होगे। समझती थी, तुम भी मेरी तरह के विचार वाले हो, पीयेत्रो! आजकल तुम्हें क्या हो गया है? क्यों तुम ऐसे हो रहे हो? हम लोगों ने क्या क़सूर कर डाला है? भला, इसमें बुरी बात ही क्या है कि दो युवक-युवती एक दूसरे को अच्छे लगें और प्रेम करने लगें! अरे हम लोगों ने भी तो बिलकुल यही किया था। पीयेत्रो! तुम बड़े अन्यायी हो, सचमुच।"

अन्यायी वह वास्तव में था। इस समय वह अपना पत्थर से भारी प्रतीत होता हुआ सिर, छाती पर झुकाये बैठा था। उसके बदन में वेदनापूर्ण, व्यथित आग-सी लगी हुई थी; हाथ-पैर जले से जा रहे थे; जोड़ ऐसे क़मज़ोर से मालूम पड़ते थे, मानो दिन भर उसने भारी-भारी बोझे ढोये हों। ऐसी शारीरिक कमजोरी सदैव ग़ुस्से के उबाल के बाद उसको ढँक लेती थी। और फिर बाद मे उसे अपने ऊपर रुँआसी आती थी; पश्चात्ताप होता था; कुढ़न होती थी तथा उतनी ही पीड़ा होती थी, जितनी कि उसकी स्नायु-दुर्बलता का रोग उसे देता था। उसका थका हुआ दिमाग़ स्नायु-दुर्बलता का प्रथम चिन्ह था। उसकी पत्नी ने ठीक तो कहा था: उसने भी अपने समय में क्लेलिया, अब अपनी पत्नी, से प्रेम किया था। वह उसे अपनी धर्म-पत्नी बनाना चाहता था और काँपते हुए हृदय से एक बार उससे पूछा भी था; उससे बड़े उत्साह से उसने विवाह किया था। अब तो यह कथा बड़ी पुरानी हो चुकी थी, बहुत दिन की बात थी, पच्चीस वर्ष हुए उसकी प्रेम कहानी को। पर चाहे नई हो या पुरानी, कहानी थी तो सच। क्लेलिया भी अधेड़ हो चली थी। उसकी कमर भी उतनी पतली नहीं रही थी; बाल खिचड़ी हो रहे थे; गालों पर झुर्रियाँ दीखने लगी थीं; आँखें थकान से झुकी रहती

थीं। वह खुद पचास पर पहुँच गया था और सत्तर का दीखता था; पर युवक युवती तो अब भी जीवित थे, जिनकी प्रेम करने की बारी अब आई थी, जिनके सामने प्रेम से बढ़ कर दुनिया में कुछ भी नहीं था। वास्तव में वह अन्यायी था।

उसने हाथ के इशारे से कुछ भाव दर्शाने की चेष्टा की और टूटी-फूटी आवाज़ में लड़खड़ा कर बोला—"क्लेलिया, मुझे माफ़ करो। फिर कभी इसके बारे में बात करेंगे...अभी तो मैं अपने दिमाग़ की कमज़ोरी से आज़िज़ हूँ।"

श्रीमती क्लेलिया ने आँसू पोंछे और चुपचाप कमरे से बाहर जा कर बेटी को पति की बातचीत की खबर सुनाने गईं। बेटी को बताया कि पिता कुछ बिगड़े, नाराज़ हुए; पर शायद आखिरकार ठीक रास्ते पर आ जायँगे। बस, ऐलेना को स्वयं कुछ कहने की ज़रूरत नहीं है। उसने इतना बताया था कि सब से बड़ा लड़का फ्रांचेस्को प्यानो बजाना छोड़ कर उठ खड़ा हुआ; लूचाना अपना खेल बन्द कर बैठ गई और बेप्पीनो अपना सबक़ धीरे-धीरे याद करने लगा। यहाँ तक कि नौकरानी भी जो खाने के लिए, मेज़ सजा रही थी, अपना काम हलके-हलके, पंजों के बल चल कर करने लगी कि मालिक को बुरा न लगे। पर खाने के समय बच्चों की स्वाभाविक उछल-कूद की रोक-थाम करना असम्भव था। ऐलेना से कुछ खाया नहीं जा रहा था। अपनी उद्विग्नता छिपाने की चेष्टा में वह सर्वथा असफल हो रही थी और उसका सौंदर्य (वह सुन्दरता में अपनी माँ से कम न थी, वरन् कुछ अधिक ही और इस बात को जानती भी अच्छी तरह थी) इस समय एक भीतरी प्रकाश से दमक रहा था। एक बार उसके हाथ से काँटा भी गिर गया जिसको झुक कर उठाते समय, बेप्पीनो को इतने ज़ोर से हँसी छूटी कि सभी हँसने लगे। पहले लूचाना हँसी, फिर फ्रांचेस्को भी फूट पड़ा और सियोरा क्लेलिया भी बच्चों की भाँति

खुश हो कर मुस्कराने लगी। पीयेत्रो को यह हँसी-ख़ुशी अच्छी नहीं लग रही थी; अपने परिवार की स्वाभाविक प्रसन्नता उसे झुँझलाहट और ग़ुस्से से भरे दे रही थी। पत्नी की तरफ़ मुड़ कर उसने क्रोध से लबालब, किन्तु शान्त स्वर में कहा—"मैं कल फ़ालकोनैत्तो जा रहा हूँ। मेरा सूटकेस देख लेना!"

"अरे!..."

वह उसकी ओर ताकने लगी, मानो स्वप्न देख रही हो और फिर ऐलेना को देखने लगी। ऐलेना सफ़ेद फ़क् हो रही थी, किन्तु आँखों में भाव था कि अपमान हुआ है। जब पीयेत्रो ने चारों ओर अपनी घोषणा का असर देखने को गरदन फेरी, तो सारा का सारा परिवार सिर लटकाये बैठा था। केवल छोटा बेप्पीनो मारे ख़ुशी के उछला पड़ता था—स्कूली लड़के जैसे छुट्टी की एकाएक खबर आ जाने पर ख़ुशी से उछलते हैं।

पीयेत्रो ने अँगुली उठा कर उसे रोकते हुए कहा—"अच्छा तो, तुम्हें बड़ी ख़ुशी हो रही है कि पापा चले जा रहे हैं। क्यों?"

छोटा लड़का झेंप कर लाल पड़ गया, मानो कुछ शरारत करते-करते पकड़ा गया हो। रोना रोकने के प्रयत्न में उसका मुँह बन गया और ओठ कटते-कटते बचा—"जी नहीं, पापा, यह बात नहीं।"

पीयेत्रो को यह सब सुनने की फ़ुर्सत नहीं थी। वह मेज़ पर से उठ खड़ा हुआ था और क्लेलिया धीमे स्वर में उस से पूछ रही थी:—"जल्दी लौट आओगे न? उसके बारे में ज़रूर सोचना है।"

"किसके बारे में?"

"अरे, ऐलेना के विवाह के बारे में! तुम्हारे अचानक चले जाने का मतलब तो यह होगा कि तुमने नाहीं कर दी—साफ़ मना हो जायगा, अपमान करना हो जायगा। इस समय तो तुम्हारी ही बेटी

के सुख-दुख की बात है; क्या फ़ालकोनैत्तो का काम इतना ज़रूरी है कि कन्या का काम कुछ महत्त्व नहीं रखता ?"

पत्नी की इस दलील ने उसे और भी हठ पकड़ा दी।

"जी हाँ, जब आप स्त्रियों के सामने प्रेम, विवाह आदि का सवाल आ जाता है, तो फिर उसके सामने सारी बातें तुच्छ हैं; चाहे सरकारी काम हो चाहे कारबारी..."

और सचमुच उसे फालकोनैत्तो में न सरकारी काम था न कारबारी, और न फ़ालकोनैत्तो ही वह ख़ास तौर से जाना चाहता था। वह चाहता था कि उसकी हरकतों से इन लोगों को दुख हो, इसीलिये वह सब कुछ दलदल में छोड़ कर चलने को उतारू हो गया।

"पीयेत्रो, मत जाओ।"

उसने जवाब तक नहीं दिया। दरवाज़े पर पहुँच कर उसने मुड़ कर देखा; सब के सब चुपचाप सिर झुकाये बैठे थे। यह दुखद दृश्य देख कर उसकी आत्मा चीत्कार कर उठी—'देख तूने अपने प्यारे परिवार को, अपने प्रिय जनों को भय से त्रस्त दास बना रक्खा है !'

अगले दिन सुबह वह फ़ालकोनैत्तो चला गया।

फ़ालकोनैत्तो का मकान केवल उसका ही देहात का मकान न था, वरन् उसके पूर्वजों का भी वहीं था। उसके माता-पिता तथा दादा-दादियों ने अपने जीवन का अधिकांश भाग वहीं बिताया था। वहाँ देहात में, बस्ती से दूर, अकेला, बीहड़ से लगा मकान इस समय तक जाड़े के बर्फ़ से ढँका, टूटी हालत में, बिलकुल मक़बरे के समान दीखता था। जो किसान की स्त्री वहाँ नौकरानी का काम करती थी, वह पीयेत्रो के आने पर ज़रा सहम गई, क्योंकि पीयेत्रो के मुख का भाव कुछ कठोर था। चुपचाप उसने खाने के कमरे में आग जलाई और मालिक के सोने के कमरे में भी अँगीठी सुलगा दी और परिवार के बारे में बिना कुछ बात किये वह चुपचाप अलग हो रही। पीयेत्रो हाल की सुलगाई

हुई आग की ओर देखता रहा, फिर पुराने लकड़ी के सामान की ओर ताका, जिसे वह बचपन से पहिचानता था और प्यार करता था। सामने खिड़की के शीशे के अन्दर से इसके बालकपन का साथी बाग़ बर्फ़ की तह के कारण श्वेत हो रहा था। आग के सामने धम्म से बैठ कर उसने अपने आप से कहना शुरू किया :—

"कहो, अब तो ख़ुश हुये ? इस वक़्त क्लेलिया रो रही होगी, ऐलेना सिसकती होगी और सारे बच्चे किलकारी भरते होंगे, क्योंकि तुम चले आये हो। वे कहते होंगे, 'अहा, उसके चले जाने से कितना आराम है; कितना अच्छा लगता है उसके बिना!' उसके बिना, यानी मेरे बिना। बस, यही बात है। कोई भी मुझे अब नहीं चाहता; सब मुझसे डरे हुये रहते हैं और कोई आश्चर्य नहीं कि कुछ दिन बाद मुझ से घृणा करने लगें। पता नहीं, यह घृणा करना कब शुरू हो जाय।"

वह अकेला था, और कुछ निरुत्साहित भी था; पर उसको शान्ति मिल रही थी। उसका मस्तिष्क शान्त था, झुँझलाहट कम थी; स्नायु-दुर्बलता का असर कम था। इस समय वह स्थिर चित्त से बीते हुये पर ग़ौर कर सकता था; अपने दोषों को समझ सकता था; उनकी भीषणता और विषमय प्रभाव को नाप सकता था और समझ सकता था कि उसके द्वारा उन दोषों ने कितनी हानि की है। अब वह समय आ गया था, जिसके आने का डर उसे बहुत दिनों से था। वह समय जिसे दूर रखने की वह भरसक चेष्टा करता आया था। यह वह समय था जब कि उसे अपना सारा जीवन नक़शे की तरह खोल कर दीवार पर टाँग देना था और जीवन के मानचित्र को देख कर अपने किये हुये कृत्यों पर अपनी आत्मा द्वारा दिये हुये अकाट्य, उचित निर्णय को सुनना ही था। वह अब स्वयं ही अपना न्यायशील जज था—सहानुभूति और दया से कोसों दूर, केवल न्याय के पक्ष में बोलने वाला। उसका बीता हुआ सारा जीवन उसकी आँखों के सामने फिर

रहा था। पैंतालीस वर्ष की आयु तक तो वह दयालु, शान्त तथा उदार रहा था, यद्यपि कुछ-कुछ दुखी प्रकृति का अवश्य था। वह बड़ा अच्छा पति था, पूजनीय पिता भी था और कार-बार के सभी मामलों में होशियार था। तब धीरे-धीरे उसके जीवन से सुखी रहने का मज़ा निकलना शुरू हो गया। उसकी सरल उदार प्रकृति का, उसकी भलाई का झरना सूख चला या फिर किसी कठोर, कर्कश, बज़नी चीज़ से आत्मा के अन्दर ही दब कर बन्द हो गया। एक क्षुब्ध झुँझलाहट-सी सदैव उसके ऊपर वास करने लगी, जिसका अन्त यह हुआ कि वह सब का बुरा बनने लगा। उसने अब साफ़ देखा कि उसकी झुँझलाहट का असर हर चीज़ पर पड़ा था। ज़रा-सी भी ठेस लगने से वह झल्ला उठता था। उसके स्नायुयों में तनिक भी सहन-शक्ति नहीं रही थी। उसे हर चीज़ बुरी लगती थी। हर वस्तु उसे परेशान करती नज़र आती थी, ख़ास तौर से अगर उसके परिवार का हाथ उसमें हो तो। अपनी पत्नी का शील, उसके बोलने का मृदु ढंग, आज्ञाकारिणी नज़र, उसका धैर्य, जब वह उसे बीमार की भाँति देख-भाल कर रखती थी, उसका स्नेह से भीगा हुआ स्वर, हंस के समान गुदगुदी गोरी गरदन जिस पर पहले वह लट्टू था, अब उसे सब बिलकुल नापसन्द था। ज़रा-ज़रा-सी बात पर वह अब बिगड़ जाता था। बच्चों ने कुछ भी शैतानी की, चाहे ज़रा-सी ही बात क्यों न हो, सब उसे बड़े कुकर्मी, अक्षम्य अपराधी नज़र आते थे और उसी बात को लेकर वह उन्हें फिर घण्टों डाँटता था। उनकी प्रसन्नता देख कर उसे झुँझलाहट चढ़ती थी; उनका स्वाभाविक हँसमुखपन और मस्ती उसे चिढ़ा देते थे और उसका अंग-अंग विचित्र शीतल दुख से भर जाता था, और तब फिर उसमें सहानुभूति और समझने की जगह नहीं रहती थी। उनका हँसी-ठट्ठा और सुख देख कर उसे ईर्ष्या होती थी। उनकी उमंग देख कर उसे बुरा लगता था और वह सिहर उठता था। उसकी

पत्नी कहने लगी थी, "पीयेत्रो की बीमारी...।" बच्चे कहा करते थे, "पापा की झुँझलाहट।" वे लोग उसकी स्नायु-दुर्बलता की ऐसी बातें करते थे, मानो वह बीमारी नहीं—कोई अशुभ, काली, जीवित वस्तु थी, जिसका काम था कि हमेशा ताक लगाये बैठी रहा करे कि कहीं किसी रास्ते से परिवार में सुख का कण भी न घुस आये।

अपनी स्नायु-दुर्बलता के आज्ञा-पालन के कारण वह हमेशा बच्चों की खास माँगों को इन्कार कर देता था; हमेशा उनकी बात काटता रहता था; उनको टोकता था। एक भीतरी शक्ति उसे प्रेरणा करती थी कि उन बेचारों को किसी प्रकार दुख पहुँचाया जाय; उन्हें तकलीफ़ दी जाय। अत्याचार करने वाली इस दुर्बलता के कारण, वह उस दिन घर छोड़ कर चला आया था; ऐलेना के सुख-स्वप्न को तोड़-फोड़ आया था; पत्नी की प्रसन्नता नष्ट-भ्रष्ट कर आया था और अपने भावी दामाद से मिलने से इन्कार कर दिया था।

सारी बातें उसके दिमाग़ में घूम रही थीं। वह अपने सारे दोषों को अपने सामने मेज़ पर हाथ पटक कर डाक्टर की भाँति घाव की बू से बिना घबराये, बिना हिचकिचाये, जाँच कर रहा था। पूर्वजों के मकान के अँधेरे कमरों से उसकी युवावस्था के दिन, भूत बन कर उसके सामने आ रहे थे। उसे अपना बचपन याद आ रहा था। वह देख रहा था कि सामने सारा परिवार है; वह अपने भाई-बहिनों के साथ है। उसकी माँ भी थी—उदास, आँसुओं से धोया हुआ मुख लिये। माँ का मुख वह आशा धारण किये था, जिसकी किरण केवल मृत्यु ही में मिल सकती है। उसके भाई-बहिन आदि भी कहा करते थे, "पापा की बीमारी..." और उसके पिता की स्नायु-दुर्बलता के बारे में ऐसी ही बातें करते थे, मानो वह बीमारी नहीं, वरन् कोई अशुभ, काली, जीवित वस्तु थी, जो सारे मकान में फैल कर अपना राज्य स्थापित कर चुकी थी। पिता के चिड़चिड़ेपन, झुँझलाहट, रुखाई, जिसका कारण उनकी

स्नायु-दुर्बलता की बीमारी थी, से ऊब कर केवल प्राण बचाने के निमित्त सब से बड़ी बेटी ने बेमेल विवाह कर लिया था, केवल घर से बच कर पिंड छुड़ाने के लिये। छोटी लड़की घर से निकल कर कोठें पर बैठ गई थी। सबसे बड़ा लड़का फटी हालत, ख़ाली जेब, विदेश भाग निकला था और सबसे छोटा पीयेत्रो, पिता के अत्याचार के बोझ से कुचला जा रहा था। इस समय पीयेत्रो को एक-एक करके अपनी माँ के आँसू, रोज़मर्रा की डाँट-फटकार, आँसू, अत्याचार जिससे बचने के लिये बेचारी के पास झूठ और फ़रेब के बाद कोई हथियार न था, याद आ रहे थे। उसे याद आ रहा था,...अपने प्रियजनों के प्रति घृणा... स्वार्थान्धता,...तकलीफ़ देने की भीषण इच्छा...प्रसन्नता देख कर सिहर उठना, शीतमयी दुख भावना...घृणित दया भावना...दूसरों को बिलकुल न समझना।

शायद उसके पिता भी अपनी युवावस्था में उसी की तरह उदार, स्नेहशील रहे होंगे। शायद वह भी अपने परिवार को चाहते होंगे, उसी की तरह और चुपचाप अपनी आत्मा की फटकार सुनते होंगे, उसी की तरह। शायद वह भी स्वयं अपने ही जल्लाद रहे होंगे तथा स्वयं ही शहीद भी होंगे...और पीयेत्रो ? उसने तो इतनी मानसिक वेदना पाई है कि शायद वह पागल हो जाय। यही पीयेत्रो बचपन में पिता के सामने सोचा करता था कि—"अगर मैंने अपने बच्चों को ऐसा कष्ट दिया—अगर बच्चे भगवान् ने दिये तो अपने ही हाथों फाँसी लगा लूँगा।" सचमुच वह यही कहा करता था। अब वह सोचने लगा, क्या उसके बेटे भी इसी तरह सोचते हैं ? यह विचार बार-बार उसके मस्तिष्क में आघात करने लगा। बहुत मिटाने की चेष्टा की, पर सब व्यर्थ गई। यह विचार दूर करना होगा। वह कुरसी से उछल कर हवा में कूदा और दौड़ कर मकान के बाहर हो रहा।

सुनसान पगडंडियों पर वह पर्वत-माला की तरफ एक भयानक खड्ड

के क़िनारे लपका चला जा रहा था। वह इसी भाँति सारे दिन चलता रहा। घर लौट कर अपने लिये रक्खे हुए खाने को उसने छुआ तक नहीं। रात को नींद लाने वाली दवा की दुगुनी ख़ुराक पीकर वह लेट रहा, जिसके कारण मृत्युसम अंधकारमयी निद्रा ने उसे ढाँप लिया। इसी प्रकार दो, तीन, चार दिन निकल गये, तब एक दिन (दोपहर को उसकी आँख खुली थी) वह नीचे उतरा और बैठक में अपनी पत्नी को बैठा पाया। वह एक दो घंटे पहले आई थी, पर उसे जगाने का साहस न कर सकी थी। वह परेशानी और चिंता के कारण पीली सी हो रही थी और भय भरी आँखों से उसकी ओर ताक रही थी। वह धीमे स्वर में कहने लगी—"मैं आकर विघ्न डालना नहीं चाहती थी पर...हाय, तुम बीमार हो, तुम अब सचमुच बीमार हो..."

उसका चेहरा नींद में चलने वालों की तरह पीला था; आँखें गड्ढों में चमक रही थीं। इतने ही दिनों में वह बहुत बूढ़ा हो गया था। उसके बाल सफ़ेद पड़ गये थे...अपनी आँखों को रूमाल से ढँक कर वह सिसकने लगी।

"रोओ मत," वह प्यार भरे शब्दों में बोला—"तुम रोने क्यों लगीं? घर पर तो सब ठीक है?"

उसने सिर हिला कर कहा 'हाँ' और मुख से रूमाल हटा लिया।

"तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है...तुम्हें घर चलना चाहिये।"

पत्नी के दुखी किन्तु प्रिय चेहरे को वह प्रेम भरी दृष्टि से देखता रहा—वह चेहरा जिस पर आयु के चिन्ह अभी तक अधिकार नहीं जमा पाये थे, यद्यपि उसका सारा जीवन युद्ध करते बीता था। वह अपनी पत्नी की बड़ी-बड़ी स्वच्छ आँखों को ताक रहा था जिन्हें न जाने कितनी बार वह आँसुओं से भर चुका था। वह उसकी हंस-सी गर्दन देख रहा था जो अब आज्ञा—पालन और शील के कारण झुकी हुई थी।

वह बोला—"मैं जानता हूँ कि ऐलेना के सुख के लिये मेरा लौटना आवश्यक है; मुझे ज़रूर चलना चाहिये। पर अभी नहीं चल सकता...मुझे बहुत काम है...और यहाँ मेरी तबियत भी ठीक हो रही है। अगर तुम चाहो तो एक खत लिख कर दे दूँ, ज़बानी 'हाँ' कहने के ही बराबर होगा।"

वह धैर्य से मेज़ पर बैठ गया और सावधानी से कुछ वाक्य लिखे। तब उसने पत्नी को खत पढ़ कर सुनाया :—

'मेरी प्यारी बच्ची ऐलेना,

मैं पूरे हृदय से, बड़ी खुशी से इज़ाज़त देता हूँ कि तुम गुईदो सालवेत्ती से विवाह कर सुखी बनो। मेरा आशीर्वाद और प्यार तुम्हारे साथ रहेगा। —तुम्हारा पिता।'

"क्यों ठीक है न ?"

वह ऐसे बोल रहा था, मानो स्वयं वसीयतनामा पढ़ कर सुनाया हो।

"मेरे ख्याल में ठीक ही है। अब तो ऐलेना काफ़ी बड़ी हो गई है।"

पत्नी आश्चर्य से उसकी ओर मुँह बाये देख रही थी।

"पीयेत्रो...तुम समझे नहीं...तुम्हें भी तो अनेक काम करने हैं... शादी की सारी बातें...दहेज़...सब को बुलाना...तुम्हें तो चलना ही होगा...यह सब कौन करेगा ?"

रेलवे टाइम-टेबिल उठा कर पीयेत्रो ने कहा—"तुम्हारे लिये सब से अच्छी गाड़ी तीन बजे वाली है, उसी से लौट जाओ।"

तब वह खड़ी होकर याचनापूर्ण स्वर में पूछने लगी—"और तुम ?"

"मैं तुम्हें स्टेशन तक पहुँचा आऊँगा।"

हार मान कर पत्नी ने शाल ओढ़ लिया और चलने को तैयार हुई। पहले ही की भाँति प्रेममय स्वर में बोला—"प्रिये, तुमने कुछ खाया भी तो नहीं है।"

"रहने दो, भूख नहीं थी। लेकिन तुम भी तो चलो...।"

"नहीं रानी, मैं नहीं चलूँगा।"

लम्बे मार्ग से वे लोग स्टेशन पहुँचे। बड़ी कड़ाके की शीत पड़ रही थी और पैर के नीचे बर्फ़ टूट कर चरमर बोलता था। यदा-कदा, वह पत्नी की कमर में हाथ डाल कर उसे फिसलने से रोके रहता था। इस स्नेह को पाकर वह बेचारी पिघली जा रही थी। पति के शरीर से चिपटी वह फिर याचना करने लगी—"पीयेत्रो, चलो मेरे साथ; अभी अलग हो कर हमें और दुख न दो; चलो न वापस?"

वह चुपचाप पत्नी की कमर में हाथ लपेटे चला जा रहा था।

"इसलिये तो मैं वापस नहीं जा रहा हूँ कि तुम लोगों को और दुख न दे सकूँ। तुम लोगों को मुझे छोड़ना पड़ेगा; मैं अकेला पड़ा रहूँगा; क्यों अपना दुख दूसरों पर लादूँ?"

"किन्तु अकेले कहाँ?" उसने पूछा।

"कहीं भी अकेले—यहीं या किसी मठ में या तीर्थ-स्थान में, रेगिस्तान में, पता नहीं कहाँ, पर रहूँगा अकेला। तुम समझो तो; तुम्हें ही सुख देने के लिये तुम्हें छोड़ना है। मैं चाहता हूँ कि घर में शान्ति रहे, तुम लोग सुखी रहो।"

"पर तुम्हारे बिना हम लोग कैसे खुश रहेंगे?"

वह रोते-रोते समझाने की कोशिशें करने लगी। क्या सब मिल कर शान्तिपूर्वक नहीं रह सकते? रुपया तो घर में काफ़ी है; बच्चे सुन्दर स्वस्थ हैं। किस बात की कमी है! तमाम लोग दुनिया में हैं, जिनके साथ कुछ न कुछ मुसीबत लगी ही रहती है—कभी बच्चे बीमार, कभी कुछ। कुछ जुआरी हैं, तो कुछ शराबी। किसी को रुपये का दुख है, किसी का घर मौत ने देख लिया है, किसी का दुर्घटनाओं के मारे नाक में दम है। फिर भी लोग चुपचाप सहन कर रहते हैं। हम तो इन से लाख अच्छे हैं।

"हर परिवार में कुछ न कुछ दुख अवश्य होता है," पीयेत्रो बोला, "हरेक को अपने हिस्से का दुख भोगना पड़ेता है। किसी का दुख ग़रीबी है, किसी का कोई लत। किसी के साथ अपमानजनक जीवन है। हर घर में एक न एक ऐसा ही शत्रु लगा रहता है। अपने परिवार का शत्रु मैं हूँ। मेरे पिता का विषमय प्रभाव मुझ में भी आ गया है। तुम्हें तो याद होगा, कई बार मैंने तुम से अपने पिता की स्नायु बीमारी और चिड़चिड़ेपन की चर्चा की थी। मेरा तो ख़्याल है—भगवान् क्षमा करें मुझे—मैं उनसे घृणा करता था। अभी मेरा इतना पतन, बीमारी के कारण नहीं हुआ है कि मैं यह सब न समझ सकूँ। मैं सब समझता हूँ कि मुझ में क्या परिवर्त्तन हो गया है और मैं नहीं चाहता कि मेरे बच्चे भी मुझ से घृणा करने लगें; मेरी दी हुई जिन्दगी से ऊब जायँ। इसीलिये मैं चाहता हूँ कि इन सब बातों का अन्त हो जाय। इसके लिये ज़रूरी है कि मैं तुम सब को छोड़ दूँ। परिवार को शत्रु से छुटकारा दिलाने का केवल यही एक रास्ता मेरे पास है। अभी इसी समय यह सब बातें तुम्हें बता रहा हूँ, यह याद रखना; आगे कभी ऐसी दिमाग़ी हालत में रहूँगा, इसमें शक है। मैं अपनी बीमारी को और उसके विषैले असर को ख़ूब समझ गया हूँ। इसके लक्षण मैंने बचपन में अपने पिता में देखे थे। अब मैं जानता हूँ कि मैं अधिक से अधिक चिड़-चिड़ा और बुरा बनता जाऊँगा। नहीं, मैं नहीं लौटूँगा, नहीं लौटूँगा!"

वे लोग उस छोटे-से सुनसान रेलवे स्टेशन पर पहुँच गये। पीयेत्रो ने बातें बन्द कर दीं। उसकी पत्नी उसकी बातचीत का पूरा अर्थ नहीं समझ पाई थी। अपने पति के शब्द उसे भय दिखा रहे थे; पीयेत्रो की बकवाद उसे कुछ-कुछ पागल के प्रलाप-सी लग रही थी। उसने मन ही मन तय किया कि घर पहुँचते ही फ्रांचेस्को को भेज दूँगी कि साथ ले आये, या फिर गुईदो को भेजूँगी। वह तो बैरिस्टिर है। वह समझा सकेगा।

बिदा की घड़ी के दुख में वह और दुख भूल गई; पति व
आलिङ्गन कर वह फूट-फूट कर रोती-सिसकती रही; उसका सिर पा
के कंधे को भिंगोये दे रहा था। यह सच जरूर था कि पति ने उस
जीवन को यन्त्रणायें दे कर कटु बना रक्खा था; पर भला दुतका
हुये कुत्ते की तरह वह कैसे पति को घर से निकल जाने देती
अपनी युवावस्था के प्रेममय दिन उसे भूले न थे—अपनी प्रेम कहा
उसकी पहली और अन्तिम प्रेम कथा—फिर उनका विवाह और सु
से भरी प्रथम वर्षमाला। उन दिनों कितना प्यारा साथी था पीयेत्रो
कितने कोमल स्वाभाव का प्रेमी, सुन्दर! कितना सुख था! तब व
उसकी पूजा करता था। अपने बीते हुये सुख की राशि उसी की दे
थी। उस सुख का अन्त हो चुका था, पर स्मृति अब भी हृदय में मीठ
टीसें मारती थी।

"निराश मत होओ पीयेत्रो! कौन कह सकता है कि दुबारा चेष्ट
करने पर हम लोग सुखी नहीं हो सकेंगे। मैं फ्रांचेस्को को तुम्हारी देख
भाल के लिये यहाँ भेज दूँगी। तुम तो जानते ही हो, कितना सीधा
वह। बच्चे भी तुम्हें चाहते ही हैं—आखिर तुम्हीं तो उनके पिता हो
चाहे कितना ही डाँटो-डपटो। वे यह तो कभी नहीं चाह सकते कि तु
यहाँ अकेले पड़े रहो, है न!"

वह गाड़ी में बैठ गई और खिड़की के अन्दर से हाथ हिला क
जताने लगी कि फ्रांचेस्को को भेज देगी। पर बिदा की नमस्ते करते
करते उसके चेहरे का रंग उड़ गया; उसे लग रहा था कि पति
दर्शन फिर नहीं कर सकेगी।

स्टेशन से वह धीरे-धीरे लौट आया और घूमता हुआ मीलों निकल
गया, यहाँ तक कि रात हो गई। वह जानता था कि फ्रांचेस्को जरू
आयगा और हर तरह से, पैरों पड़ कर, मना कर वापस ले जाने क
चेष्टा करेगा। वह यह तो अच्छी तरह समझता था कि वे लोग उ

अकेला नहीं छोड़ सकते थे। उनका पिता था वह, पति भी था। परिवार का, मित्र जनों का, बन्धुओं का कर्त्तव्य था कि उसे वापस बुला लावें। यही दुनिया की रीति थी। अगर वह वापस लौटा, तो परिवार का शत्रु भी लौट आयगा। फिर सारे परिवार का और उसका कष्ट-काल, कलह-काल, दुख-काल आ पहुँचेगा। अपने बच्चों को भी वह वही दुख देने लगेगा, जो बचपन में उसे मिले थे—शायद अधिक ही दे। एक पेड़ का सहारा लेकर वह आकाश की ओर अपना व्यथित मुख लिये ताकने लगा। उसे भगवान् ने जीवन में शान्ति क्यों नहीं दी? अगर भविष्य की अशान्ति से अपने को और दूसरों को बचाना है, तो केवल एक रास्ता है। जिस पगडंडी पर वह जा रहा है, वह अँधेरी, उदास, सुनसान है और विशाल दैत्य के समान मुँह बाये खड्ड के छोर पर रुक जाती है। छुटकारे का प्रयत्न तो बड़ा सरल है—केवल एक या दो पग अधिक लेने हैं शून्य में, और सब समाप्त हो जायगा।

फ्रांचेस्को पिता को लिवा आने के लिये घर से चलने ही वाला था तब तार आया कि लाश दुर्घटना के दो दिन बाद पाई गई।

इटली

जीत

लेखिका—मेटिल्डा सेराओ

सोफ़िया ने आँख ऊपर नहीं उठाई। उसकी कोमल अँगुलियाँ लेस के काम में लगी ही रहीं। पर लूलू सारे कमरे का चक्कर काटती रही। कभी वह ताख में रक्खे खिलौनों को उलटती-पलटती, कभी अन्य-मनस्क हो दरवाज़े खोल कर अन्दर देखती। यह साफ़ दीखता था कि या तो वह कुछ करना चाहती थी या कहना, पर अपनी बहिन की गम्भीर मुद्रा के कारण असफल हो रही थी। वह एक गाने की कुछ लाइनें गुनगुनाने लगी, एक कविता भी पढ़ी; पर सोफ़िया ने जैसे कुछ सुना ही न हो। लूलू के सब्र का भण्डार अपरिमित न था। उसने निश्चय कर लिया कि अब बिना सीधे-सीधे सवाल के बहिन को बात में लगाना असम्भव है। वह उसके सामने जाकर जम गई और पूछा—"सोफ़िया, तुम्हें मालूम है, कुमारी जानेत्त ने मुझे क्या बताया है?"

"कोई दिलचस्प बात तो क्या बताई होगी!"

"ओफहो! तुम्हारे इस ठण्डे और रूखे जवाब को सुन कर तो गर्मी में भी जुकाम हो जाय! बर्फ़ीली बीबी, तुम अपनी बात में सर्दी डालने के लिये इतना बर्फ़ कहाँ से लाती हो?"

"लूलू, तू तो आफ़त है; बच्ची ज़रा सी!"

"यह देखो, यहीं तो तुम ग़लती करती हो। मेरे दिल की रानी जीजी, मैं अब बच्चा नहीं रही, क्योंकि मेरी शादी होने जा रही है!"

"क्या ?"

"यही तो जानेत्त ने मुझे बताया है।"

"क्या बक रही है ! मेरी समझ में तो एक शब्द नहीं आया, क्या कहे जा रही है ?"

"बहुत अच्छा जनाब, अब मैं सारा हाल, जैसे ड्रामा में कहते हैं, खुलासा बयान करूँगी। पूरी लम्बी कथा है। क्या गम्भीर महारानी महोदया ध्यान दे सकेंगी ?"

"हाँ, हाँ; पर कुछ कहो तो !"

"घुड़दौड़ का दिन है; जगह का नाम 'फ़ील्ड ऑफ़ मार्स' है। तुम तो वहाँ गई नहीं थीं, क्योंकि किताबें तुम्हें अधिक प्यारी हैं।"

"फिर वही ! अगर असली बात नहीं सुनाओगी, तो मैं कुछ भी नहीं सुनूँगी।"

"सुनना तो तुम्हें पड़ेगा, क्योंकि यह भारी रहस्यमयी बात मेरा दम घोंटे डाल रही है—मैं मरी जा रही हूँ !"

"शुरू कर रही हो कि नहीं ?"

"अच्छा—अच्छा, अब बता दूँगी। सुनो, घुड़दौड़ में हम लोग ग्राण्ड स्टैण्ड की पहली लाइन में बैठे थे। पाओलो लोवातो ने आकर एक सुन्दर युवक, रोबर्तो मोन्तेफ़्रांको से हम लोगों का परिचय कराया। नमस्कार और हर्ष-प्रदर्शन के बाद, वे लोग ठीक हम लोगों के पीछे बैठ गये। घोड़ों के रवाना होने तक हम लोग इधर-उधर की बातें करते रहे। तुम्हें याद है कि मैंने गॉरगन घोड़े पर अपना दाँव रक्खा था और यह ख्याल भी न था कि मुझे ऐसा धोखा खाना पड़ेगा—अब तो जानवरों की कृतघ्नता भी चखनी पड़ती है। धूल के ग़ुबार में सब घोड़े छिप गये थे। मैंने चिल्ला कर कहा, "गॉरगन जीता !"

"जी नहीं," मोन्तेफ़्रांको ने मुस्कराते हुये उत्तर दिया, "लॉर्ड लावेल्लो जीत रहा है।" अपनी बात कटने पर मुझे ग़ुस्सा आ गया;

पर वह मुस्कराता और मेरी बात काटता ही रहा। अन्त में हम लोगों ने आपस में शर्त बद ली। आखिरकार, आध घंटे की हृदय की धकधकाहट और चिन्ता के बाद, दौड़ खतम होने पर पता चला कि गॉरगन ने मुझे धोखा दिया है और मोन्तेफ़्रांको ने शर्त जीत ली है। ज़रा दृश्य तो सोचो! मैं कहने लगी कि अभी रुपया दे दूँगी, तो वह झुक कर मुस्कराता हुआ अदब के साथ बोला कि जल्दी क्या है, तमाम वक्त पड़ा है। फिर मैं उससे 'कियाया' पर मिली और प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा। वह फिर रहस्यमय भाव से मुस्कराया और झुक कर अभिवादन किया। थियेटर में यही हुआ। सब जगह यही होता है। मैं तो मारे उत्सुकता के मरी जा रही हूँ। रोबर्तो सुन्दर है, छब्बीस साल का युवा है और आज सुबह मोन्तेफ़्रांको के पिता ने अम्माँ से दो घंटे बातचीत भी की थी।"

"ओह!"

"अरे, मेरे श्रोता मेरी कथा पर ध्यान देने लगे? खैर, मुझे उनके आने की खबर जानेत्त ने दी थी। बस, अब शादी ठीक हो गई है; केवल एक बड़ी भारी, ज़रूरी बात रह गई है। मैं मेयर के दफ़्तर में कब जाऊँगी और भूरी गाऊन पहिनूँ कि बादामी? और टोप झिलमिल लगा हुआ पहिनूँ या बिना झिलमिल का?"

"वाह कैसी फ़र्र-फर्र बातें कहे जा रही है!"

"क्यों न कहूँ? अब तो हमारे रास्ते में कुछ रुकावट रही नहीं है। मैं और रोबर्तो एक दूसरे को बहुत ही ज़्यादा प्रेम करते हैं, हमारे अभिभावक भी राज़ी हैं।"

"तो इस तरह तुम शादी कर रही हो?"

"'इस तरह' का क्या मतलब? इसके तो बीसियों अर्थ लगा लो।"

"बिना उसे अच्छी तरह जाने, बिना उसे प्यार किये।"

"किन्तु मैं तो उसे अच्छी तरह जानती हूँ। मैंने उसे घुड़दौड़ में

देखा है, घूमते समय देखा है। मैं तो उसकी पूजा करती हूँ। परसों मैंने खाना खाने से इन्कार कर दिया, क्योंकि मैं उसे देख नहीं सकी थी, और तीन प्याले काफ़ी पी कर आत्म-हत्या का प्रयत्न भी किया था।"

"अच्छा! और वह क्या करता था?"

"वह मुझसे विवाह करना चाहता है, इसलिये बस मुझसे प्रेम करता है!"—उल्लसित हो लूलू ने उत्तर दिया। पर सोफ़िया का चेहरा पीला देख कर अपने उतावले, नासमझ वाक्य पर पश्चात्ताप करने लगी। बहिन के गले में बाँहें डाल कर स्नेह भरे स्वर में पूछा—"दीदी, क्या मैं कुछ ग़लत कह गई?"

"नहीं री, पगली; तू ठीक तो कहती है। जब कोई प्रेम करता है तो शादी तो करता ही है। प्रेम का जगाना ही कठिन है।" यह साँस भर कर बोली।

"प्रेम का जगाना, प्रेम का जगाना!" झुँझलाकर लूलू ने दोहराया; "सोफ़िया, यह तो बड़ा आसान है, लेकिन अगर किसी की तुम्हारी जैसी भृकुटी चढ़ी रहे, आँखें उदास हों, ओठों पर हँसी न हो, जो हमेशा कोने में बैठ कर सोचती रहे जब कि दूसरे लोग नाच कर, हँसी-मज़ाक कर आनन्द मना रहे हों, और जो हँसने की जगह किताबें चाटे, ज़िन्दा-दिल रहने के बजाय स्वप्न देखे, जो हमेशा मुँह पर निराला विराग का भाव दर्शाये जवान होने पर भी, तो उसके लिये तो प्रेम का जगाना मुश्किल ही है।"

सोफ़िया ने सिर झुका लिया और कुछ उत्तर न दिया। उसके ओठ काँप रहे थे, मानो उसने हिचकी आने से रोक ली हो।

"मैंने फिर तो तुम्हें नहीं दुखा दिया? मैं तो इसलिये कह रही थी कि मैं तुम्हें भी प्रेम से सराबोर, नवबधू के रूप में देखना चाहती हूँ—अगर हम दोनों के विवाह एक ही दिन हों तो कितना मज़ा आये।"

"वह तो बेवकूफ़ी होगी! मैं तो कुँवारी ही बुड्ढी हो जाऊँगी।"

"जी नहीं, मिस सहिबा, मैं तुम्हें बनने ही नहीं दूँगी, आप कितनी ही चंट क्यों न हों। अगर रोबर्तो सुन्दर अच्छा युवक है, तो उसके कोई कुँवारा भाई-वाई होगा ही; मैं तो चाहती हूँ कि हो।"

इसी समय उनकी माँ बाहर जाने के कपड़े पहिने हुये कमरे में आईं।

"घूमने जा रही हो क्या, क्यों अम्माँ?" लूलू ने पूछा।

"हाँ बेटी, ज़रा वकील साहब के घर जाऊँगी।"

"ओहो, वकील साहब के यहाँ! तब तो कुछ संगीन मसला होगा?"

"जल्दी ही तुम्हें ख़ुद मालूम पड़ जायगा, नटखट बिब्बो! सोफ़िया, तुम भी मेरे साथ चलो!"

"अच्छा, तो सोफ़िया को भी वकील की क़ानूनी राय लेनी है?"

"लूलू! तू चुप रहना कब सीखेगी; यह तेरा लड़कपन कब जायगा?"

"जल्दी ही चला जायगा अम्माँ! तुम देख लेना।"

वह माँ और बहिन के लिये दरवाज़ा खोल कर खड़ी हो गई और कृत्रिम गम्भीर मुद्रा बना कर दो बार झुक कर सलाम करती हुई बोली, "मेम साहब, मिस साहब, इधर से!" जब वे दोनों दूर चली गईं तो ठहाका मार कर हँसती हुई चिल्लाई, "माँ, हाँ, खूब बातें कर लो। मैं भी ऐसी बनूँगी, मानो कुछ जानती ही न होऊँ!"

मामूली तौर पर रोबर्तो मोन्तेफ़्रांको अधिक विचार करने वाला मनुष्य न था; उसके पास सोचने का समय ही न था। उसके दिन लंचों (दोपहर का भोजन), घुड़ सवारी, मुलाकातों और दावतों में बड़े मज़े से जल्दी-जल्दी बीतते थे। शाम का समय वह अपनी प्रेयसी लूलू के साथ व्यतीत करता था। फिर बाक़ी समय में भी कभी वकील के यहाँ किसी क़ानूनी मसले पर सलाह लेने जाना होता, कभी पुराने कर्जों को साफ़ करने का प्रबन्ध करना होता और मकान का प्रबन्ध

और विवाह के बाद की सहयात्रा ठीक-ठाक करनी थी। उसके पास घंटे आध—घंटे किताबें पढ़ने का भी समय नहीं मिलता था और पन्द्रह मिनट के लिये काफ़े के दरवाज़े के सामने रोज़ाना चहल-क़दमी भी बन्द हो गई थी। इसलिये उसे कभी किसी ने गहरे विचारों में निमग्न नहीं देखा, न कभी किसी सामाजिक समस्या को सुलझाने के लिये सिर पटकते देखा। रोबर्तो के चरित्र में दुखद अथवा सुखद नाटकों के नायक बनने की रुचि नहीं थी। वह बहुत ही शान्त स्वभाव का था और कुछ लोग तो उसकी इस सरल-शान्त प्रकृति के कारण उससे ईर्ष्या भी करने थे।

पर इस समय तीसरे पहर रोबर्तो आराम कुरसी पर फैला हुआ, टाँग पर टाँग रक्खे, पुस्तक हाथ में लिये पढ़ने के दृढ़ निश्चय से लेटा हुआ था। पुस्तक थी बड़ी मनोरंजक, फिर भी बड़ा आश्चर्य यह था कि पढ़ने वाले का दिमाग़ कहीं और घूम रहा था। सिर्फ़ यही नहीं, वह घबराया हुआ और बेचैन भी था। उसने एक पन्ना भी नहीं उलटा था, क्योंकि पहली दो-चार लाइनें पढ़ते-पढ़ते उसे ऐसा लगा कि अक्षर छपी हुई पंक्ति छोड़ कर नाचने लगे, उलट-पुलट मची और ग़ायब हो गये। अनजाने में ही रोबर्तो, विचारों के नये प्रदेशों में विचरने लगा था।

"पापा जी सन्तुष्ट हैं, चाची और बुआओं ने आशीर्वाद भेजे हैं; चचेरी बहिनें सब नाराज़ हैं; काफे में मेरे दोस्त व्यंगभाव से बधाई देते हैं; मेरे सच्चे मित्र हाथ दबा देते हैं; इसलिये मैं शादी करके ठीक ही कर रहा हूँ। यह तो मैं नहीं कह सकता कि लूलू सुन्दर नहीं है। जब वह अपनी शरारत भरी आँखें उठा कर मुझे देखती है, और हँसते समय अपनी मोती-सी दन्त पंक्ति दिखाती है, तो दिल चाहता है, सुन्दर सलोना उसका सिर हाथ के बीच पकड़, उस पर चुम्बनों की बौछार कर दूँ! और मिजाज़ में मृदु, चरित्र

में खरा सोना है; हमेशा हँस-मुख और प्रसन्न, मज़ाक के लिये हरदम तैयार, शरारत से भरी, जवाब देने में चतुर है और कभी भी उदास नहीं रहती है। मेरी उसकी पटेगी ख़ूब, क्योंकि मुझे तो बड़ा सा लटका मुख फूटी आँखों नहीं सुहाता, खास तौर से उसका जिसे मैं प्यार करता हूँ। मैं तो यही विश्वास करता आया हूँ कि उदास मुख वाले मनुष्यों के हृदय में अवश्य कोई भारी दुख छिपा रहता है, जिसे न तो मैं समझ सकता हूँ, न दूर कर सकता हूँ, और जिसका शायद कारण बिना जाने ही मैं ही हूँ। मेरी भावी बड़ी साली, सोफ़िया में न जाने क्या बात है कि सामने आते ही मैं उसका उदास और भावहीन मुख देखतें ही चिढ़-सा उठता हूँ। उसके सामने आते ही मेरा दिमाग़ काम करना छोड़ देता है, ओठ पर मुस्कराहट मर जाती है। और चाहे सबसे सुन्दर सुहावनी धूप खिल रही हो, मुझे बरसात की काली घटाओं का भास होने लगता है। मुझमें लूलू से मज़ाक करने का साहस तक नहीं रहता है; सोफ़िया का आगमन सारी ख़ुशी को मार कर भगा देता है। वह मुझसे बिना मेरी ओर देखे बात करती है; हाथ तक नहीं मिलाती; कम से कम शब्दों में उत्तर देती है। शायद उसने मेरी उपेक्षा को पहिचान लिया है; मेरे ऊपर अपने बारे में रही धारणा पड़ती तो ज़रूर देखी होगी। शायद इसी कारण वह बुरा मान गई है।

"लूलू हमेशा हँसती रहती है; है भी तो निरी बालिका। गम्भीर हो कर उसने मुझसे कभी बात नहीं की और अगर कभी कोई गम्भीर बात करने की चेष्टा करे, तो यही लगता है कि मज़ाक कर रही है। वह मुझसे प्रेम करती है, पर उन्मत्त हो कर नहीं। सच बात तो यह है कि मैं भी उसे पागलों की भाँति प्रेम नहीं करता हूँ, और यह अच्छा ही है। मेरे पास तो दो पक्की धारणायें हैं जिनका मैं पूर्ण रूप से विश्वास करता हूँ कि शादी करने वाले स्त्री-पुरुष को एक स्वभाव

का होना चाहिये, और दूसरी यह यह कि उनको अपना विवाहित जीवन उन्मत्त प्रेम से प्रारम्भ नहीं करना चाहिये। हमारी स्थिति बिलकुल ऐसी ही है और मेरा विश्वास है कि लूलू और मैं बहुत ही सुखी रहेंगे। विवाह के बाद इटली भर में हम दोनों घूमेंगे, जल्दी बिलकुल नहीं करेंगे—आराम से छोटी-छोटी यात्रायें होंगी, ख़ूब मज़े-मज़े में। आराम के साथ, जहाँ मन में आयगा ठहरेंगे, हर चीज़ देखेंगे। तीन महीने हम लोग ऐसे ही काटेंगे; उँहूँ, तीन काफ़ी नहीं होंगे, चार महीने घूमेंगे। कुछ समय के लिये लूलू को सोफ़िया की उदास संगत से दूर रख सकने में मुझे प्रसन्नता होगी। लेकिन मैं फिर पूछता हूँ, क्या इस प्रकार इस उम्र की युवती के लिये इतना गम्भीर रहना स्वाभाविक है? अधिक से अधिक तेईस वर्ष की होगी। वह साधारण सुन्दर नहीं, वास्तव में सुन्दर है। सुन्दर बड़े-बड़े नेत्र हैं। चलती है तो हंसिनी के समान। अगर केवल इतनी रूखी मुद्रा की न होती, तो किसी भी भाग्यशाली को ख़ुश कर सकती थी। मैं शर्त बद सकता हूँ कि वह क्वाँरी ही वृद्धा हो जायगी। शायद यही भय उसकी उदासी का रहस्य है। शायद कोई प्रेम कहानी छिपी हो; कोई दुखद प्रेम कहानी! मैं उसकी गम्भीरता का कारण जानना चाहता हूँ—एकांत में लूलू से पूछ कर देखूँगा।

"लूलू को चाकलेट की मिठाई बहुत भाती है। दूसरी बार शाम को जब उसके घर गया तो उसने मुझे बताया था। कुतर-कुतर कर खाती है! छोटे-छोटे लाल ओठों के बीच में पड़ कर मिठाई के टुकड़े ग़ायब होते जाते हैं और खाने के थोड़ी देर बाद झूठमूठ कैसा पश्चात्ताप का खेल रचती है कि हाय, सब खतम हो गये! कितनी प्यारी है वह, मनमोहिनी, सुन्दर! एक दिन मेरे कान में धीरे से कहा था कि जब बादल गरजते हैं, तो वह डर जाती है और भाग कर तकियों के बीच मुँह छिपा कर पड़ रहती है। कहती थी कि उसे हमेशा सपना दीखता है कि वह काली मखमल की गाऊन पहिने है, जिसका छोर बहुत

लम्बा ज़मीन पर घिसटता चलता है, रानियों की भाँति और गले में और बाँहों में सफ़ेद लेस का कालर और कफ़ है। उसने मुझे धमकाया भी था कि वह बड़ी ईर्ष्यालु है और वह एक छोटी-सी सोने की पत्ती के काम की मूठ वाली कटार ख़रीदेगी ताकि बदला ले सके। अपनी ऊलजलूल बातें सुनाते समय वह कितनी प्यारी लगती है! बिलकुल बच्चों की भाँति अपने सब विचारों में अपरिमित विश्वास रखती है। उसकी बातें सुन कर कभी-कभी तो सोफ़िया भी मुस्करा पड़ती है और मुस्कराते समय उसका मुख कैसा दमक उठता है! वह सोफ़िया—सोफ़िया! उसे कौन समझ सकेगा!"

किताब उसकी गोद से खिसक कर नीचे आ पड़ी। उसका शब्द सुन कर वह चौंक पड़ा और चकित हो इधर-उधर ताकने लगा, मानो अपने को ही नहीं पहिचान पाया। क्या सचमुच वह स्वयं ही, रोबर्तो मोन्तेफ्रांको, आज गहरे सोच में विचारों के सागर में डुबकी लगाते पकड़ा गया?

गोधूलि का धुँधला प्रकाश आकाश में बादलों के समान फैल रहा था। सोफ़िया छज्जे की ओर खुलती हुई खिड़की के पास खड़ी, शोरग़ुल और भीड़ से भरी सड़क को देख रही थी। वह समय था जब कि 'विया तोलेदो' (सड़क) इधर-उधर चलती हुई, छोटी-बड़ी गाड़ियों, बग्घियों की धारा के कारण बड़ी ख़तरनाक हो जाती थी। सोफ़िया की आँखें, मालूम पड़ता था कि किसी को खोज रही थीं। अचानक उसका चेहरा खिल उठा। उसने ज़रा-सा सिर झुका दिया और सफ़ेद पड़ गई और हट कर कमरे में वापस आ गई और एक मिनट बाद आँधी की तरह किवाड़ भड़भड़ाती हुई, कुरसियों को तितर-बितर करती हुई, ताकि और जल्दी कर सके, लूलू कमरे में आई।

"यहाँ क्या कर रही हैं, श्रीमती सोफ़िया सान्ताजलो महाशया? पढ़ रही हैं क्या?"

"हाँ, पढ़ रही थी।"

"और तुमने छज्जे पर जाकर खड़े होने की भी ज़रूरत नहीं समझी ?"

"और अगर ज़रूरत समझी होती तो।"

"हिष्ट ! मुझे तो ऊपर ठहरना ही पड़ा, क्योंकि आज शाम के लिये आल्बीना दर्जिन मेरी नई गाऊन लाने वाली थी और सारे समय मैं तो बेसब्री के कारण मरी जा रही थी। मैं तो यहाँ होना चाहती थी, क्योंकि कल शाम को मैंने रोबर्तो से अपना भूरा ओवरकोट पहिनने और 'सेलिम' को गाड़ी में जोत कर इधर से साढ़े छः बजे निकलने को कहा था। कौन जाने उसने मेरा कहा किया या नहीं !"

"रोबर्तो यहाँ से निकला था, भूरा ओवरकोट पहिने, अपनी टमटम में बैठा था।"

"अरे सचमुच ! तुम्हें कैसे मालूम ? तुम तो यहाँ बैठी पढ़ रही थीं ?"

"मैं खिड़की के पास खड़ी थी।"

"और तुमने रोबर्तो को पहिचान लिया ? तुम तो कभी उसकी तरफ़ नहीं देखती थीं ? शाबास ! उसने झुक कर तुम्हारा अभिवादन किया था ?"

"हाँ।"

"उसने अपना टोप उठाया था ?"

"हाँ—क्यों ? वह तो हमेशा टोप उठाता है।"

"और तुमने भी झुक कर उत्तर दिया था ?"

"क्या तुम समझती हो, मैं तहज़ीब के क़ायदे नहीं जानती ?"

"कम से कम उसकी ओर मुस्कराई तो होगी ?"

"नहीं, मुझे मालूम नहीं।"

"सोफ़िया, तुम अच्छी नहीं हो। और कल शाम रोबर्तो तुम्हारे बारे में मुझ से कह रहा था।"

"कह रहा था कि मैं अच्छी नहीं हूँ ?"

"नहीं। मुझ से पूछ रहा था कि तुम्हारे अलग-अलग रहने का कारण क्या है ? मुझसे इतना भिन्न स्वभाव क्यों है ? तो मैंने प्रशंसा के पुल बाँध दिये। मैंने उसे बताया कि तुम मुझसे अच्छी हो, अधिक मिलनसार हो, मुझसे अधिक प्रेम करने वाली हो और यह कि ख़राबी केवल यही है कि अपनी इन अच्छाइयों को छिपाये रहती हो। ज़रा सोचो तो ! वह बड़े ध्यान से सुन रहा था; आख़िर उसने पूछा कि उसके लिये तुम्हारी ओर से उपेक्षा का कारण क्या है।"

"उपेक्षा ?"

"उसने तो यही कहा और तुम्हें मालूम ही है, वह ग़लत तो कह नहीं रहा था। तुम उससे बात भी तो कितनी रुखाई से करती हो ! लेकिन इसका भी मैंने तुम्हारा पक्षपात करते हुये विरोध किया; चट से एक झूठ गढ़ कर सुना डाली कि तुम उसे बहुत पसन्द करती हो और उसकी बाबत तुम्हारी धारणा—"

"लूलू !"

"मैं जानती हूँ यह सब कुछ सच नहीं है, लेकिन रोबर्तो तुम्हें इतना पसन्द करता है कि उसके प्रति तुम्हारा अजनबी का-सा व्यवहार कृतघ्नता है !"

सोफ़िया ने अपनी छोटी बहिन के गले में बाँहें डाल कर उसका चुम्बन ले लिया; लूलू थोड़ी देर चिपकी रही, फिर कोमल स्नेह-पूर्ण स्वर में बोली —"तुम रोबर्तो के लिये थोड़ी-सी मुहब्बत क्यों नहीं दे सकतीं ?"

सोफ़िया ने चौंक कर हाथ हटा लिये, कुछ बोली नहीं।

"अच्छा, ख़ैर, जाने दो !" लूलू बोली। विषय बदलते हुये उसने कहना शुरू किया—"तो क्या सचमुच हम लोगों के साथ शाम को नहीं चल रही हो ?"

"नहीं, मेरे सिर में दर्द है; तुम अम्माँ के साथ चली जाओ।"

"फिर वही हमेशा की तरह! मैं तो जाऊँगी ही, क्योंकि मुझे तो आनन्द मनाना है।"

"रोबर्तो तुम्हारे साथ जा रहा है?"

"नहीं! उसके क्लब में डायरेक्टरों की बैठक है, वहाँ जायगा। मैं इस मौक़े से फ़ायदा उठा कर देलीनो के नाच-घर में चली जाऊँगी और कल सुबह तक नाचती रहूँगी।"

"और उसे पता चल गया तो?"

"और भी अच्छा होगा। उसे मुझ को स्वतंत्र रखने का सबक़ मिलेगा। मैं नहीं चाहती कि वह टोकने की बुरी आदत सीखे।"

"मुझे तो लगता है, तुम उसे बहुत थोड़ा प्यार करती हो।"

"बहुत करती हूँ, लेकिन अपने निराले ढंग से। अच्छा, तो अब कपड़े बदलने भागूँ। कम से कम दो घंटे तो लग ही जायँगे।"

माँ और बहिन की गाड़ी के पहियों की खड़खड़ सोफ़िया खड़ी सुनती रही। वह अकेली रह गई थी—बिलकुल अकेली। अकेलापन वह सदैव से चाहती थी। बचपन में, जब कोई डाँट या मार देता था, तो भाग कर अँधेरे में बिस्तर के अन्दर घुस कर अकेली रोती थी और वही आदत अब भी थी। इस समय, अकेले लम्बे-चौड़े ड्राइँग रूम में, प्रकाश से जगमगाते मोमबत्ती-दान के नीचे कुरसी की गद्दी पर सिर टेके, हाथ पर हाथ धरे वह बैठी थी। चेहरे पर गहरे शोक का भाव बना था, हृदय के तूफ़ान की छाया नाच रही थी। बिलकुल एकान्त के अवसरों पर उसे उदासी पूर्ण-रूप से ढाँप लेती थी, पुराने शोक का भाव साक्षात् होकर और वेग से क्रूर बन कर आक्रमण कर बैठता था।

पदध्वनि सुन कर वह चौंक पड़ी। रोबर्तो आया था। उसे अकेला देख कर वह हिचकिचा कर रुक गया; लेकिन यह सोच कर कि परि-

वार के बाकी लोग किसी दूसरे कमरे में होंगे, वह आगे बढ़ा। सोफ़िया घबड़ा कर खड़ी हो गई।

"गुड ईवनिंग, सोफ़िया!"

"गुड ईवनिंग—"

दोनों ही चुपचाप किंकर्त्तव्य-विमूढ़ खड़े थे।

"हे भगवान्! कैसी बद-मिज़ाज़ लड़की है!" रोबर्तो ने सोचा।

इतने बीच में सोफ़िया सँभल कर फिर पहले शान्त अवस्था में आ गई। चेहरे पर फिर पुराना उदास कठोर भाव फैल गया। ने एक सरे से ज़रा हट कर बैठ गये।

"तुम्हारी माँ अच्छी हैं?"

"अच्छी हैं, धन्यवाद!"

"और लूलू?"

"वह भी अच्छी है!"

फिर सन्नाटा हो गया। रोबर्तो को प्रसन्नता और खिन्नता के विचित्र मिश्रण का अनुभव हो रहा था।

"लूलू काम में लगी है?"—उसने पूछा।

सोफ़िया ने बेसब्री के उठते हुये उबाल को दबा लिया।

"वह अम्माँ के साथ देलीनो के नाच-घर में गई है," उसने जल्दी-जल्दी उत्तर दिया, मानो आगामी प्रश्नों का अनुमान लगा कर एक साथ ही जवाब दे देना चाहती हो।

क्योंकि सोफिया अकेली थी और वह अपने लिये बदतमीज़ नहीं कहलाना चाहता, उसका वहाँ बैठना और उसके साथ कुछ बातचीत करना उसे आवश्यक लग रहा था। इसका विचार आते ही रोबर्तो भाग निकलने के मंसूबे बाँधने लगा; पर वह अपनी जगह से हिला नहीं।

"मैं इसलिए यहाँ चला आया, क्योंकि क्लब की सभा में काफ़ी सदस्य नहीं आये।" उसने कहा, मानो अपने आने की सफ़ाई दे रहा हो।

"लूलू तुम्हारी प्रतीक्षा नहीं कर रही थी। मुझे अफ़सोस है—"

"उससे कोई हर्ज़ नहीं हुआ।" बीच में ही रोबर्तो बोल उठा।

बात का यह काटना बड़ा अचानक था और अनुपस्थित युवती के लिये बिलकुल ही प्रशंसा-सूचक नहीं था।

"और तुम नहीं गईं?" उसने कहना शुरू किया।

"नहीं, आप जानते हैं, मुझे नाच-गानों से अधिक प्रेम नहीं है।"

"क्या पढ़ना ज्यादा पसन्द है?"

"हाँ, बहुत ज़्यादा।"

"क्या तुम्हें डर नहीं लगता कि अधिक पढ़ना नुक़सान न करे?"

"मेरी आँखें अच्छी हैं।" सोफिया ने नेत्र उठा कर रोबर्तो की ओर देखते हुये कहा।

'और सुन्दर आँखें हैं'—रोबर्तो ने सोचा। "पर भावहीन हैं। मेरा मतलब था—"

"कि आध्यात्मिक चोट न पहुँचे। मैं ऐसा नहीं समझती, क्योंकि मैं जो किताबें पढ़ती हूँ, उनसे मुझे बहुत शान्ति मिलती है।"

"तुम्हें शान्ति की आवश्यकता पड़ती है?"

"हम सब शान्ति चाहते हैं।"

सोफ़िया का स्वर गम्भीर, संगीतमय था। रोबर्तो को सुनने में आनन्द आ रहा था, मानो पहली ही बार सुनने को मिला हो। वह अनुभव कर रहा था कि वह ऐसी स्त्री के सम्मुख आ गया है, जिसे वह पहले से नहीं जानता था और जो अब हर शब्द, हर हाव-भाव से परिचित होती जा रही थी। सोफ़िया की रुखाई अब जाती रही थी। वह अब उसकी ओर देख भी लेती थी, मुस्करा भी देती थी और मित्रवत् उससे बातें कर रही थी। उन दोनों के बीच में पहले क्या था और अब यह क्या हो गया है?

"जब कोई पुस्तक मुझे अच्छी लगती है," रोबर्तो ने कहा, "तो

लेखक को जानने की बड़ी अभिलाषा होती है। यह जानने की उत्कंठा होती है; कि वह अच्छा अथवा अच्छी है और क्या उसने भी दुख झेले हैं, उसने भी प्रेम किया है—"

"शायद कुछ दिन बाद तुम्हारा भ्रम दूर हो जायगा। लेखक हमेशा दूसरों की प्रेम-कथा का वर्णन करते हैं, अपनी कभी नहीं।"

"आत्म-सम्मान के कारण ?"

"मैं समझती हूँ, शायद ईर्ष्या के कारण। ऐसे-ऐसे उदाहरण भी हैं जहाँ केवल प्रेम ही हृदय के खज़ाने का एकमात्र बहुमूल्य रत्न है।"

किन्तु इन अन्तिम शब्दों को कहते समय, सोफ़िया के स्वर में ज़रा भी अन्तर नहीं आया। चेहरे का भाव भी वही निष्कपट भावना का रहा। उसकी आवाज़ और कहने का ढंग इतना सरल, पवित्र और विश्वस्त था कि उसे इस भाँति दृढ़ विश्वास के साथ प्रेम पर बात-चीत करते देख, रोबर्तो को बिलकुल आश्चर्य नहीं हुआ। उसे कुछ भी आश्चर्यजनक नहीं लग रहा था; सब बहुत ही स्वाभाविक और पहले से निर्धारित प्रतीत होता था। यह सन्ध्या भी, इस अपरिचित युवती के साथ बिताना, उसे ऐसी लग रही थी जिसकी वह बहुत दिनों से प्रतीक्षा करता आया है और जो उसके कर्म में पहले से ही लिख दी गई है। जब वे विदा होने के लिये उठे, तो एक दूसरे की आँखों में आँखें डाल कर देर तक देखते रहे, मानो चाहते थे कि फिर मिलने पर पहिचान सकें। सोफ़िया ने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया, रोबर्तो ने हाथ में ले कर उसके ऊपर झुक कर अभिवादन किया; दरवाज़े पर लटकता हुआ भारी परदा गिर कर उनके बीच में आ गया। दोनों अलग हो गये।

सोफ़िया की निकटता और वार्त्तालाप का भव्य प्रभाव जब कम हुआ, तो रोबर्तो बड़ा हड़बड़ाया हुआ था; उसका दिमाग़ ठीक काम नहीं कर रहा था। उसे प्रसन्नता भी हो रही थी और रुआँस भी आ

रही थी। वह मर जाना चाहता, पर जीवन बड़ा मृदु और सुखद भी प्रतीत हो रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि लूलू के अथवा अपने भविष्य के बारे में क्या सोचे।

सोफ़िया बहुत—बहुत खुश थी। और इसीलिये वह रो रही थी, दिल भर कर सिसक रही थी; सिर तकिये के बीच में दबाये आँसू बहा रही थी।

तीन महीने निकल गये। लूलू का विवाह स्थगित होता ही गया। माँ की समझ में यह देरी बिलकुल नहीं आती थी। वह बार-बार लूलू को अलग ले जाकर कारण पूछती।

"मैं और इंतज़ार करना चाहती हूँ।" वह उत्तर देती, "मैं रोबर्तो को और अच्छी तरह जानना चाहती हूँ।"

सचमुच लूलू बड़ी ग़ौर करने वाली बनती जा रही थी। वैसे तो मामूली तौर पर वह नाचती, गाती, हँसती, मज़ाक करती; पर बीच बीच में इन आनन्द-उत्सवों आदि को छोड़ कर अपनी बड़ी बहिन को समझने की चेष्टा करती, उसका अध्ययन करती, या रोबर्तो के मुख से निकले हुये प्रत्येक शब्द को ध्यान से सुनती और ग़ौर करती। सोफ़िया अक्सर भवें जोड़े, ओठ बन्द किये, बड़ी उत्सुकता से, ध्यान दे कर सुनती हुई बैठी रहती।

तब लूलू ने अपने चारों ओर ध्यान दे कर देखना शुरू किया। अद्भुत घटनायें रोज़ घटतीं। रोबर्तो पहिले जैसा सरल और हा-ही करने वाला नहीं रहा वरन् विचारशील, पीला, घबराया हुआ सा, उद्विग्न रहता था। वह बहुत थोड़ा बोलने लगा था और कहते समय उसका मन कहीं और पड़ा रहता था। जिन बातों में वह पहले बहुत ज़्यादा दिलचस्पी लेता था, उन्हीं के लिये अब उपेक्षा का भाव दिखाता था। कभी-कभी बहुत यत्न करके वह अपनी पुरानी खुश-मिजाज़ी की हालत पर आने की कोशिश करता और कुछ देर के लिये

सफल भी हो जाता था; पर यह भावना अधिक देर तक नहीं टिक पाती थी। बनने की आदत उसे कभी नहीं थी और अपने को सम्हालने की चेष्टा में बड़ी बुरी हालत में पड़ जाता था; उसके हृदय की ज्वाला और तूफ़ान की झलक उसकी आँखों में साफ़ नज़र आती थी।

अब सोफ़िया भी बहुत बदल गई थी। वह अब घबराई हुई, बेचैन सोफ़िया थी। कभी छोटी बहिन का, स्नेह के आवेग में प्रगाढ़ आलिंगन कर लेती और कभी घंटों उससे बिना मिले, अलग बैठी रहती। उसकी आँखों में अब ज्योति जलती रहती थी। गालों पर सुर्ख़ी हवा से भगाये बादलों की तरह आती-जाती रहती, बदन गरम रहता, गरम साँस चलती; उसकी आवाज़ अब और गम्भीर, तथा आवेश से भारी होती थी—कभी कर्कश, रूखी; कभी कोमल, मृदुल, धीमी। उसके हाथ काँपते थे। रात को नींद नहीं आती। लूलू अक्सर नंगे पैर उठ कर रात को उसके दरवाज़े पर जा कर सुनती; सोफ़िया रात-रात भर करवटें बदलती और सिसकती रहती। जब इसका कारण पूछा जाता, तो सोफ़िया फ़ौरन कह देती कि कुछ भी बात नहीं है; हमेशा यही उत्तर मिलता।

जब रोबर्तो और सोफ़िया मिलते—वे अब रोज़ ही मिलते थे—दोनों का अपनी पुरानी दशा से परिवर्त्तन और भी गहरा दीखने लगता था। बातें बहुत कम होतीं। उत्तर या तो फ़ौरन दिये जाते या उड़ते हुये से मिलते। दोनों एक दूसरे की ओर विचित्र रूप से दृष्टिपात करते। कभी-कभी सारी शाम वे आपस में बात न करते; पर एक दूसरे की हरकतों का, वाक्यों का बड़े ध्यान से मनन करते। वे दोनों कभी पास-पास नहीं बैठते थे, पर रोबर्तो सदैव सोफ़िया द्वारा छुई हुई किताब या काढ़ने की चीज़ को उठा लेने का बहाना ढूँढ़ निकालता। कभी जब वह कमरे में नहीं आती, रोबर्तो और भी अधिक व्यग्र होकर बन्द दरवाज़े की ओर ताकने लगता और पूछे गये प्रश्नों का बेतुका,

अन्यमनस्क होकर उत्तर देता। कभी सोफ़िया के आने के पाँच मिनट बाद ही टोप उठा कर चलने को प्रस्तुत हो जाता। सोफ़िया पीली पड़ती जाती थी; आँखों के नीचे कालिमा के गड्ढे पड़ रहे थे। अब उसने निश्चय कर लिया कि बाहर निकलना बन्द कर देगी। एक सप्ताह तक, रोज़ शाम को वह अपने कमरे में, उत्सुकता, व्यग्रता, और अधैर्य से विकल हो काँपती हुई, अपनी हृदय की दुख भरी व्यथा की चेष्टा करती, बन्द पड़ी रहती।

एक दिन शाम को लूलू उसके कमरे में आई और विनय करने लगी, "सोफ़ी, मेरा एक काम कर दोगी?"

"क्या चाहती हो?"

"मुझे एक छोटा-सा पत्र लिखना है," लूलू ने उत्तर दिया, "रोबर्तो अकेला बैठा है। वहाँ छत पर ज़रा उसको बातचीत में लगा लो!"

"किन्तु मैं—"

"तो क्या तुम्हें यहीं बन्द पड़े रहना इतना पसन्द है? क्या मेरा ज़रा-सा काम कर देने में तुम्हारा बहुत ख़र्चा हो जाता है?"

"जल्दी लौट आओगी न?"

"मुझे चार लाइनें तो कुल लिखनी ही हैं!"

सोफ़िया इस विषम परिस्थिति के लिये सारा साहस संचित करती हुई छत पर चली। दहलीज़ पर पहुँच कर वह ठिठक गई। रोबर्तो इधर-उधर चहल-क़दमी कर रहा था। वह छत पर उसके पास पहुँच गई।

"लूलू ने मुझे भेजा है," उसने धीमे स्वर में कहा।

"तुम ज़बर्दस्ती यहाँ आई हो?"

"ज़बर्दस्ती—नहीं तो।"

उसका सारा शरीर काँप रहा था। रोबर्तो उसके पास खड़ा था। भावों के आवेश से उसका चेहरा तमतमा रहा था।

"मैंने तुम्हें क्या कर दिया है, सोफ़िया ?"

"कुछ नहीं, तुमने कुछ नहीं कर दिया है। मेरी ओर ऐसे मत देखो।" भय-विह्वल हो वह याचना कर रही थी।

"तुम तो जानती हो सोफ़िया, मैं तुम्हें कितना अधिक प्रेम करता हूँ ?"

"ओह रोबर्तो ! यह मत कहो, दया करो ! अगर कहीं लूलू ने सुन लिया !"

"मैं लूलू से प्रेम नहीं करता; सोफ़िया, मैं तुम से प्रेम करता हूँ !"

"यह विश्वासघात है !"

"मैं जानता हूँ, पर मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। मैं चला जाऊँगा—"

"क्यों जी ?" लूलू ने दूर से पुकार कर पूछा। वह दूसरे द्वार पर आकर खड़ी हो गई थी—"क्यों, तुम दोनों ने कुछ सुलह कर ली कि नहीं ?"

कोई उत्तर न मिला। सोफ़िया हाथों से मुँह ढाँप भागी और रोबर्तो मूर्त्ति बना, निश्चल, चुपचाप खड़ा रहा, मानो काठ मार गया हो।

"रोबर्तो !" लूलू चिल्लाई।

"लूलू !"

"क्या हो गया ?"

"कुछ नहीं; मैं जा रहा हूँ।"

उससे बिना विदा माँगे ही वह भी, खोया हुआ-सा चल दिया। लूलू उसकी ओर दृष्टि जमाये, गहरे विचार में निमग्न वहीं खड़ी रही।

वह सोच रही थी—"एक यह गया, एक वह गई। अब मामला बढ़ रहा है। मुझे कुछ करना चाहिये।"

"और इन्हीं सब बातों के कारण मैं रोबर्तो मोन्तेफ़्रांको से विवाह नहीं कर सकती।" अपनी माँ से लूलू निश्चयात्मक रूप से कह रही थी।

"क्या उलटी-सीधी बातों के कारण बनाये हैं तूने !" माँ ने सिर हिला कर उत्तर दिया।

"तो क्या असली बात कह ही दूँ कि रोबर्तो मुझे खुश नहीं कर सकता है और मैं इसीलिये उससे शादी नहीं करना चाहती।"

"कम से कम तूने साफ़ बात तो कह डाली, लेकिन यह सब तेरा कोरा भ्रम ही है। रोबर्तो तुझसे प्रेम करता है।"

"अरे, वह अपने को समझा लेगा।"

"तुमने और उसने वचन भी तो दे दिये हैं !"

"इससे क्या हुआ ? वचन लौटाये जा सकते हैं। हम लोग अब उस ज़माने में तो रहते नहीं हैं, जब शादियाँ बलपूर्वक होती थीं !"

"दुनिया क्या कहेगी ?"

"माँ, दुनिया की परिभाषा है क्या !"

"लोग क्या कहेंगे ?"

"और ये 'लोग' महाशय कौन होते हैं ? मैं तो इन्हें जानती नहीं। 'लोग' महोदयों को प्रसन्न करने के लिये मैं दुखी बनने को बाध्य नहीं हूँ।"

"बड़ी अजब लड़की है ! लेकिन मैं रोबर्तो से क्या कहूँगी ? उसके लिये क्या प्रबन्ध किया जाय ?"

"जो तुम्हारे मन में आये सो कह देना। आख़िर माँ किस लिये हो ?"

"अच्छा, सचमुच ! तुम्हारी ग़लतियों को सिर पर ले कर सुधारती फिरूँ और जो बदनामी होगी सो ?"

"मैं तो नहीं समझती कि बदनामी होगी। तुम उससे विनयपूर्वक कह सकती हो, ज़रा तहज़ीब के साथ। तुम तो मेरी बुराई भी कर सकती हो। कह देना कि लूलू बड़ी हठीली, अस्थिर, छिछोरी और बचरना बिखेरने वाली है; कहना कि लूलू बड़ी रद्दी पत्नी बनेगी—कि

वह तनिक भी गम्भीर नहीं है; बताना कि उसमें ज़रा भी आत्म-सम्मान नहीं है—और लूलू की बड़ी बहिन—"

"तेरी बहिन ? पागल हो गई है क्या, लूलू ?"

"उँह, कहने में क्या बिगड़ता है। अभी तो रोबर्तो और सोफ़िया एक दूसरे के लिये उपेक्षा दिखाते हैं; लेकिन एक दूसरे को अच्छी तरह जान जायँगे, तो आपस के गुण-दोषो को पसन्द करने लगेंगे—और तब कौन जानता है ? तुम्हारी तो तारीफ़ हो जायगी कि बड़ी लड़की की शादी पहले कर दी, बड़ी भली माँ है।"

"असल में—"

"मैं पतिहीन नहीं रह जाऊँगी, अभी तो सिर्फ़ अठारह साल की हूँ। और फिर कुछ आनन्द भी तो मनाना चाहती हूँ। मैं तो खूब नाचना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ कि यह लड़कपन के सुखी दिन अपनी अच्छी, विचारवान्, सुशील माँ के साथ बिताऊँगी।"

"बड़ी दुष्ट है तू !" माँ ने द्रवित हो, बेटी को गोद में भरते हुये कहा।

"अच्छा तो सारी बात तुम्हारी समझ में आ गई ? बस, अब बुरी खबर रोबर्तो को जाकर सुना दो। ज़रा नम्रता से कहना—कहना कि हम दोनों सदा मित्र रहेंगे और उससे अक्सर मिलते रहेंगे। अगर इन दोनों के बीच प्रेम उपजना है, तो दोनों प्रेम में बँध ही जायँगे। यह तो भाग्य में लिखा ही है।"

"किन्तु तू विश्वास करती है कि सब मामला ठीक हो जायगा, क्यों री ? तू तो जानती है, मैं झगड़ा पसन्द नहीं करती।"

"वाह री, अविश्वासिनी माँ ! तुम तो बड़ी बेढब हो। हाँ, हाँ, अपने पक्के अनुभव से मैं कहती हूँ कि बिलकुल बदनामी न होगी। रोबर्तो सज्जन है और कभी आशा नहीं करेगा कि मैं उससे प्रेम किये बिना विवाह करने को बाध्य की जाऊँ।"

"मुझे तो यह सोफ़िया वाला मामला असम्भव दीखता है।"

"असम्भव से अधिक सम्भव कुछ भी नहीं है।" गम्भीर होकर लूलू ने उत्तर दिया।

"अच्छा, अब अपने मुहावरों को बन्द कर! काफ़ी हो गया। हमें सब कुछ समय के आसरे छोड़ देना चाहिये। समय पाकर सब चीज़ ठिकाने आ जायगी। लेकिन सब ठीक हो जाने पर भी, तेरा दिमाग़ ठीक नहीं होगा; रहेगी तू वही शैतान लूलू।"

"हाँ, हठीली, छिछोरी, बचपना—"

"हाँ, हाँ, मैं मानती हूँ; तू स्थिर दिमाग़ की नहीं है—"

"और सिड़ी भी हूँ। जो मन में आये, मुझे कह डालो! मैं सचमुच सब कुछ हूँ। और भी कुछ कह लो; मैं इन्तज़ार कर रही हूँ।"

"अच्छी लूलू, अच्छा अब एक प्यार देकर 'गुड नाइट' कर ले।"

"मेरी प्यारी माँ, 'गुड नाइट'।"

"चलो, अच्छा ही हुआ," माँ ने सोचा—"लूलू अभी बहुत छोटी है। आजकल तो जल्दबाज़ी की शादियों की बरबादियाँ रोज़ ही देखने को मिलती हैं। भगवान् बचाये! चलो अच्छा ही हुआ।"

"उफ़!" लूलू ने अपने आप से साँस भरते हुये कहा—"माँ को राज़ी करने के लिये कितनी युक्तियों से काम लेना पड़ा; क्या-क्या चाणक्य-नीति खेलनी पड़ी! मैं बहुत बढ़िया राजदूत बन सकती हूँ! क्या जीत हुई है! प्रेम की जीत तो नहीं हुई, पर मेरी जीत तो है—यह लूलू की विजय है!"

अपनी बहिन के कमरे के दरवाज़े पर रुककर एक बार उसने सुना। जब तब एक यत्न से दबाई हुई आह की ध्वनि आ जाती थी। बेचारी सोफ़िया को शान्ति न थी।

"सोओ, सोफ़िया सोओ!" लूलू धीमे शब्द में, दरवाज़े को चूमती हुई बोली, मानो अपनी बहिन का मस्तक चूम रही हो—"अब तो चुप हो कर आराम करो। मैंने आज तुम्हारे लिये काम किया है।"

और वह विशाल-हृदया लड़की, सन्तुष्ट, सुखी, अपनी बहिन के सुख के विचार से पुलकित, पलंग पर लेट कर गाढ़ी नींद में सो गई।

समय ने अपना काम पूरा किया। समय को लोग 'बाबा' कहते हैं। उसकी गोद में पहुँच कर अनेक कार्य पूरे हो जाते हैं। उस दिन लूलू तय कर रही थी कि साली की हैसियत से उसे किस रंग की गाऊन पहिननी चाहिये—नीली रेशमी, या जोगिया रंग की लेस के काम की? उसने रोबर्तो से कहा कि शादी के समय उसको चाकलेटों का बड़ा-सा ढेर मिलना चाहिये और सोफ़िया से कहा कि अपना रेशमी कढ़ा हुआ रूमाल दे दे जिस पर बादलों की तस्वीरें बनी हैं। रोबर्तो और सोफ़िया जानते थे कि लूलू का हृदय कितना उदार, स्वच्छ और सरल है। उसकी उमंग भरी बातों को सुन-सुन कर वे मुस्कराते और तीनों का प्रेम-बंधन और भी अधिक दृढ़ हो जाता। वे दोनों उसे 'देवी' मान कर हृदय में आदर करते थे।

अपनी शादी के बारे में एक मित्र से बातचीत करते समय रोबर्तो मोन्तेफ्रांको ने कहा—"मैं तो हमेशा से कहता आया हूँ कि दम्पत्ति को विभिन्न प्रकृति का होना चाहिये। तभी दोनों एक दूसरे को अच्छी तरह समझ सकते हैं, तभी एक दूसरे में घुल-मिल सकते हैं, मिल कर एक हो सकते हैं। दो समान प्रकृति वाले समानान्तर रेखाओं के समान होते हैं; साथ-साथ चलते ज़रूर हैं, पर मिलते कभी नहीं हैं। और फिर जहाँ प्रेम होता है—! मैं तो यही हमेशा कहता आया हूँ।"

इटली

आत्मा की रक्षा के लिये

लेखक—राबर्टो ब्रेको

सिस्टर फिलोमिना अत्यन्त विनीत भाव से पादरी के समीप खड़ी होकर कहने लगी—"पादरी साहब, मुझे विश्वास नहीं होता कि मैंने पाप किया है। कभी-कभी मेरी आत्मा कहती है कि मैंने पाप किया है और कभी-कभी वह कहती है कि मैंने पाप नहीं किया। उसके यह कहने पर कि मैंने पाप नहीं किया, मुझे इतनी अधिक वेदना होती है, जितनी यह कहने पर नहीं कि मैंने पाप किया है।"

पादरी कुछ भी न समझ पाया। वह बोला—"पुत्री, अधिक स्पष्ट रूप से कहो। मुझे सब कुछ बतला दो। तुम अभी निरी बालिका हो। अठारह वर्ष की आयु की आत्मा पर विश्वास नहीं किया जा सकता। मुझे निर्णय करने दो। परमेश्वर मुझे प्रकाश प्रदान करेगा। हाँ, बोलो।"

"सुनो पादरी साहब, मैं सब सत्य ही बतलाती हूँ। सोमवार को अर्द्ध-रात्रि के समय, पाँचवें वार्ड के नम्बर सात को धार्मिक सान्त्वना प्रदान की गई। अस्पताल में प्रवेश पाने के बाद से ही मैं वहाँ सिस्टर मेरिया के स्थान पर काम कर रही थी। उस समय जो डाक्टर वहाँ काम कर रहा था उसने कहा कि—'अब कोई आशा नहीं है।' उसने मुझसे कहा कि—'क्लेश अब अधिक नहीं टिकेगा। सूर्योदय के पूर्व ही मृत्यु अवश्यम्भावी है।'

"डाक्टर ने फिर कहा—'परिस्थिति में अधिक चिन्ता-जनक परिवर्त्तन न होंगे, परन्तु यदि तुम मेरी उपस्थिति आवश्यक समझो, तो

निःसंकोच मुझे बुला लेना। अन्य मरीज़ों की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है। वे तुमको अथवा मुझे तनिक भी कष्ट न देंगे।' इतना कह कर डाक्टर विश्राम करने के लिये चला गया।

"मुझे प्रत्येक आध घण्टे पर आधा चम्मच औषधि देने के अतिरिक्त दूसरा कोई काम न था। मैं बिस्तर के समीप निर्दिष्ट स्थान पर बैठ गई। बैठे-बैठे मैं गम्भीर विचारों में तल्लीन हो गई और संसार से विदा लेने वाली आत्मा के लिये परमेश्वर से प्रार्थना करने लगी।"

"किसकी आत्मा के लिये?"

"उस ग़रीब आदमी की आत्मा के लिये जो बीमार पड़ा था।"

"तो क्या वह आदमी था?"

"क्या मैंने यह बात पहले नहीं बतलाई?"

"यदि मैं ग़लती नहीं कर रहा हूँ, तो तुमने नम्बर सात की चर्चा चलाई थी। बेटी, नम्बर सात से किसी लिंग का बोध नहीं होता। ख़ैर, कोई हर्ज़ नहीं, कहे जाओ।"

"लगभग तीन बजे के समय मुझे अत्यन्त क्षीण स्वर में मृत्यु-कालीन मर्मान्तक वेदना के शब्द सुनाई पड़े। हाँफ-हाँफ कर मरीज़ ने कहा—'सिस्टर फिलोमिना, वह आ गई!' अर्द्ध-रात्रि से वह निस्तब्ध तथा अचेतन अवस्था में पड़ा हुआ था।

" 'भाई, धैर्य धरो,' मैंने उसके कान में धीरे से कहा; 'धीरज!'

"तब वह शनैः शनैः प्रत्येक शब्द स्पष्ट रूप से इस प्रकार कहने लगा—'मैं तैयार हूँ। पच्चीस वर्ष की अवस्था में काल के गाल में जाना दुःखद अवश्य है; परन्तु मैंने इस समय संसार के समस्त माया-मोह का परित्याग कर दिया है। सम्भवतः यही उचित भी है। मैं इस संसार में अकेला और निर्धन रहा। मैं अपने को कवि समझता रहा, पर मैं कुछ भी न था। मुझे विश्वास था कि दूसरे मुझ से प्रेम करते थे। परन्तु मुझ पर किसी का प्रेम नहीं था। यदि इस समय तुम

मेरे समीप न होतीं, तो मरुस्थल में परित्यक्त व्यक्ति की भाँति मेरी मृत्यु हुई होती।'

"वह चुप हो गया। मैंने दोबारा कहा—'भाई धैर्य धारण करो। ईश्वर तुम्हारे साथ है।'

"कुछ क्षण के उपरान्त मैंने देखा कि उसके गहरे नीले युगल नेत्र अश्रु-जल से परिप्लावित हो गये।

"उसने पूछा—'सिस्टर फिलोमिना, क्या आप मुझ पर एक उपकार करेंगी?'

"क्यों नहीं भाई! जो भी मुझसे बनेगा, अवश्य करूँगी।'

"उसने कहा, 'क्या तुम चाहती हो कि मैं शान्ति के साथ प्राण त्यागूँ! क्या तुम्हारी इच्छा है कि अन्त समय में, मैं उस परमात्मा को धन्यवाद देता हुआ मरूँ जिसने मुझे बनाया है?'

"मैंने उत्तर दिया, 'प्रत्येक भले ईसाई को इसी भाँति प्राण त्यागना चाहिये।' "

"पुत्री, तुमने उचित ही उत्तर दिया।"

"मरणासन्न पुरुष ने कोमल स्वर से कहा, 'तब ऐसा करने में मेरी सहायता करो।'

"मैंने पूछा, 'भाई, इस सम्बन्ध में, मैं कैसे तुम्हारी सहायता कर सकती हूँ?'

" 'इस जीवन का परित्याग करते समय मेरे हृदय में किसी भी प्रकार की इच्छा या अशान्ति न रहने पावे, इसी सम्बन्ध में तुम मेरी सहायता करो। मुझे अगले जीवन में अपने साथ किसी एक दया की स्मृति ले जाने दो। सिस्टर फिलोमिना, मरणासन्न पुरुष पर दया करो! मुझे एक चुम्बन दो!' "

पादरी ने चौंक कर कहा—"चुम्बन!"

"मैंने फिर कहा, 'भाई धैर्य धारण करो। ईश्वर का चुम्बन लेने के लिये अपने को तैयार रक्खो।' "

"पुत्री, तुमने बहुत ठीक कहा।"

"परन्तु श्वास के क्षीण होते-होते उसने पुनः प्रार्थना की, 'मुझ पर यह उपकार करो। सिस्टर फिलोमिना, क्या तुम इस बात को नहीं समझ रही हो कि तुम मेरे मोक्ष का साधन बनोगी? क्या तुम यह चाहती हो कि तुम्हें इस बात के लिये सदा पश्चात्ताप करना पड़े? क्या तुम मेरी आत्मा को नरक में डालना चाहती हो? क्या तुम मेरे अधःपतन का कारण बनना चाहती हो?' "

"पुत्री, क्या तुम...? क्या तुम...?"

"पादरी साहब, मैं इन शब्दों को सुन कर भयभीत हो गई। मैंने विचार किया कि अशान्तिपूर्वक प्राण त्याग करने पर सम्भव है कि कहीं सदा के लिये उसकी आत्मा का अधःपतन न हो जावे। और यदि मैं उसके इस पतन का कारण हुई, तो मेरी आत्मा का भी सदा के लिये अधःपतन न हो जावे। मैंने यह भी विचार किया कि क्षण-प्रतिक्षण मृत्यु उसके सन्निकट चली आ रही है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि सूर्योदय के पूर्व ही यह सदा के लिये मृत्यु की गोद में सो जावेगा। निस्तब्ध कमरे में मुझे उसकी अन्तिम क्षीण श्वास सुनाई पड़ रही थी। वार्ड में जो कुछ भी थोड़े-बहुत मरीज़ थे, वे सब शान्तिपूर्वक मीठी-मीठी नींद ले रहे थे। बत्तियाँ धीमी कर दी गई थीं। मन्द प्रकाश में श्वेत बिस्तर कब्रों के सदृश प्रतीत होते थे। मैं बहुत उदास और खिन्न हो गई। मैंने झुक कर उसका चुम्बन ले लिया। मुझे 'धन्यवाद' 'धन्यवाद' शब्द अस्पष्ट और धीमे स्वर में सुनाई पड़े। इसके पश्चात् मैं पुनः प्रार्थना करने लगी।"

"तुमने किस स्थान पर चुम्बन किया?"—पादरी ने शान्त स्वर

द्वारा अपनी चिन्ता को दबाने का प्रयत्न किया। यही चिन्ता उसके निर्णय की बाधक बन रही थी।

सिस्टर फिलोमिना ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया, "उस समय सर्वत्र प्रायः अन्धकार था। परन्तु जहाँ तक मैं अनुमान कर सकती हूँ, मैंने उसके मुख का चुम्बन लिया।"

"अविवेक! कम से कम अविवेक तो यह था ही। मैं जहाँ तक समझता हूँ, पवित्र भावनाओं से प्रेरित होकर तुमने यह कार्य किया है। ईसाई धर्म की दयालु भावनाओं के वश में होकर ही तुमने यह काम किया है। उच्च भावनाओं से प्रेरित होकर, तुम कहोगी। पर मैं कहूँगा, ग़लत; नहीं, भयोत्पादक भावनाओं से प्रेरित होकर। यदि मुख के स्थान में तुमने भौंहों का चुम्बन लिया होता तो उत्तम होता। उसकी आत्मा की रक्षा के लिये इतना पर्याप्त था। फिर भी, तुमने मरणासन्न मनुष्य का ही चुम्बन लिया था।"

"वही बात तो मैंने कही है।"

"तो अब जब वह मर गया है और दफ़नाया जा चुका है और शान्ति से सो रहा है, अब उस सम्बन्ध में हम कभी चर्चा भी न करेंगे।"

"परन्तु बात ऐसी नहीं है। वह अभी जीवित है।"

"जीवित है!"

"हाँ, जीवित है। सूर्योदय तक वह मरणासन्न अवस्था में रहा। प्रथम सूर्य के रश्मि-प्रकाश के साथ ही वह स्वस्थ होने लगा। जिस समय डाक्टर ने वार्ड में प्रवेश किया, उस समय वह मरीज़ के मुख पर मृदु मुस्कान की झलक देख कर, अपने आश्चर्य को छिपा न सका। उसने मरीज़ की बड़ी सावधानी से परीक्षा की। एक इञ्जेक्शन देकर उसने धीमे स्वर में कहा, 'वास्तव में यह बड़ी आश्चर्यजनक बात है! परन्तु अब बीमारी पर हमारी विजय अवश्यम्भावी है।' "

पादरी ने नैराश्य भाव से कहा, "परन्तु यह तो बड़ी भयंकर बात है।"

"आप क्या कह रहे हैं?"

"पुत्री, यह गम्भीर प्रश्न है। यदि तुमने किसी पुरुष के मुख का चुम्बन लिया है और वह जीवित है, तो मेरी समझ में नहीं आता कि इस सम्बन्ध में क्या किया जावे। मृत्यु के द्वार पर उपस्थित रहने पर तो बात ही दूसरी थी। परमात्मा सभी बातों को यथायोग्य समझ लेता। परन्तु यदि वह जीवित है, तो ईश्वर को भी दया के प्रश्न पर उलझन पड़ जायगी। हमें साफ़-साफ़ बातें करनी चाहिये। बग़लें झाँकने से काम न चलेगा।"

कुछ समय विचार करने के पश्चात् उसने फिर पूछा—"पुत्री, यह तो बतलाओ कि वह डाक्टर कैसा आदमी है?"

"क्या पूछना है, वह तो एक सज्जन पुरुष है।"

"डाक्टरी में उसकी ख्याति कैसी है?"

"वह सर्वश्रेष्ठ डाक्टरों में से एक माना जाता है।"

"मरीज़ की दशा इस समय कैसी है?"

"वह अच्छा है।"

"तब तो तुम्हारा सर्वनाश हो गया!"

"हाय, परमात्मा!"

"तुम अभी भी उनका नाम उच्चारण करने का साहस करती हो?"

"पादरी साहब, मैं दुष्ट पापिन हूँ।"

"यह स्वभाव निन्दनीय है!"—परन्तु जब सिस्टर फिलोमिना फूट-फूट कर रोने लगी, तब पादरी कुछ कोमल भाव से बातचीत करने लगा—"मुझे अभी भी स्पष्ट मार्ग दृष्टि-गोचर नहीं हो रहा है। तुमने मुझसे अभी कहा है कि तुमने पाप नहीं किया, तब तुमको इसके विपरीत कथन की तुलना में अधिक वेदना का अनुभव होता है। यह विरोधाभास कैसे संभव है! मैं इसे कैसे समझूँ?"

"मैं नहीं बतला सकती। मुझे जो कुछ भी अनुभव हो रहा है, उसे मैंने आपके समक्ष स्पष्ट रूप में व्यक्त कर दिया है।"

"क्या तुम अब अपने कर्म पर पश्चात्ताप करती हो?"

"यदि मैंने पाप किया है, तो मुझे अवश्य पश्चात्ताप करना चाहिये।"

"परन्तु इस बात का विचार न करो कि मैं तुम्हें इसी समय क्षमा कर दूँगा। हमें कुछ दिन प्रतीक्षा करनी होगी। हमें यह देखना होगा कि मरीज़ की बीमारी किस करवट बैठती है? यह अभी कौन बतला सकता है? तदुपरान्त हमें अपने कार्य की गतिविधि का निश्चय करना होगा। इस समय जाओ। मैं आज इससे अधिक नहीं सुनना चाहता। जिस समय तुम विश्रामार्थ बिस्तर पर लेटो, उस समय पश्चात्ताप करना। तुम मेरे आशय को समझ गईं?"

"पादरी साहब, मैं सदा पश्चात्ताप करूँगी!"

कुछ दिनों के पश्चात् फिलोमिना, पादरी के पास फिर आई।

"कहो नम्बर सात कैसा है?"

"उसकी दशा बहुत कुछ सुधर गई है।"

"डाक्टर लोग उसके सम्बन्ध में क्या विचार करते हैं?"

"उनका कहना है कि वह स्वस्थ हो जावेगा।"

"पुत्री! तब तो तुम्हारे लिये कोई आशा नहीं है।"

"यही तो मैंने भी उससे कहा।"

"तुमने उससे क्या कहा?"

"मैंने कहा कि उसके कारण मेरा सर्वनाश हो गया। यदि मैं जानती कि वह जीवित रहेगा, तो उसका चुम्बन कदापि न करती।"

"तब उस स्वस्थ कवि ने क्या उत्तर दिया?"

"उसने उत्तर दिया कि वह उसके नाश का इच्छुक नहीं है। उसने इसके बदले में मेरी आत्मा की रक्षा करने के लिये भी कहा।"

"यह तो वह मरकर ही कर सकता था।"

"हाँ पादरी साहब, इसीलिये उसने मुझसे यह प्रतिज्ञा की है कि जिस दिन वह पूर्णरूप से स्वस्थ बतलाया जावेगा, उसी दिन वह मेरे लिये अपनी आत्मा का बलिदान कर देगा।"

"यह एक नई उलझन है!" पादरी ने कुछ क्षण तक विचार किया। इसके पश्चात् गम्भीर-मुद्रा धारण कर कहने लगा—"आदि से अन्त तक घटना पर सिंहावलोकन करने के पश्चात् तुमको क्षमा प्रदान करना ही उचित प्रतीत होता है। यदि ऐसा मनुष्य फिर से मरने लगे, तो हमें अपने कार्य का श्रीगणेश इसी प्रकार फिर से करना पड़ेगा।"

इटली

संतरी

लेखक—फ्रांचेस्को सोआवे

कड़ाके के जाड़े के दिनों में जब कि इटली, फ्रान्स और जर्मनं आदि सभी देश भयंकर शीत की गोद में जकड़े हुए थे, बड़ी से बड़ं नदियाँ भी बर्फ़ से जम गई थीं और वहाँ के लोग भी इतनी अधिव शीत सहन न कर सकने के कारण मृत्यु को प्राप्त हो रहे थे, उस समय फ़ान्स के शहर मैत्ज़ में एक संतरी पहरे पर भेजा गया। यह संतरं अभी हाल ही में एक बड़ी बीमारी से उठा था। पहरे का स्थान एव बिलकुल खुली जगह पर था; किन्तु वह एक सैनिक था और अपने कर्त्तव्य को बड़े ही उत्साह और प्रसन्नता के साथ पूर्ण करने कं प्रस्तुत था।

शहर ही में इस संतरी की प्रियतमा रहती थी। जब उसने संतरी कं ड्यूटी की खबर सुनी, तो वह बहुत चिंतित हुई और उसने यह सोच कि उतनी बीमारी का कष्ट सहन करने के पश्चात्, इस भयंकर तथ शीतमयी रात्रि से उसका मुठभेड़ करना असम्भव है। वह चिन्ता तथ दुःख के कारण व्याकुल थी।

अब रात्रि धीरे-धीरे व्यतीत हो जाने के कारण और भी अधिक ठंड हो गई थी। युवती के सामने केवल यह चित्र था कि उसका सैनिक इस समय भयानक रात्रि से संघर्ष कर रहा होगा और अधिक कमज़ोर होने के कारण वह असहाय होगा। नींद की एक क्षणिक झपकी के आने से ज़मीन पर गिर कर वह सदैव के लिये ही न सो

जाय। यह विचार आते ही वह पागल हो उठी और परिणाम का विचार किये बिना ही, गरम कपड़े पहिन कर, साहस के साथ वह संतरी के स्थान पर पहुँच गई, जो कि उसके घर से अधिक दूर न था।

वहाँ जाकर उसने वही दृश्य देखा जिसकी कल्पना की थी। बेचारा सैनिक बिलकुल थक गया था और पाले के कारण उसका पैर रखना भी दुश्वार हो रहा था। संतरी की करुण-दशा को देखकर उसकी प्रियतमा ने उससे अपने घर, थोड़े ही समय के लिये, चलने का अनुरोध किया। कहा कि कुछ खा-पीकर जल्दी ही लौट आना। सैनिक इस कार्य का परिणाम जानते हुये बहुत नम्रता, किन्तु दृढ़ता से मना करता रहा। युवती का आग्रह ज़ोर पकड़ता जा रहा था। उसने कहा कि कपड़ों से बर्फ़, जिसने उसे जकड़ रक्खा था, छूटने में थोड़ी ही देर तो लगेगी।

संतरी ने उत्तर दिया—"कदापि नहीं! यदि मैं अपनी ड्यूटी पर से हटा, तो समझ लो कि मृत्यु बहुत ही समीप है।"

प्रियतमा बोली—"कभी भी नहीं। यह बात किसी को भी नहीं मालूम होने पायगी; यदि तुम यहीं पर रहोगे तब तो अवश्य ही मृत्यु तुम्हारे लिये सम्भव है। तुम्हारे पास अब भी एक अवसर है और तुम्हारी यह ड्यूटी है कि यदि अपने प्राणों की रक्षा कर सको तो करो। तुमको परमात्मा पर भरोसा रखना चाहिये। यदि तुम्हारी अनुपस्थिति पकड़ी भी गई, तो भगवान् हम पर दया-दृष्टि डालेंगे और किसी भाँति तुम्हें बचायँगे।"

संतरी ने कहा—"हाँ, किन्तु इसका तो कुछ सवाल उठता ही नहीं। यदि मैं पल भर के लिये भी अपना स्थान छोड़ देता हूँ और मेरा पहरे का स्थान खाली रहता है, तो क्या मेरी ड्यूटी पूरी हो सकती है? क्या यह मेरे कर्त्तव्य के साथ विश्वासघात करना न कहलायेगा?"

युवती ने कहा—"यदि तुम जाने के लिये तैयार हो, तो मैं तुम्हारे

स्थान पर तुम्हारे लौट आने तक ड्यूटी कर सकती हूँ और मुझे तनिक भी भय नहीं है। अब तुम जल्दी करो और मुझे अपने हथियार दे दो।"

संतरी उसके प्रेम-पूर्ण, प्रभावशाली अनुरोध को टाल न सका। उसको ऐसा प्रतीत हुआ, मानो वह बेहोश हो रहा है; अब उसे यह कठिन जाड़ा सहना मुश्किल है। उसने सांकेतिक शब्द सहित अपनी टोपी तथा हथियार आदि उसको सौंप दिये और उस नम्र हृदय वाली युवती को अपने स्थान पर छोड़ कर जल्दी ही लौटने का विचार करके वह वहाँ से चल दिया।

अपने प्रेमी के प्राणों को बचा कर वह अत्यन्त ही आनान्देत हो रही थी। यहाँ तक कि वह कुछ क्षण के लिये अपने आप को भूल-सी गई। उसके लौटने की आशा करके, उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न था। उसी समय एक सैनिक अफ़सर ग़श्त लगाता हुआ उस ओर निकला और ललकार का शब्द न पाकर उसको शक़ हुआ कि सैनिक या तो अपना स्थान छोड़ कर भाग गया है या सो गया है। संतरी के स्थान पर एक घबराई हुई भयभीत युवती को देख कर, जो कि अपने विषय में कुछ ठीक-ठीक न बता सक रही थी, अफ़सर के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। 'गार्ड हाऊस' में दिलासा देने के पश्चात् उसने सब कुछ क़बूल कर लिया। चिंतित, घबराई हुई तथा सब की ओर से संदिग्ध विनतीपूर्ण शब्दों से उसने अपने भावी पति को क्षमा प्रदान करने की प्रार्थना की।

तुरन्त ही संतरी को उसके घर से बुलवाया गया। वह उस भयंकर रात्रि में पहरा देने के कारण और भी अधिक शक्ति-हीन हो गया था। उन लोगों को भय था कि कहीं लाने में ही उसकी मृत्यु न हो जाय! डाक्टरों की सहायता लेने के पश्चात् बहुत कठिनाई से वे उसको इस योग्य कर पाये कि वह अपना सब हाल बता सके।

वह बेचारा सैनिक हवालात में कड़ी निगरानी में रक्खा गया ताकि

अपने मुक़दमों की प्रतीक्षा करे। होश आने पर उसके मुख से केवल ये शब्द निकले—"आह, मृत्यु-दंड पाने से तो यही अच्छा होता कि कर्त्तव्य-पालन में ही मेरे प्राण जाते!" मुक़दमे का निश्चित दिन पास आता जा रहा था और वह जानता था कि कठोर सैनिक-नियमों के अनुसार सज़ा सुनने के कुछ दिन बाद उसे मृत्यु-दंड मिलने वाला है।

बेचारी युवती की बुरी हालत थी। वह सब दोष अपने सिर पर लेने को तैयार थी। प्रेमी को खोने की आशंका उसे खाये जाती थी, जिसे वह जी-जान से प्रेम करती थी। वही अब उसी के हाथों मृत्यु को प्राप्त हो रहा था, अपनी प्रेयसी ही के हाथों...!

सब घटनायें इतनी जल्दी हुईं कि उस बेचारी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे। उसकी विपद् की विशालता ने उसे शक्ति प्रदान की। सब भय और अपने कार्यों के परिणामों को ठुकरा कर उसने प्रण किया कि अपने प्राण देकर वह अपने सैनिक को बचायेगी। रोते हुये, बाल बिखराये, शहर में वह पागलों की भाँति घूमती फिरती थी। मित्रों तथा अभिभावकों से दया-याचना करती। प्रत्येक प्रभावशाली अफ़सर से वह विनती करती कि एक संयुक्त प्रार्थना-पत्र सैनिक के जीवन के लिये भेजा जाय। यह भी वह कहती थी कि उसके प्रेमी के प्राणों के स्थान पर उसके प्राण ले लिये जायँ; क्योंकि उसी की प्रेरणा से वह संतरी कर्त्तव्य-विमुख हुआ था।

जब घटना का पूरा हाल विदित हुआ, तो इतनी सहानुभूति तथा उसके प्रयत्नों की इतनी प्रशंसा हुई कि सेना के बड़े-बड़े नायकों तक में दिलचस्पी हो गई। उसके प्रेम तथा त्याग ने उन्हें भी विचलित कर दिया। उन्होंने हर भाँति चेष्टा की कि बेचारे सैनिक को 'प्राणदान' दिया जाय। नगर की बड़ी-बड़ी महिलाओं ने भी उसका साथ दिया। यहाँ तक कि गर्वनर भी जनता की अपील की अवज्ञा न कर सका। उसने उस सैनिक को इस शर्त पर जीवन-दान दिया कि तत्काल ही वह अपनी उस वीर, बहादुर युवती का पाणि-ग्रहण कर ले और साथ ही गर्वनर की एक भेंट भी स्वीकार करे। दूसरों ने भी गर्वनर का अनुकरण किया। सुन्दर पत्नी के साथ इतना सुन्दर दहेज़ पाकर सैनिक के आनन्द का पारावार न रहा।

इटली

देश-भक्ति और पेट-भक्ति

लेखक—फूचीनी

उस दिन सुबह अफ्रीका से बहुत बुरी खबरें आई थीं। श्रीमान् फेलीचे—तेल के व्यापारी और श्रीमान् पीयेत्रो—गल्ले के व्यापारी, खड़े-खड़े हाथ में अखबार लिये सड़क के बीच बड़े आवेश में बातें कर रहे थे। उनके देश-भक्त हृदय में उफ़नते हुये तूफ़ान का प्रतिबिम्ब उनके तमतमाये हुये चेहरों पर व्यक्त था। सैनिक दुर्घटना का धक्का, मारे जाने वालों के लिये दर्द, विजयी हबशियों के प्रति क्रोध, हत्याकाण्ड के लिये ज़िम्मेदार व्यक्तियों के प्रति क्षोभ, यह सब उनके दिल में रह-रह कर उठ रहा था। और बाहरी तौर पर उनकी शीघ्र गति, बार-बार मुट्ठी बाँधना, कटु वाक्य, विषम दृष्टि और मुक्के उनके भाव प्रकट कर रहे थे।

इसी समय दोपहर का घण्टा बजा और देखते-देखते उनके तम-तमाये चेहरों पर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई, मानो अचानक अपनी इटालियन सेनाओं की सनसनीदार विजय की खबर मिल गई हो। तब दोनों ने बड़ी ही प्रसन्नता-पूर्वक भावावेश से हाथ मिलाये और जल्दी-जल्दी, एक इधर और दूसरा उस तरफ़, डग बढ़ाते चल दिये।...

उनकी इस आकस्मिक प्रसन्नता का कारण यह था कि दोनों के लिये अपनी पसन्द की चीज़ें दोपहर के खाने के लिये थीं। श्रीमान् फेलीचे के लिये भेड़ का क़बाब था और श्रीमान् पीयेत्रो के पास था, भरवाँ, मसालेदार करमकल्ला।

अमेरिका

निर्वासित जन

लेखक—ब्रेट हार्ट

२३ नवम्बर, १८५० ई० को सुबह जब मि० ओकहर्स्ट, जुआरी पोकर फ़्लैट की आम सड़क पर आ कर खड़ा हुआ, तो उसे लगा कि शहर के आध्यात्मिक वातावरण में कुछ अन्तर है। दो-तीन मनुष्य, जो बड़े तत्पर हो आपस में बातचीत कर रहे थे, उसके पास आते ही चुप हो गये और अर्थपूर्ण दृष्टि से एक दूसरे को देखने लगे। वायुमंडल में रविवार (विश्राम-दिवस) का सा सन्नाटा छाया था, जो बड़ा विलक्षण प्रतीत होता था, क्योंकि इस सुदूर औपनिवेशिक नगर में धार्मिकता इतनी नहीं थी कि रविवार का विश्राम बाध्य हो।

अर्थपूर्ण दृष्टियाँ फेंकने का मि० ओकहर्स्ट पर कुछ भी असर न हुआ। उसका शान्त, सुन्दर चेहरा वैसा ही स्थिर रहा। उनके दृष्टिपात का कारण उसको ज्ञात था अथवा नहीं, इससे हमें कुछ मतलब नहीं। 'मैं समझता हूँ कि ये लोग किसी के पीछे पड़े हैं', उसने विचारा, 'शायद मेरे ही पीछे पड़े हों।' जिस लाल रूमाल से वह अपने जूतों पर की पोकर फ़्लैट की लगी हुई लाल धूल, पोंछ रहा था, उसे जेब में रख उसने आगे सोचना बिलकुल बन्द कर दिया।

सचमुच सारा पोकर फ़्लैट किसी के पीछे पड़ा था। हाल ही में बस्ती ने कई हज़ार डॉलर का, दो बहुमूल्य घोड़ों का और एक प्रसिद्ध नागरिक का नुक़सान उठाया था। बस्ती में पवित्रता की प्रतिक्रिया हुई थी, उतनी ही जितनी की वह गुंडेशाही थी, जिसके कारण प्रतिक्रिया

का जन्म आवश्यक प्रतीत हुआ था। एक गुप्त सभा ने निर्णय किया था कि शहर से सब लांछित व्यक्ति निकाल दिये जायँ। ऐसे दो व्यक्ति जो स्थायी रूप से निकाले गये थे, वे इस समय बस्ती के बाहर पेड़ की शाखा पर रस्सी द्वारा फाँसी पर झूल रहे थे। अस्थायी रूप से निकाले गये मनुष्यों को निर्वासन का दंड मिला था। हमें यह बताते शरम आती है कि पोकर फ़्लैट से निर्वासित जनों की इस टुकड़ी में कुछ स्त्रियाँ भी थीं। किन्तु उनका स्त्री होना ही उनके निकाले जाने का कारण था, क्योंकि उनका पेशा ही बदनाम है। ऐसी ही बुराइयों से पोकर फ़्लैट को साफ़ करने का प्रण नगर ने किया था।

मि० ओकहर्स्ट का अनुमान ठीक था कि वह स्वयं भी उसी टुकड़ी में शामिल है। सभा के कुछ सदस्यों ने तो राय दी थी कि उसे फाँसी दे देनी चाहिये ताकि दूसरे सबक़ सीखें; उसकी जेबों से कम से कम उनके द्वारा हारा धन तो वापस मिल सकता था। जिम ह्वीलर कह रहा था, "न्याय के विरुद्ध बात है यह कि 'रोरिंग केम्प' से यह परदेशी लौंडा आकर हम लोगों को लूटने लगे।" किन्तु भाग्यवश जो लोग मि० ओकहर्स्ट के साथ जुआ खेल कर जीत भी चुके थे, वे इस दलील को मानने को तैयार नहीं हुए और यह व्यक्तिगत जलन से उत्पन्न प्रस्ताव रद हो गया।

मि० ओकहर्स्ट ने अपने दंड की घोषणा बड़े दार्शनिक शान्त भाव से सुनी थी। अपने निर्णायकों के मतभेद के कारण वह और भी अधिक शान्त था। वह रोम-रोम से जुआरी था। भाग्य को चुपचाप सिर पर ले लेना ही उसका धर्म था। उसकी दृष्टि में जीवन जुए के खेल के समान था जिसमें पत्ते बाँटने वाले का भी कुछ प्रतिशत हक़ होता है।

पोकर फ़्लैट से निर्वासित अभद्र जनों के साथ बस्ती के बाहर तक पहुँचाने के लिये हथियार-बन्द व्यक्तियों का दल आया था। मि०

ओकहर्स्ट, जिसे लोग बड़ा ही निडर बदमाश मानते थे और जिसे निकालने के लिये ही हथियार-बन्द दल खास तौर से आया था, के अतिरिक्त निर्वासित-जत्थे में एक युवती थी जिसे लोग 'रानी' कह कर पुकारते थे; दूसरी भी युवती थी जिसका नाम 'मदर शिप्टन' पड़ गया था; और 'बिली चाचा' था जो नामी शराबी और संदिग्ध चोर (विशेषकर सोने की खदान से साफ़ करने के लिये स्वर्ण-मिट्टी से मिश्रित धारा का कंचन चुराने वाला) था।

निर्वासित जनों के दल को देख कर तमाशा देखने वालों की भीड़ चुप रही। निगरानी के लिये सशस्त्र दल भी कुछ न बोला। स्वर्ण खदान की छोटी-सी घाटी के सिरे पर पहुँच कर, जहाँ स्थायी निर्वासित पेड़ से लटके थे और जहाँ पर बस्ती का छोर था, दल के नेता ने दो शब्दों में अपना आशय समझा दिया—निर्वासित जनों को अगर अपनी जान प्यारी थी, तो इस स्थान से बस्ती की ओर नहीं बढ़ सकते थे।

निगरानी के दल के वापस लौटते ही, निर्वासित दल ने अलग-अलग ढंग से अपना-अपना बाँध तोड़ा। रानी तो फूट कर आँसुओं में बह निकली, मदर शिप्टन गाली बकने लगी और 'चाचा' ने क़समों और धमकियों की बौछार पर बौछार छोड़नी शुरू की। केवल दार्शनिक हृदय वाला जुआरी, मि० ओकहर्स्ट चुप रहा। वह चुपचाप मदर शिप्टन की गाली सुनता रहा कि शहर वालों को चीर कर फेंक देगी; रानी की सिसकती हुई क़समें सुनता रहा कि सिर पटक कर यहीं सड़क पर जान दे देगी। बिली चाचा की धमकियों का सिलसिला सुनता रहा जो अपने घोड़े पर बैठे चोर के मुख से निकलता चला आ रहा था। जुआड़ियों की पक्की भलमनसाहत और हँसमुखपन दिखाते हुए, उसने हठ कर अपना बढ़िया चितकबरा घोड़ा दे दिया और अड़ियल टट्टू जिस पर रानी सवार थी, ले लिया। पर इस कार्य से उस जन-समुदाय

में आत्मीयता नहीं आई। युवती ने अपने वस्त्र ठीक कर, पुरानी अदा के साथ निरुत्साह धन्यवाद दे दिया। मदर शिप्टन चितकबरे घोड़े की नई मालिकिन की ओर डाह भरी दृष्टि से ताकने लगी। बिली चाचा सब को एक साथ ही कोस कर चुप हो गया।

सेण्डी-बार को जाती हुई सड़क—सेण्डी-बार की बस्ती में अभी तक पवित्रता की ऐसी कोई लहर नहीं उठी थी, इसलिये निर्वासित-जनों को वहीं कुछ आशामय भविष्य दृष्टिगोचर होता था—ऊँची पहाड़ियों पर होकर जाती थी। दिन भर की कड़ी यात्रा का रास्ता था। जाड़ों के दिन आ चुके थे, इसलिये मैदान की नीची पहाड़ियों की गर्म-तर हवा छोड़ते ही सियेरी पर्वत की ठण्डी तेज़ हवा उन्हें लगने लगी। रास्ता सँकरा और मुश्किल था। दोपहर को अपनी काठी से उतर कर रानी ने घोषणा कर दी कि अब आगे नहीं जायगी, इसलिये सब को ठहर जाना पड़ा।

ठहरने का यह स्थान बिलकुल बीहड़ और प्रभावशाली था। प्याले की शक्ल का बड़ा भारी घेरा, जिसके तीन ओर ऊँची-ऊँची नग्न चट्टानों की चोटियाँ दीवार जैसी खड़ी थीं, इस स्थान से ढालू हो कर घाटी के उस पार खड़े ऊँचे शिखर के चरणों तक चला जाता था। ठहरने का स्थान वास्तव में बड़ा सुन्दर था; पर यदि ठहरना उस दशा में उचित होता तब। मि० ओकहर्स्ट जानता था कि सेण्डी-बार का अभी आधा भी रास्ता तय नहीं हुआ है और किसी के पास ठहरने अथवा देर करने का इन्तज़ाम नहीं है। इस बात को उसने अपने साथियों को कड़े शब्दों में समझाने की भी चेष्टा की; दार्शनिक बनकर उपदेश देते हुये कहा कि 'हार कर हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना बुद्धिमानी नहीं है।' पर उन लोगों के साथ कुछ शराब थी, जो इस समय उनके लिये खाना, ईंधन, आराम, सब कुछ थी। उसके मना करने पर भी वे लोग पीने लगे और जल्दी ही नशे में हो गये। बिली चाचा लड़ने की

मंशा छोड़ कर बेहोशी की हालत में आ गया; रानी नशे की हालत में रो-रो कर बहने लगी और मदर शिप्टन खुर्राटे भरने लगी। केवल मि० ओकहर्स्ट, चट्टान का सहारा लिये, उनकी ओर ताकता सीधा खड़ा रहा।

मि० ओकहर्स्ट शराब नहीं पीता था, क्योंकि इससे उसके पेशे में विघ्न पड़ता था, जिसमें कि स्थिरता, चटक-सूझ, भावहीनता की बड़ी आवश्यकता होती थी। उसी के शब्दों में, वह 'शराब पीने का हौसला' नहीं कर सकता था। शराब के नशे में चूर साथी निर्वासितों को देखते-देखते उसे अपने अकेलेपन पर रुँआसी आ गई। पहली बार जीवन में उसे अपनी आदतों पर, व्यसनों पर और अपने पेशे पर दुख हुआ। कुछ क्षण तक वह अपने काले कपड़ों की धूल झाड़ने में हाथ-मुँह धोने में, सफ़ाई के और साधारण कार्य करने में, जिनका वह आदी था, अपने को भूल गया। अपने असहाय, दया-योग्य, निर्बल साथियों को छोड़ कर भाग जाने का विचार उसे कभी नहीं आया। फिर भी अपनी साधारण स्वाभाविक स्थिरता में, जिसके लिये वह बदनाम था, वह कुछ कमी अनुभव कर रहा था। चारों ओर से घिरे चीड़ के वृक्षों के ऊपर हज़ार फुट ऊँची उठी हुई उदास चट्टान की भीत पर उसकी दृष्टि रुकी थी। कभी वह आकाश में जमा होते हुए बादलों के दल को देखता था, कभी नीचे बिछी हुई घाटी को ताकता था, जिस की छाया अब गहरी हो चली थी। वह घाटी की ओर देखे जा रहा था कि अचानक किसी ने उसका नाम ले कर पुकारा।

एक घुड़-सवार धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता आ रहा था। नवागन्तुक का हँस-मुख खिला चेहरा देखते ही मि० ओकहर्स्ट ने टाम सिम्सन को पहिचान लिया। टाम को लोग 'सेण्डी-बार का नादान' भी कह कर पुकारते थे। 'ज़रा से खेल' में कुछ महीने हुये, मि० ओकहर्स्ट ने टाम से भेंट की थी और बहुत ही स्वाभाविक रूप से उस बेवकूफ़

युवक का सारा धन—लगभग चालीस डालर—जीत लिया था। जुआ खतम होने के बाद कच्चे नवयुवक जुआरी को मि० ओकहर्स्ट ने अलग ले जाकर इस भाँति सीख भी दी थी कि 'टामी, तुम भले लड़के हो, पर तुमसे जुआ खेलना रत्ती भर भी नहीं आता है। अब फिर कभी मत खेलना।' यह कह कर उसने उसके रुपये लौटा दिये और बाहर का रास्ता दिखा दिया। उसी दिन से टाम सिम्सन इस जुआरी का गुलाम था।

मि० ओकहर्स्ट को देखते ही उसने पहिचान लिया और बालकों की भाँति प्रसन्न हो दुआ-सलाम करने लगा। उसने बताया कि वह पोकर फ़्लैट में रोज़ी ढूँढ़ने जा रहा है।

"अकेले ?"

नहीं, नहीं, बिलकुल अकेले नहीं; असल में ज़रा झेंपते हुये मुस्करा कर उसने कहा—वह अपनी प्रेमिका पिनी वुड्ज़ के साथ भाग आया है। मि० ओकहर्स्ट को पिनी की तो याद होगी ? वह जो टेम्परेंस हाऊस में नौकर थी। चुपचाप सगाई तो बहुत पहले हो गई थी, पर बुड्ढा बाप जेक वुड्ज़ शादी करने को तैयार न था। इसलिये वे भाग निकले थे और अब पोकर फ़्लैट में शादी कर बसने जा रहे थे। अब इसलिये बीच में यहाँ मिल गये हैं। वे काफ़ी थक गये थे। ठहरने का सुन्दर स्थान और जान-पहिचान के साथी पाकर कितनी खुशी है उन्हें ! ये सब बातें जल्दी-जल्दी नादान कह गया। उसकी प्रेमिका पिनी, पन्द्रह वर्ष की हृष्ट-पुष्ट बालिका अब चीड़ के एक पेड़ के पीछे से, जहाँ छिपी वह चुपचाप शर्म के मारे लाल पड़ रही थी, निकल आई और अपने प्रेमी के पास खड़ी हो गई।

मि० ओकहर्स्ट ने भावुकता को कभी पास नहीं फटकने दिया। औचित्य-अनौचित्य का विचार उसके लिये और भी हास्यप्रद था। पर उस समय उसे भी लग रहा था कि इनका आ जाना दुर्भाग्य हुआ।

फिर भी बड़ी सूझ से, उसने लात मार कर बिली चाचा को, जो कुछ कहने ही वाला था, चैतन्य कर दिया। लात इतनी ज़ोरदार थी कि चाचा को अपना 'ताऊ' पहिचानते देर न लगी। मि० ओकहर्स्ट ने टाम सिम्सन को बहुतेरा समझाया कि ठहरना उचित न होगा, पर सब विफल हुआ। यह भी कहा कि खाने-पीने का कुछ भी सामान पास नहीं है; डेरा डालने का कुछ प्रबन्ध नहीं है; पर दुर्भाग्यवश नादान ने एक न सुनी, उलटा यह कह कर सान्त्वना देने लगा कि उसके पास एक अलग टट्टू पर खाने-पीने का अतिरिक्त सामान लदा है। रास्ते से ज़रा हट कर अपने पुराने दिनों की याद में रोता हुआ पुराने लट्ठों का एक झोपड़ा था। बस, सारी बात तय हो गई। "पिनी श्रीमती ओकहर्स्ट के साथ सो सकती है,"—रानी की ओर इशारा कर नादान बोला, "मैं तो कहीं भी पड़ा रह सकता हूँ।"

'श्रीमती ओकहर्स्ट' सुन कर तो चाचा बिली हँस कर फूटने ही वाला था, पर मि० ओकहर्स्ट की लात ने ठीक समय पर आकर उसे चुप कर दिया। हँसी रोकने के लिये उसे पहाड़ी पर ऊँचा चढ़ जाना पड़ा, तब कहीं जाकर वह शांत हो पाया। ठहाका मार कर अपनी जाँघ पीटते हुये, मुँह बिचका-बिचका कर चाचा ने इस सुन्दर मज़ाक को ऊँचे चीड़ के वृक्षों को सुनाया। जब वह अपने साथियों के पास लौट कर आया, तो वे लोग आग जला कर, क्योंकि हवा में एकाएक ठंडक बढ़ गई थी और बादल ऊपर तक चढ़ आये थे—अलाव के चारों ओर बैठे गप्पें हाँक रहे थे। पिनी तो सचमुच छोटी-छोटी लड़कियों की तरह शरारत भरी मुस्कान के साथ चहक-चहक कर बातें कर रही थी और रानी बड़ी दिलचस्पी से हँसती-मुस्कराती हुई उसकी बातें सुन रही थी। रानी कई दिनों से इतनी प्रसन्न नहीं दिखाई पड़ी थी। नादान भी पिनी की भाँति मि० ओकहर्स्ट और मदर शिप्टन के साथ गपशप कर रहा था। मदर शिप्टन तो अपनी गालियाँ त्याग कर उन सब

में घुल-मिल गई थी। हँसमुख दल को इतना सुखी देख, चाचा मन ही मन बड़बड़ाया—"यह भी कोई पिकनिक है क्या ?" आग की चमकती हुई सुखदायक लपट हवा में उछलती थी,—आगे, पास ही, घोड़े, टट्टू आदि पशु बँधे थे—लोगों के चेहरों पर उल्लास था। शराब की झोंक से उलझे हुये उसके दिमाग़ में एकाएक एक नया विचार उत्पन्न हुआ। शायद यह विचार भी हँसी का था, क्योंकि हँसी रोकने के लिये उसे अपनी मुट्ठी मुख में ठूँस देनी पड़ी और जाँघ को फिर पीटने की प्रबल इच्छा हुई।

घाटी में लेटी हुई छाया अब धीरे-धीरे उठ कर पहाड़ियों के शिखर की ओर अग्रसर होने लगी। हलकी हवा उन्नत चीड़ के वृक्षों को हिलाती हुई उदास स्वर में झाड़ियों पर टकराती हुई सन्-सन् शब्द करने लगी। टूटा हुआ झोपड़ा, जिस पर चीड़ की शाखाओं का छप्पर पड़ा था, स्त्रियों के लिये दे दिया गया। नादान और पिनी, प्रेमी और प्रेमिका जब अलग हुये, तो दोनों का चुम्बन इतना सरल और स्वाभाविक था कि चीड़ के बीच में बहती हवा के शब्द के ऊपर भी सुनाई दे सकता था। दुबली-पतली रानी और बदमिजाज़ मदर शिप्टन भी इस सुन्दर प्रेम-क्रीड़ा को देख कर कुछ न कह सकीं और चुपचाप झोपड़े की ओर मुड़ गईं। आग पर कुछ लकड़ियाँ और डाल दी गईं और पुरुष वहीं दरवाज़े के बाहर पड़ रहे और कुछ ही देर में नींद में लुढ़क गये।

मि० ओकहर्स्ट कम सोने वाला था। सुबह होने के आस-पास वह सर्दी से ठिठुरा हुआ, सुन्न हो जाग पड़ा। बुझती हुई आग को नई लकड़ी से कुरेदते समय तेज़ हवा का झोंका आया (हवा अब तेज़ हो गई थी) और साथ में उसका टुकड़ा भी आया, जिसने गाल को छूते ही ख़ून को जमा दिया—बर्फ़ पड़ रहा था !

हड़बड़ा कर वह उठ खड़ा हुआ कि सोने वालों को जगा दे। अब ज़्यादा समय नहीं रहा था, क्योंकि तूफ़ान बढ़ रहा था। जहाँ चाचा

बिली लेटा था, उधर मुड़ते ही उसने देखा कि चाचा का कोई पता नहीं है। एकदम संशय से उसका हृदय काँप उठा; उसके ओठों पर बिली के लिये धिक्कार था। जहाँ टट्टू बँधे थे, वह देखने भागा—एक भी टट्टू वहाँ न था। जिधर से चोर घोड़े लेकर निकल भागा था, वहाँ के निशान भी बर्फ़ से ढँक चुके थे।

कुछ देर तक परेशान मि० ओकहर्स्ट आग तक लौटता-लौटता शान्त हो गया। सोते हुये बाकी साथियों को उसने जगाया नहीं। नादान सुखपूर्वक नींद में पड़ा सो रहा था, हँस-मुख चेहरे पर मुस्कान थी। कौमार्य के बोझ से लदी पिनी अपनी कृश सहेलियों की बग़ल में ऐसी निश्चिन्त सो रही थी, मानो देव-दूत रक्षा कर रहे हों। मि० ओक-हर्स्ट ने अपना कम्बल अच्छी तरह लपेट लिया और लेटा-लेटा सूर्य निकलने की प्रतीक्षा करने लगा। जब सूर्य निकला तो किरणें, गिरते बर्फ़ के गुच्छों के बीच धुँधला, किन्तु कहीं-कहीं चकाचौंध करने वाला प्रकाश दे रही थीं। सारा दृश्य एकाएक बदल गया था। उसने घाटी की ओर दृष्टि फेंकी और तीन शब्दों में छोटे-से जन-समुदाय का वर्त्तमान और भविष्य व्यक्त कर दिया, "बर्फ़ में फँसे !"

भाग्यवश खाने-पीने का सब सामान झोपड़े के भीतर रख दिया गया था, इसलिये चाचा की नज़रों से बच गया। उसको अच्छी तरह देख-भाल कर यह साफ़ मालूम हो गया कि होशियारी और मितव्ययता से शायद दस दिन काम चल सकता है। "अगर," मि० ओकहर्स्ट ने धीमी आवाज़ में नादान से कहा, "तुम हम लोगों को भी खिलाने को राजी होओ। अगर नहीं होओ—और तुम्हें राज़ी होना भी नहीं चाहिये—तो इन्तज़ार करना पड़ेगा कि चाचा खाने-पीने का सामान ले कर लौट आयँ।" पता नहीं क्यों, मि० ओकहर्स्ट नादान को यह न बता सका कि चाचा बिली घोड़े चुरा कर भागा है, और इसलिये यह धारणा रक्खी कि शायद चाचा केम्प से कुछ दूर निकल गये

होंगे और घोड़े रस्सी तुड़ा कर तूफ़ान के मारे भाग निकले होंगे। उसने रानी और मदर शिप्टन को भी इशारे से सावधान कर दिया कि कहीं अपने भागे हुये साथी की बदमाशी और नीचता का भेद इन दोनों पर न खुल जाय। "अगर इन्हें ज़रा-सा भी पता लग गया, तो हम सब लोगों की क़लई खुल जायगी!" उसने अर्थपूर्ण स्वर में उनसे कह दिया, "और अपने को निर्वासित-नीच बता कर इनको डरा देने में कुछ फ़ायदा भी नहीं है।"

बिना किसी हिचकिचाहट के टाम सिम्सन ने अपना सब रसद आदि का सामान मि० ओकहर्स्ट के सिपुर्द कर दिया। यही नहीं, वह इस प्रकार घटनावश इन लोगों के साथ पड़ जाने में सुख मान रहा था। "हफ़्ते भर तक हम लोग मिल कर डेरा डाले केम्प का आनन्द लूटेंगे। तब तक बर्फ़ पिघल कर रास्ता साफ़ हो जायगा, फिर साथ ही साथ चलेंगे।" नवयुवक की हँस-मुखता और मि० ओकहर्स्ट की शांत भावना सब पर असर कर गई। नादान ने चीड़ की डालें ला कर झोपड़े की छत की मरम्मत की और रानी ने बड़ी सुन्दरता और सुरुचि के साथ सामान भीतर लगाया कि छोटे शहर की सीधी-सादी बालिका चकित हो गई। "आप लोग पोकर-फ़्लैट में बड़ी शान से रहती होंगी।"—पिनी ने आश्चर्य से कहा। रानी ने जल्दी से मुँह फेर लिया कि कहीं लाल पाउडर से रँगे गालों पर की झेंप की सुर्ख़ी दीख न जाय। मदर शिप्टन ने पिनी को ज़रा डाँट दिया कि ज्यादा बातें न करो। मि० ओकहर्स्ट जब चाचा बिली के पद-चिन्हों की व्यर्थ खोज से लौटा, तो सब लोग प्रसन्न-चित्त हँसी-मज़ाक कर रहे थे। पहले तो वह सहम गया। उसने समझा कि शायद इन लोगों ने शराब चढ़ा ली है; शराब उसने अलग छिपा दी थी। "फिर भी नशे की ख़ुश-मिजाज़ी तो दीखती नहीं है," जुआरी ने मन ही मन कहा। पर जब उसने तूफ़ान की चपेटों के बीच आग की उज्ज्वल शिखा और उनके

दमकते चेहरे देखे, तो उसका सारा संशय दूर हो गया। उसे विश्वास हो गया कि उनका हँसी-मज़ाक निर्दोष आनन्द की ही एक लहर है।

हम यह नहीं बता सकते कि शराब के साथ-साथ मि० ओकहर्स्ट ने ताश भी छिपाये थे या नहीं, कि दूसरे लोग न छुएँ, पर जैसा कि मदर शिप्टन एक बार बोली थी, उसने उस दिन एक बार भी ताशों के बारे में बात नहीं की। टाम सिम्सन ने कहीं से एक धौंकनी का बाजा निकाल कर ला दिया। उसी की सहायता से समय काटने की सूझी। कुछ चेष्टा करने पर पिनी ने बाजे पर कई गाने निकाल लिये। हड्डी की बनी करतालों पर नादान ने ताल दी। सब से सुन्दर गीत जो उस शाम को गाया गया, वह वही तत्काल बनाया हुआ 'केम्प में मिलने' के ऊपर भजन था। प्रेमी और प्रेमिका ने हाथ में हाथ डाल कर बड़े उत्साह से गाया और बाक़ी लोगों ने भी बड़े ज़ोर से साथ दिया। बाद में शायद धार्मिक भावना के कारण नहीं, वरन् प्रतिशोध की भावना लेकर—

'भगवान् की सेवा में मुझे सुख है,
और उसी की सेवा में मुझे मरना है।'

यह गाया। चीड़ के पेड़ हिल रहे थे। तूफ़ान निर्वासित जन और प्रेमियों के समुदाय के ऊपर चीत्कार कर रहा था; उनकी आग से लपट आकाश की ओर उछलती थी, मानो उनकी प्रतिज्ञा का रूप हो।

आधी रात होते-होते तूफ़ान कम हुआ; बादल हट गये और तारे सोते हुये मनुष्यों के ऊपर चमकने लगे। मि० ओकहर्स्ट ने, जिसे अपने पेशे के कारण कम से कम नींद पर जीवन काटना पड़ता था, जागने की ड्यूटी को निगरानी के लिये, बाँटते समय स्वयं अपने ऊपर अधिक भाग ले लिया, बाक़ी टाम के लिये छोड़ दिया। जब नादान ने आपत्ति की तो कह दिया, "अक्सर सात-सात दिन बिना सोये निकाल देता हूँ।"

"क्या करते रहते थे ?" टाम ने पूछा।

"पोकर (जुए का खेल) खेलता था !" ओकहर्स्ट ने रोब से उत्तर दिया।

"जब आदमी की क़िस्मत खुलती है—बढ़िया क़िस्मत—तो वह थकता नहीं, पहले किस्मत ही जवाब दे जाती है।"

"क़िस्मत", जुआरी अपना गम्भीर व्याख्यान देता गया, "बड़ी विचित्र वस्तु होती है। इसके बारे में केवल यही बात ठीक से मालूम है कि बदलेगी ज़रूर। और अगर पता लग जाय कि क़िस्मत कब पलटेगी, बस तभी आदमी बन जाता है। हम लोगों ने जब से पोकर फ़्लैट छोड़ा है, तभी से बदक़िस्मती का झपटा खाये हैं। तुम लोग भी हमारे साथ पड़ गये; सो तुम्हें भी दुर्भाग्य ने अपनी चपेट में ले लिया। अब अगर तुम अपनी क़िस्मत के पत्ते लिये आखिर तक खेलते जाओ तभी फ़ायदा है, क्योंकि", जुआरी मुस्करा कर गीत गाने लगा—

"भगवान् की सेवा में मुझे सुख है,
और उसी की सेवा में मुझे मरना है।"

तीसरा दिन आया और सूर्य भगवान् ने सफ़ेद पुती घाटी के ऊपर उठ कर देखा कि निर्वासित जन-समुदाय ने अपनी कम होती हुई रसद में से सामग्री निकाल कर सुबह के खाने के लिये बाँट ली है। पहाड़ की जलवायु की यह विशेषता होती है कि किरणों में अजब सुख भरी गर्मी होती है, मानो पिछले दुःखों का पश्चात्ताप कर किरणें अब मुस्कराने निकली हों। पर उस दिन किरणों ने दिखाया कि झोपड़े के चारों ओर बर्फ़ के ढेर के ढेर जमा हैं—चिन्ह-हीन, मार्गहीन, बर्फ़ का उजाड़ सागर जिसमें आशा बिलकुल ही डूब गई है। शुद्ध, पवित्र वायुमंडल में दीखता था कि दूर बसे पोकर फ़्लैट से निकलते धुएँ की लकीर, आकाश में ऊँची उठ रही है। धुएँ की रेखा को मदर शिप्टन ने भी देखा और अपने अब बीहड़ निवास-स्थान से अन्तिम श्राप

उसकी ओर फेंक दिया। उसका यह अन्तिम श्राप था और शायद इसीलिये शब्द कुछ अधिक शिष्ट थे। इससे उसको कुछ शान्ति अवश्य मिली, क्योंकि जाकर उसने रानी को बताया—"वहाँ जाकर श्राप दो और देखो।" फिर वह 'बच्ची' पिनी से खेलने में व्यस्त हो गई। रानी और मदर दोनों ही पिनी को बच्ची कह कर पुकारती थीं। पिनी छोटी नहीं थी; परन्तु अशिष्ट भाषा उसके मुख से नहीं निकलती थी, इसलिये उसे बच्ची कह कर दोनों बड़ा सुख मानती थीं।

घाटी पर आक्रमण कर रात्रि ने जब फिर अधिकार जमाया, तो बाजे की दुःख भरी निःश्वास से भी व्यथित हृदयों को शान्ति न मिली। खाने की कमी के कारण जो दुख का वातावरण उत्पन्न हो गया था, उसे बाजे का संगीत भी दूर नहीं कर सकता था। पिनी ने समय काटने का नया उपाय निकाला—कहानी कहना। न तो मिस्टर ओकहर्स्ट और न दोनों स्त्रियाँ अपने निजी अनुभव सुनाने को तैयार थीं, इसलिये शायद यह उपाय भी असफल हो जाता। पर नादान ने हार नहीं मानी। कुछ महीने पहले उसने 'इलियाद' (यूनानी पौराणिक कथा) का मिस्टर पोप का अनुवाद पढ़ा था; उसके शब्द बिलकुल भूल गये थे, पर कथा याद थी, सो उसने उसे ही सुनाने का प्रस्ताव रक्खा। बस, बाक़ी रात भर यूनानी देवी-देवता केम्प में विचरण करते रहे। ट्रॉय का अन्यायी शासक यूनानी नायक से वायु में मल्ल-युद्ध करता रहा। चीड़ के वृक्ष पेलिअस के पुत्रों का झुक कर अभिवादन करते रहे। मिस्टर ओकहर्स्ट शान्त बैठा कथाएँ सुनता रहा। नादान ने जब 'द्रुतगामी आकील्स' का उच्चारण ऐशहील्स किया, तो जुआरी मुस्कराने लगा।

इसी प्रकार कम भोजन, किन्तु अधिक होमर (यूनानी कवि) तथा बाजे की सहायता से निर्वासित जनों के ऊपर एक सप्ताह निकल गया। सूर्य फिर मेघ-दल में छिप गया और आकाश में बादलों तथा बर्फ़ के गुच्छों का हुल्लड़ मच गया। धरती हिम से ढँकने लगी। प्रतिदिन

हिम का घेरा छोटे झोपड़े के निकट आने लगा। यहाँ तक कि बर्फ़ से घिरे अपने कारागार की बीस फुट ऊँची दीवार से वे देखने लगे कि सीमाहीन अपार हिमराशि चारों ओर सन्नाटा भरे पड़ी है। आग का जलते रखना और कठिन हो चला, क्योंकि पास के गिरे पेड़ भी आधे से अधिक बर्फ़ में दबे थे। तब भी किसी ने अपने दुर्भाग्य को नहीं कोसा। निराश दृश्य को देख कर प्रेमियों ने दृष्टि फेर ली और एक दूसरे के नेत्रों में देखने लगे। वे इसी में सुखी थे। मिस्टर ओकहर्स्ट ने प्रकृति के सामने पराजय स्वीकार कर ली और शान्तिपूर्वक हार मान कर बैठ रहा। रानी पहले से अधिक प्रसन्न दीखती थी; वह पिनी की देख-रेख करने में ही सुख पाती थी। केवल मदर शिप्टन ही जो पहले कभी दल में सब से बलवान थी, अब निर्बल और फीकी पड़ती जा रही थी। दसवें दिन आधी रात को उसने ओकहर्स्ट को अलग बुलाया। "मैं तो अब चली"; वह अशक्त स्वर में बोली, "पर किसी को इसके बारे में कुछ बताना मत। बच्चों को मत जगाना। मेरे सिरहाने से यह पुलिन्दा निकाल कर खोलो।"

मिस्टर ओकहर्स्ट ने गठरी खोली। उसमें मदर शिप्टन के हिस्से का पिछले सप्ताह भर का खाना रक्खा था, बिलकुल अछूता।

"इसे बच्ची को दे देना," सोती हुई पिनी की ओर इशारा कर वह बोली।

"तुम भूखी रह कर मर रही हो", जुआरी ने कहा।

"भूखों मरना ही शायद इसे कहते हैं।" काँपती हुई आवाज़ में उस नारी ने उत्तर दिया और ज़मीन पर पड़ कर, दीवार की ओर करवट ले, उसने शान्ति से प्राण त्याग दिये।

उस दिन बाजा और करताल अलग रख दिये गये और होमर भी नहीं सुना गया। मदर शिप्टन के शरीर को बर्फ़ में दफ़ना कर मिस्टर ओकहर्स्ट ने नादान को अलग बुलाया और एक पुरानी काठी

से स्वयं बनाये हुये बर्फ़ के जूते दिखाये। "केवल सौ में एक अंश आशा है कि उसे बचा सकते हो," पिनी की ओर दिखा कर वह बोला; "वह आशा वहाँ है," पोकर फ़्लैट की ओर इशारा कर के उसने कहा—"अगर तुम इन जूतों की सहायता से दो दिन में वहाँ पहुँच सकते हो, तो वह बच जायगी।"

"और तुम ?" टॉम सिम्सन ने पूछा।

"मैं यहीं रहूँगा।" अधिकारपूर्ण उत्तर उसने दिया।

प्रगाढ़ आलिंगन कर प्रेमी विदा हुये। रानी ने देखा कि मिस्टर ओकहर्स्ट खड़ा प्रतीक्षा कर रहा है। वह भयभीत होकर बोली—"तुम भी चले जा रहे हो ?"

"घाटी के इसी छोर तक, बस।" उसने उत्तर दिया। ओकहर्स्ट जल्दी से मुड़ा और रानी के कपोलों का चुम्बन कर उसके पीले मुख को झेंप और आश्चर्य से लाल बना, काँपता हुआ छोड़ कर, नादान के साथ चल दिया।

रात फिर आ गई, पर मि० ओकहर्स्ट नहीं लौटा। रात्रि के सहायक तूफ़ान और उछलते हुए बर्फ़ के टुकड़े फिर धावा बोल बैठे। आग पर लकड़ी रखते समय रानी ने देखा कि किसी ने चुपचाप झोपड़े के पास दो एक दिन और चलने लायक़ ईंधन जमा कर दिया है। उसकी आँखें सजल हो गईं, पर कठिनाई से चेष्टा कर आँसुओं को उसने पिनी से छिपाया।

दोनों अबलाओं को रात भर नींद नहीं आई। सुबह दोनों ने जब एक दूसरी के नेत्रों में दृष्टि डाल कर देखा, तो अपने भाग्य का अन्त लिखा पाया। दोनों कुछ बोलीं नहीं, पर पिनी ने सबल हो रानी को अपनी बाहुओं में समेट लिया। दिन भर इसी प्रकार दोनों सिमटी बैठी रहीं। रात होते-होते तूफ़ान भयानक हो उठा और टूटी हुई छत को उखाड़ कर झोपड़े पर क्रूर वार करने लगा।

सुबह होते-होते इतनी शक्ति नहीं रही कि आग पर ईंधन रख सकें। धीरे-धीरे आग बुझ गई। कोयले काले पड़ने लगे। रानी सिकुड़ कर पिनी के और पास आ गई और कई घंटों के सन्नाटे को तोड़ा : "पिनी, तुम प्रार्थना कर सकती हो ?"

"नहीं, रानी," पिनी ने सीधा-सादा उत्तर दिया। पता नहीं क्यों, रानी को तसल्ली हुई और वह पिनी के कंधे पर सिर टेक कर चुपचाप बैठी रही। इसी प्रकार, अपने पवित्र वक्षःस्थल पर छोटी, भोली युवती, बड़ी, पापिन बहिन का सिर सुलाये स्वयं भी सो गई।

वायु हलकी हो गई, मानो डरती हो कि दोनों जाग न जायँ। कोमल बर्फ़ के गुच्छे, डालियों से गिर-गिर कर श्वेत चिड़ियों के समान उड़ते फिरते थे और सोती हुई स्त्रियों पर जमा होते जाते थे। चन्द्रमा बादलों का आवरण हटा कर निर्वासित-जन समुदाय के डेरे को देख रहा था, किन्तु शुभ्र हिम की चादर ने दयार्द्र हो मनुष्य कृत कार्यों के सब चिन्हों, सब धब्बों को ढँक दिया था।

वे सारे दिन सोती रहीं और अगले दिन भी नहीं उठीं। जब पदध्वनि और मनुष्य स्वरों ने केम्प के सन्नाटे को तोड़ा, तब भी उनकी आँखें न खुलीं। जब जल्दी-जल्दी अँगुलियों ने बर्फ़ की तह हटाई, तो उनके चेहरों की स्निग्ध शान्ति देख कर वह नहीं बता सकते थे कि कौन पतिता थी और कौन निर्दोष। पोकर फ़्लैट के क़ानून बनाने वाले भी नहीं बता सकते थे और उन्हें एक दूसरे के अंक में लिपटी हुई छोड़ कर वे अलग हट गये।

किन्तु स्वर्ण घाटी के सिरे पर सब से बड़े चीड़ के वृक्ष के तने पर उन्हें एक चिड़ी का ग़ुलाम, चाक़ू के फल से गढ़ा मिला। उस ताश के पत्ते पर दृढ़ हस्तलेख में पेंसिल से यह लिखा हुआ था :—

इस पेड़ के नीचे—

जान आकहर्स्ट

का शरीर लेटा है।

जिसे २३ नवम्बर १८५० ई० को दुर्भाग्य ने घेरा और जिसने ७ दिसम्बर १८५० को अपने पत्ते भगवान् को दिखा दिये।

और वृक्ष के नीचे, बर्फ़ पर, छोटी-सी पिस्तौल के पास उसका निर्जीव शरीर पड़ा था, जो पोकर फ़्लैट से निर्वासित-जनों में सब से शक्तिवान्, किन्तु तब भी सब से निर्बल पापी था। उसके हृदय में गोली आर-पार निकल गई थी।

अमेरिका

मनुष्य और नाग

लेखक—एम्बरोज़ बीयर्स

'यह बात यथार्थ है, और इतने मनुष्य इसे प्रमाणित कर चुके हैं कि सन्देह के लिये तिल भर भी स्थान नहीं है कि सर्प की आँख में आकर्षण-शक्ति होती है और जो कुछ भी उसके प्रभाव में आ जाता है, अपनी इच्छा के विरुद्ध भी वह उसकी ओर खिंचा चला जाता है और दुःखद मृत्यु का भागी होता है।'

सोफ़े पर पैर फैलाये, ढीला पायंजामा पहिने, चप्पल चढ़ाये हार्कर ब्रेटन, मोरिस्टर की लिखी हुई प्राचीन पुस्तक 'विज्ञान के आश्चर्य' में ऊपर लिखा वाक्य पढ़ कर मुस्करा रहा था। "इसमें आश्चर्य की बात तो सिर्फ़ यही है," वह मन ही मन कहने लगा, "कि मोरिस्टर के ज़माने में, लोग ऐसी ऊल-ज़लूल बातों का विश्वास कर लेते थे, जिन्हें आज-कल का बेवकूफ़ से बेवकूफ़ आदमी भी न माने।"

विचारों का ताँता बँध गया। ब्रेटन बड़ा विचारशील व्यक्ति था और अनजान में उसने पुस्तक आँख के सामने से हटा ली; किन्तु देखता उधर ही रहा, जहाँ पहले किताब के अक्षर थे। पोथी के दृष्टि के सामने से हटते ही, उसकी नज़र कमरे के एक दबके हुये कोने में रक्खी एक चीज़ पर पड़ी, जिसके कारण उसे किताबी जगत् का ख़याल छोड़ कर, कमरे में सजे सामान पर ध्यान देना पड़ा। उसने देखा कि उसके पलंग के नीचे अँधेरे में प्रकाश के दो बिन्दु चमक रहे हैं—लगभग एक दूसरे से एक इञ्च की दूरी पर। लकड़ी में जड़ी हुई

दो कीलों के सिरे शायद कमरे के प्रकाश के कारण चमक सकते थे; उसने प्रकाश-बिन्दुओं की ओर से अपना ध्यान हटा कर पुस्तक में लगा दिया। क्षण भर बाद, पता नहीं क्यों, शायद अज्ञात प्रेरणा के कारण, उसने फिर पोथी नेत्रों के सामने से हटा ली और उसी ओर ताकने लगा। प्रकाश के दोनों बिन्दु अब भी वहीं थे। अब उनकी चमक पहले से तेज़-सी लगती थी—कुछ-कुछ हरापन लिये हुये एक आभा थी, जो उसने पहले नहीं देखी थी। उसे यह भी लगा कि प्रकाश-बिन्दु अपने स्थान से ज़रा हट गये हैं—कुछ, आगे आ गये हैं। फिर भी दोनों बिन्दु अभी तक वहीं अँधेरे में थे, इस कारण उनको पहिचानना कठिन था; इसलिए वह फिर किताब पढ़ने में लग गया। अचानक पोथी में लिखा कुछ पढ़ कर, उसको एक नया विचार आया जिसके कारण वह चौंक पड़ा और तीसरी बार पुस्तक हटा कर सोफ़े पर टेक दी, जहाँ से उसके हाथ से छूट कर वह फ़र्श पर औंधी गिर पड़ी। ब्रेटन आधा उठ खड़ा हुआ और उसी तरफ़ अपने पलंग के नीचे अँधेरे में घूरता रहा; उसे मालूम पड़ा कि प्रकाश बिन्दुओं की चमक और भी बढ़ गई है। उसका ध्यान अब उधर ही लगा था। उसका कौतूहल जाग्रत हो उठा था। उसकी दृष्टि उत्कंठा और जिज्ञासा से भरी थी। उसने देखा कि पलंग के ठीक नीचे पाये के पास एक बड़े साँप की कुण्डली पड़ी है—वे दोनों प्रकाश-बिन्दु इसी सर्प की आँखें थीं! उसका भयानक सिर, कुण्डली के भीतर से हो कर, बाहरी भाग के ऊपर से निकला हुआ सपाट टुकड़े के समान, उसी की ओर था; चौड़ा क्रूर जबड़ा था और नीचा छोटा माथा जिसकी दिशा बता रही थी कि सर्प की दृष्टि उसी की ओर लगी है। अब वे नेत्र केवल प्रकाश-बिन्दु ही नहीं थे; उनमें अब अर्थ-पूर्ण अशुभ दृष्टि थी, जो उसकी आँखों की ओर देख रही थी।

सौभाग्य से आधुनिक नगर के आधुनिकतम ढंग पर बने भवन

के कमरे में साँप का आ जाना ऐसी मामूली घटना नहीं है कि कैसे आया, यह बताने की आवश्यकता ही न आये। हार्कर ब्रेटन एक पैंतीस वर्षीय अविवाहित पुरुष था। वह अध्ययन आदि में आनन्द लेने वाला, किन्तु कुछ निठल्ला भी, खेल-कूद का शौक़ीन, अमीर, दोस्तों का प्यारा था और अब सेनफ्रांसिस्को में अनेक देश-विदेश घूम-घाम कर लौट आया था। वह अकेले घूमते रह कर उकता गया था और उसकी अमीरी आदतों आदि को 'केसिल होटल' भी पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं कर पाया था। इसीलिये वह अपने मित्र डाक्टर ड्रूरिंग के निमंत्रण पर, उनके यहाँ ठहरने को आ गया था। डा० ड्रूरिंग बड़े प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे और उनका मकान अब एक शहर के तनिक प्राचीन भाग में कुछ पुराने ढंग से सजा हुआ एक विशाल भवन था। मकान बाहर से देखने में रहस्यमय, गम्भीर और बन्द दीखता था। उसे देख कर नये चाल की उछल-कूद, खुशी-आनन्द के जीवन का भास नहीं होता था, वरन् एकान्त होने के कारण उसमें कुछ-कुछ फक्कीपने की-सी विशेषता आ गई थी। मकान का फक्कीपन एक 'हिस्से' के रूप में था, जिसका भवन-निर्माण-कला की दृष्टि से कुछ भी मूल्य न था और जिस काम में यह 'हिस्सा' लिया जाता था, वह भी उतना ही बेढंगा था। यह 'हिस्सा' प्रयोगशाला, अजायब-घर और चिड़ियाघर का विचित्र मिश्रण था। यहीं पर डाक्टर ड्रूरिंग अपनी वैज्ञानिक रुचि का प्रयोग और अपनी पसन्द के पशु जीवधारियों का अध्ययन करते थे—और यह बताते झेंप लगती है कि उनकी रुचि निम्न श्रेणी के जीवों में थी, जो अधिक फुर्तीले और चिकने-चपटे चलने वालों में से थे। अपने सर्पों और मेंढकों को वह 'उत्तम दैत्य' कहा करते थे। उनकी वैज्ञानिक रुचि सर्प-विशेष जन्तुओं की ओर झुकी थी। प्रकृति की निम्न रचनाओं को वह पसन्द करते थे और अपने को जीव-शास्त्र का 'ज़ौला' (फ्रान्स का प्रसिद्ध लेखक) कहा करते थे।

उनकी पत्नी और लड़कियों में उनकी-सी वैज्ञानिक जिज्ञासा नहीं थी और दुर्भाग्यवश दूसरी योनि में जन्म लेने वाले प्राणियों को वे लोग व्यर्थ की कुदृष्टि से देखती थीं और इसी कारण डाक्टर की सर्प-शाला से अलग रक्खी जाती थीं। उन्हें शान्त करने के निमित्त डाक्टर ने उन्हें काफी रुपया दे रक्खा था कि अपने 'हिस्से' को जिस तरह मन में आये, बढ़िया से बढ़िया सजा लें।

भवन-निर्माण-कला की दृष्टि से, सजावट के रूप में, सर्पशाला सर्वथा सादी थी। यह सादापन निम्न श्रेणी के प्राणियों के योग्य भी था, क्योंकि उनमें से बहुतेरे ऐसे थे जिनको अमीरी ठाठ से रखना उनको अधिक स्वतंत्रता देना होता और उनका पाप यह था कि वे जीवित थे। अपने खानों में और कमरों में ये प्राणी, इतनी मात्रा में स्वाधीन रक्खे जाते थे कि आपस में एक दूसरे को निगल जाने की बुरी आदत को काम में न लाने लगें। और ब्रेटन को यह बताया भी गया था कि कभी कुछ साँप ऐसी जगहों में पाये गये थे (दूसरे साँपों के पेट में) कि अगर उनसे पूछा जाता कि यहाँ कैसे आये, तो ज़रा झेंप कर दाँत निकाल देते, कुछ कहते न बनता। सर्पशाला और उसके विचित्र निवासियों के होते हुये भी ब्रेटन को कभी तक-लीफ़ नहीं हुई थी, क्योंकि कभी उसने उनकी तरफ़ ध्यान ही नहीं दिया था—और वह डा० ड्रूरिंग के घर में आराम से जीवन व्यतीत कर रहा था।

नाग को पलंग के नीचे एकाएक देख कर ब्रेटन पर कुछ आश्चर्य और कुछ घृणा के अतिरिक्ति और कुछ प्रभाव नहीं हुआ था। उसने पहले विचारा कि घंटी बजा कर नौकर को बुलाये; पर घंटी का बटन हाथ के पास होते हुये भी उसने हाथ नहीं बढ़ाया। उसे यह ख्याल हो आया था कि ऐसा करना यह दिखलायेगा कि वह डर गया है। और वास्तव में उसे उस समय किसी भी तरह का भय नहीं मालूम पड़ रहा

था। उसे सर्प से डर के बजाय यह बात अधिक खल रही थी कि इस प्रकार क्यों यह जानवर यहाँ आ गया; सारी बात बेढंगी थी और घृणास्पद भी।

किस जाति का साँप है, यह ब्रेटन नहीं जानता था। उसकी लम्बाई का वह केवल अनुमान ही लगा सकता था। साँप का जो भाग दीखता था, उसमें सब से मोटा हिस्सा कलाई से डेढ़ गुना मोटा दिखाई देता था। अगर किसी प्रकार यह सर्प खतरनाक है, तो किस प्रकार है? क्या ज़हरीला है; क्या अजगर की जाति का है? प्रकृति की भयानक कृतियों को देख कर वह उनकी जाति आदि नहीं बता सकता था। पशु-शास्त्र का उसे इतना ज्ञान न था। उसे कभी इनसे भय नहीं लगा।

अगर वह खतरनाक नहीं था, तो कम से कम आक्रमणकारी अवश्य बन सकता था। उसकी पहली बेहूदा हरकत यही थी कि इस प्रकार कमरे में एक भले मानुस को परेशान करने घुस आया था—यह सरासर बदतमीज़ी थी। अगर यह सर्पशाला का रत्न था, तो इस समय इस सजावट के साथ भला नहीं दीख रहा था। हमारे देश और समय के आधुनिक, किन्तु जंगली रुचि के अनुसार भी, दीवारों पर तस्वीरों आदि के लदे रहने पर भी और फ़र्श पर लकड़ी के सामान आदि के बिखरे रहने पर भी, वन के इस बनैले प्राणी की शोभा इस कमरे में न थी। और फिर कैसा भयानक विचार है! इस क्षुद्र प्राणी की विषैली श्वास-वायु हवा में मिल रही थी जिसे उसे भी साँस के साथ अन्दर खींचना पड़ रहा था।

ऐसे ही विचार ब्रेटन के दिमाग़ में जड़ पकड़ते गये और कार्य में परिणत होने की चेष्टा करने लगे। इस प्रकार कार्य को हम लोग विचार और निर्णय का फल बताते हैं। इसी प्रकार हम लोग बुद्धिमान् अथवा मूर्ख कहलाते हैं; इसी प्रकार एक सूखा पत्ता अपने साथी सूखे पत्तों से

अधिक अक्लमन्द होता है कि या तो वह धरती पर गिरे या झील के पानी में। मनुष्य के कार्यों के रहस्य बहुत साधारण हैं—स्नायु खिंचने लगते हैं और काम शुरू हो जाता है। अगर हम प्रारम्भिक परमाणु-परिवर्तन को ही इच्छा [illegible] ना [illegible]

ब्रेटन उठ खड़ा हुआ। और बिना साँप को तंग किये, चुपचाप पीछे खिसक चलने का, [illegible]द सम्भव हो तो दरवाज़े में से हो कर, उपक्रम करने लगा। बड़ों के सामने से लोग इसी प्रकार हट चलते हैं, क्योंकि बड़प्पन ही शक्ति है और शक्ति ही भय है। वह जानता था कि वह बिना टकराये पीछे चल सकता था और फिर बिना कठिनाई के द्वार टटोल सकता था। अगर नाग ने पीछा किया, तो दीवार पर जिस रुचि ने तस्वीरें आदि टाँग रक्खी थीं, उसी के द्वारा टाँगे हुए पूर्वदेशीय हत्याकारी हथियारों के संग्रह से अवसर के अनुसार वह झट से एक उतार कर रक्षा कर सकता था। सर्प के नेत्रों में अब भी वही क्रूर, अशुभ दृष्टि जल रही थी।

ब्रेटन ने दायाँ पैर पृथ्वी से ऊपर उठा लिया कि एक पग पीछे ले ले। उसी क्षण उसे ऐसा करते हिचक होने लगी।

"मैं तो बहादुर कहाता हूँ," वह मन ही मन कहने लगा—"तो क्या बहादुरी केवल घमंड ही घमंड है ? अगर इस समय मेरी भगदड़ देखने वाला कोई नहीं है, तो क्या इसीलिये पीछे भाग चलूँ ?"

अपना पैर अब भी ऊपर उठाये दायें हाथ से कुरसी थामे वह सहारा लिये खड़ा था।

"उँहुँ", वह ज़ोर से बोला, "मैं इतना कायर नहीं हूँ कि डरने लगूँ।"

उसने घुटना झुका कर अपना पैर ज़रा और ऊपर उठाया और फिर फट से फ़र्श पर रख दिया—दूसरे से एक इञ्च आगे! उसकी समझ में नहीं आया कि यह कैसे हुआ। उसने अपना बायाँ पैर उठा

कर देखा और वही फल हुआ; दायें के एक इञ्च आगे यह भी पड़ा। हाथ से वह अब भी कुरसी पकड़े था; बाँह सीधी थी और कुछ ज़रा पीछे की ओर थी। अगर कोई देखता तो यही कहता कि वह कुरसी छोड़ना नहीं चाहता था। साँप का विषाक्त सिर अब भी भीतरी कुण्डली से पहले की ही तरह निकल रहा था। वह अपने स्थान से हिला न था; किन्तु अब उसकी आँखें विद्युत् किरणों-सी फेंकती मालूम पड़ती थीं, मानो अनगिनती चमकदार सुइयाँ निकल रही हों।

उस का रंग पीला फीका पड़ता जा रहा था। उसने एक पग आगे फिर बढ़ाया और फिर दूसरा। वह अपने साथ कुरसी भी घसीटे ला रहा था, जो हाथ से छूटते ही धड़ाम् से फर्श पर जा गिरी। मनुष्य कराहा। सर्प ने न तो शब्द किया और न हिला; पर उसकी आँखें अब दो चकाचौंध करने वाले सूर्यों के समान थीं। नाग स्वयं उन दोनों सूर्यों के पीछे छिपा मालूम पड़ता था। आँखों के सूर्यों से अब रंग-बिरंगे प्रकाश के घेरे में बढ़ते हुये वृत्त निकल रहे थे, जो एक के बाद एक ख़ूब बढ़ कर साबुन के बबूले के समान हवा में मिल जाते थे। उसे लगता था कि ये रंगीन वृत्त उसके मुख को छू रहे हैं; दूसरे ही क्षण लगता कि बहुत दूर, अनन्त में चले गये हैं। कहीं से नगाड़े का धमाधम शब्द लगातार आने लगा; बहुत दूर से आती हुई मधुर संगीत-लहरी की ध्वनि वह सुनने लगा। उसने पहिचान लिया कि यह संगीत मेमनन की मूर्त्ति के लिये सूर्योदय का गान था। वह सोचने लगा कि वह नील नदी के विशाल तट पर सरकंडों के बीच में खड़ा है और पुलकित हो शताब्दियों के सन्नाटे को तोड़ कर इस स्वर्गीय संगीत को सुन रहा है।

संगीत रुक गया या यों कहिये कि शनैः-शनैः अनजान में दूर से आते हुए तूफ़ान के मेघ-गर्जन में बदल गया। उसके सामने दृश्य था कि सूर्य के तेज़ प्रकाश में वर्षा की झड़ी लगी है और रंगीन इंद्र-धनुष अपनी विशाल गोद में सैकड़ों नगरों को सजाये है। बीचोंबीच

में एक वृहत्-काय नाग है जिसके सिर पर ताज रक्खा है। नाग के नेत्रों के स्थान पर ब्रेटन की मृत माता की आँखें चमक रही हैं; विशाल कुण्डलियों में से उसे ताक रही हैं। एकाएक यह लगा कि यह सुन्दर दृश्य अदृश्य हो गया; तेज़ी से ऊपर उठ कर ग़ायब हो गया, मानो नाटक का पर्दा गिर गया हो और फिर सब काला हो गया। कोई चीज़ उसके सिर और सीने पर बड़े ज़ोर से लगी। वह फ़र्श पर गिर पड़ा था; उसके कटे ओठ और फूटी नाक से ख़ून बह रहा था। एक क्षण के लिये वह हक्का-बक्का हो गया और वहीं आँखें बन्द किये फ़र्श पर पड़ा रहा। कुछ ही देर बाद उसके होश-हवास वापस आ गये; उसे तब यह मालूम पड़ा कि गिरने से दृष्टि उसकी घूम गई और वह नाग की मोहिनी शक्ति से बच कर निकल आया। उसने अनुभव किया कि अब दृष्टि दूसरी ओर जमा कर वह नाग के फंदे से निकल जायगा; अब वह बिना किसी हिचकिचाहट के पीछे हट सकता है। पर यह भीषण विचार कि साँप उसके सिर के ही पास अब अदृश्य बैठा था—शायद इसी क्षण उसके ऊपर आक्रमण करने वाला है, आकर गरदन के चारों ओर लिपट कर दबोचने वाला है—उसे यन्त्रणा देने लगा। उसने सिर उठाया, उन मन्त्र-मुग्ध करने वाले उज्ज्वल नेत्रों में देखा और फिर नाग की मोहिनी शक्ति में बन्दी हो गया।

साँप अब भी नहीं हिला था और शायद अब मनुष्य की कल्पना-शक्ति पर उसका प्रभाव भी कम हो गया था; क्षण भर पहले के रंगीन दृश्य दुबारा सामने नहीं आये। चपटी, मस्तिष्कहीन भौंहों के नीचे चमकती आँखें केवल प्रकाश के दो बिन्दु रह गई थीं; पहले की तरह, भाव वही अशुभ, विषैला, अमानुषिक। यह प्रतीत होता था कि नाग ने अपनी विजय मुट्ठी में देख सम्मोहिनी शक्ति हटा ली थी।

अब बड़ा भयानक दृश्य प्रारम्भ हुआ। मनुष्य ने धरती पर पड़े शत्रु से केवल एक गज़ दूर, अपना शरीर कुहनियों के बल उठाया,

सिर उठा कर पीछे किया और पैर पूरे फैला दिये। वक्ष के धब्बों के बीच में उसका चेहरा सफ़ेद था। उसकी आँखें फैल कर फटी पड़ती थीं। उसके ओठों पर झाग था और धीरे-धीरे पृथ्वी पर टपक रहा था। रह-रह कर उसका शरीर बड़े ज़ोर से थर्रा रहा था, बिलकुल सर्प के समान हिलने की कँपकँपी छूट रही थी। वह कमर से झुका और पैर इधर-उधर अदल-बदल करने लगा। हर बार हिल कर वह सर्प के पास खिसकने लगा। शरीर को सम्हालने के लिये उसने हाथ आगे कर दिये, पर कुहनी के बल आगे बढ़ता ही रहा।

डाक्टर डूरिंग अपनी पत्नी के साथ अपने पुस्तकालय में बैठे थे। वैज्ञानिक उस दिन बड़े हँस-मुख स्वभाव में थे।

"एक दूसरे संग्रहकर्ता से अदला-बदली कर अभी बड़ा सुन्दर 'ओफ़ियोफ़ागस' का नमूना पाया है।" वह बोले।

"और यह क्या बला होती है?"—उनकी पत्नी ने ज़रा बेमन से पूछा।

"अरे वाह, तुम भी कैसे नादान हो? सुन लो! अगर शादी के बाद मर्द यह जान पाता है कि उसकी पत्नी यूनानी भाषा नहीं जानती, तो उसे तलाक़ मिल जाना चाहिये। 'ओफ़ियोफ़ागस' एक ऐसा साँप होता है, जो दूसरे साँपों को खा जाता है।"

"उम्मीद है कि यह साँप तुम्हारे बाक़ी साँपों को भी खा जायगा,"- वह लैम्प सरकाती हुई बोली, "पर दूसरे साँपों को पकड़ता कैसे है! उन्हें मोहिनी-शक्ति डाल कर खींचता है, क्यों?"

"फिर वही बात," डाक्टर बनावटी आज़िज़ी दिखाते हुए बोले, "तुम जानती तो हो कि साँप की सम्मोहिनी-शक्ति आदि की चोंचपने की बातों से मुझे चिढ़ है।"

एक हृदय-द्रावक चीख़ ने सन्नाटा तोड़ कर उनकी बात-चीत में विघ्न डाल दिया, मानो कोई दैत्य कब्र में से आर्त्तनाद कर रहा हो।

दो बार वही चीख फिर आई—साफ़ तीखी, भयातुर। दोनों उछल कर खड़े हो गये—डाक्टर बदहवास, उनकी पत्नी भय से पीली और गुमसुम। चीखों की प्रतिध्वनि दबी ही थी कि डाक्टर कमरे के बाहर थे और दो-दो सीढ़ी का ज़ीना फाँद रहे थे। दहलान में ब्रेटन के कमरे के सामने उन्हें ऊपर से दौड़ कर आये हुए नौकर मिले। दरवाज़ा बिना खटखटाये सब के सब अन्दर धँस पड़े। किवाड़ लगे न थे, धक्का पाते ही खुल पड़े। ब्रेटन पेट के बल फ़र्श पर मरा पड़ा था। पलंग की चौखट के भीतर उसके सिर और हाथ कुछ-कुछ छिपे थे। उन्होंने शव को खींच कर निकाला और पलट दिया। चेहरा खून और झाग से रँग कर विकृत हो रहा था; आँखें फैल कर निकली पड़ती थीं; दृष्टि जमी थी—बड़ा वीभत्स दृश्य था!

"दौरे से मर गया।" वैज्ञानिक ने झुक कर दिल पर हाथ रख कर कहा। वैसे ही झुके-झुके उसने पलंग के नीचे देखा। "अरे भगवान्!" वह कह उठा, "यह यहाँ कैसे आ गया!"

पलंग के नीचे हाथ बढ़ा कर उसने साँप को खींच लिया और वैसा ही लिपटा-लिपटाया उठा कर कमरे के बीच में फेंक दिया। खड़-खड़ कठोर शब्द होता हुआ नाग का शरीर चमकदार फ़र्श पर फिसलता चला गया और दीवार से रुक कर निश्चल पड़ा रहा। भूसे से भरा साँप का मरा शरीर था; उसकी आँखें शीशे के दो छोटे-छोटे बटन थे।

अमेरिका

पर-स्त्री

लेखक—शेरवुड एण्डर्सन

"मैं अपनी स्त्री को प्यार करता हूँ।" उसने कहा। मैं आश्चर्य में था कि बग़ैर बूझे और बिना किसी सम्बन्ध के उपर्युक्त वाक्य कहने का क्या अर्थ है? हम पाँच-दस मिनट और चले होंगे कि उसने फिर दोहराया, "मैं अपनी स्त्री को प्यार करता हूँ।" मैंने आश्चर्य-सूचक नेत्रों से उसकी मुखाकृति को देखा। उसने भी मेरा मनोगत भाव समझ कर निम्न वार्त्ता प्रारम्भ की।

यह घटना उसके जीवन के मुख्यतम सप्ताह में हुई। उसका विवाह शुक्रवार के सायंकाल को निश्चित हुआ था। ठीक एक सप्ताह पहले—शुक्रवार के दिन—उसे तार मिला कि एक ऊँचे सरकारी ओहदे पर उसकी नियुक्ति हो गई है। कुछ और भी हुआ जिससे उसको अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त हुई। वह कभी-कभी एकान्त में कविता किया करता था। उसकी कुछ कवितायें गत वर्ष प्रकाशित भी हुई थीं। एक सभा प्रतिवर्ष सर्वोत्तम कवि को पुरस्कार देती थी। इस वर्ष उसकी लिस्ट में सर्व प्रथम नाम उसी का था। और इस विषय की चर्चा उसके ग्राम में भी हुई थी। एक पत्रकार ने उसका चित्र भी प्रकाशित किया था।

जैसी कि आशा थी, उसका हृदय अत्यंत प्रफुल्लित था और उसे एक विचित्र उत्तेजना का अनुभव होता था। प्रायः प्रतिदिन सायंकाल वह अपनी प्रेयसी—भावी पत्नी, जो कि एक जज की कन्या थी—के

घर जाया करता था। आज जब वह पहुँचा, तो वहाँ अनेक पत्र, तार और अन्य पुरस्कार-सामान आये हुये थे। वह एक किनारे खड़ा हुआ था। अनेक स्त्री-पुरुष उसके समीप आये। उन्होंने उसे सरकारी नौकरी मिलने तथा कविताओं के लिये इनाम पाने पर बधाइयाँ दीं। प्रत्येक उसकी प्रशंसा के पुल बाँध रहा था। उस रात जब वह लौटा तो उसे नींद न आई। अगले दिन जब वह एक नाटक देखने गया, तो उसे ऐसा प्रतीत हुआ, मानो प्रत्येक दर्शक उसी की ओर देख रहा रहा है। जिस समय "इण्टर्वल" (मध्य-अवकाश) का पर्दा गिरा तो आठ-दस पुरुष और पाँच-सात स्त्रियाँ उसकी कुरसी के समीप आईं और बधाई देने लगीं। आसपास बैठे हुये दर्शक भी गरदन झुका कर उसकी ओर देखने लगे। उसने आज तक कभी इतना सम्मान न प्राप्त किया था। आज पहली बार उसकी गरदन गर्व से तन गई।

रात में जब वह लौटा तो उसके पैर ज़मीन पर न पड़ते थे। वह खाट पर लेटा, परन्तु नींद कहाँ ? आँखें बन्द करने पर भी उसे चारों ओर आदमी दिखाई दिये जो उससे हाथ मिलाने के लिये उत्सुक थे। लेटे-लेटे उसकी कल्पना-शक्ति दौड़ने लगी। उसे मालूम हुआ कि मानो वह एक सुशोभित गाड़ी में बाजार से गुज़र रहा है। घरों की खिड़कियाँ खुली हुई हैं और लोग एक दूसरे को अँगुली से दिखला रहे हैं, "वह है। वह जाता है।" बाजार में बड़ी भीड़ है। गाड़ी जा रही है और हजारों आँखें उसकी ओर देख रही हैं, मानो कह रही हैं, "तुम महान् पुरुष हो। कितने शीघ्र तुम्हें पद और प्रतिष्ठा दोनों प्राप्त हो गये हैं !"

नींद न आने के कारण वह उठ बैठा और अपने संभ्रान्त विचारों को एकत्रित करने लगा। उसके शयनागार के सामने वृक्षों की पंक्ति थी जिसके पीछे एक बरसाती नाला सद्यःप्राप्त ऐश्वर्य के समान निरंकुश हो उछल-कूद मचा रहा था। उसे उसमें अपना प्रतिबिम्ब

दिखाई दिया। उसने चाहा कि वह शीत-ऋतु की शान्ति-वाहिनी नदी-धारा का रूप धारण करे। उसने एक विषय पर मन को केन्द्रित करना चाहा। वह विषय था, शीघ्र ही आनेवाला उसका विवाह-नाटक तथा उसकी नायिका—पत्नी। चाँदनी रात थी। शीतल, सुगन्धित वायु मन्थर गति से बह रही थी। उसने अपने भविष्य की सुखद कल्पना का चित्र खींचना चाहा और उसने प्रयत्न किया कुछ नवीन कविता-निर्माण का, जो सोहाग-रात में वह अपनी प्रेयसी को सुनाना चाहेगा। परन्तु आश्चर्य यह कि इतने प्रयत्न के अनन्तर भी उसका चित्त एक विषय पर न टिक सका।

उस गली के नाके पर एक तम्बोली की दुकान थी जहाँ चालीस वर्ष का एक अधेड़, मोटा आदमी बैठता था। उसके व्यापार में उसकी स्त्री भी कभी-कभी सहायता करती थी। उसकी स्त्री बहुत ही साधरण रूप-रंग की थी, इसे उस कवि ने अनेक बार ज़ोर दे-देकर कहा। परन्तु न जाने क्यों उस दुकान पर जाते और तम्बोलिन को देखते ही उसका मन व्याकुल होने लगता था। उसकी आँखें ऊपर न उठती थीं और ज़बान पर तो मानो भारी पत्थर पड़ गया हो। अन्तिम सप्ताह में तम्बोलिन ने उसके जीवन में विशेष भाग लिया। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो उसका तम्बोलिन से प्रेम-सम्बन्ध हो गया है।

मुझे कहानी सुनाते हुए उसने कहा, "मैं परेशानी में था। आधी रात के समय जब कि सारी दुनिया सो रही थी, मैं बेचैन था। रह-रह कर वह तम्बोलिन मेरे विचारों में आती थी। दिन में भी यही हालत रही। शाम के समय जब मैं अपनी भावी पत्नी के घर गया, तो मुझे इस "पर-स्त्री" के आने से अपने सम्बन्ध में कुछ भी अन्तर न दिखाई दिया। हाँ! यद्यपि मैं अपनी भावी-पत्नी को ही अपनी एकमात्र जीवन-सहचरी बनने के योग्य समझता था, परन्तु उस तम्बोलिन को भी बाहुपाश में लेने की प्रबल इच्छा थी, इससे मैं इन्कार नहीं कर सकता।

जिस रात को मैं थियेटर देखने गया, उस रात वापसी पर उसी तम्बोलिन के रास्ते से लौटा। देखा, दुकान बन्द है और गली में अँधेरा है। मैं खड़ा हो गया। दुकान के ऊपर के भाग में रोशनी थी। वहीं तम्बोलिन अपनी गृहस्थी करती थी। अचानक मुझे उसके मोटे पति का स्मरण आया। और उस रात्रि की निस्तब्धता में मन कुछ और आगे बढ़ा। मैंने देखा कि कमरे के एक ओर खाट बिछी है, जिस पर तम्बोलिन लेटी है और वह मोटा आदमी उसके पास आकर अत्याचार कर रहा है। मुझे क्रोध आया।"

"फिर मुझे अपने से घृणा होने लगी। मैं अपने कमरे में जाकर बिस्तर पर लेट गया और साथ मेज़ पर पड़ी कविता की पुस्तकों के पन्ने उलटने लगा। परन्तु उस समय न जाने क्यों किसी भी कवि की कविता हृदय में प्रवेश न पा सकी। केवल एक ही विचार था और वह था उसी तम्बोलिन का। उसी का चित्र मानसिक चक्षु-पट पर निरन्तर घूम रहा था। मैंने कई करवटें बदलीं। निद्रा लाने का प्रयत्न किया, परन्तु बेचैनी अज़हद थी।"

"बृहस्पतिवार को सवेरे मैं तम्बोली की दूकान पर गया। वहाँ उसकी स्त्री अकेली थी। मेरा ख्याल है कि उसे मेरे विचारों का पता था। और शायद वह भी मेरी ही तरह बेक़रार हो। उसके पतले ओठों पर हलकी मुस्कराहट थी। उसने एक सस्ते कपड़े की पोशाक पहिनी थी जो कंधे के पास कुछ फटी हुई थी। ज़रूर वह उम्र में मुझसे दस साल बड़ी होगी। जब मैं सिगार लेकर पैसे देने लगा, तो मेरा हाथ काँप गया और पैसे झनझन करते हुए ज़मीन पर गिर पड़े। जब मैंने बोलना शुरू किया, तो मेरी आवाज़ गले के अन्दर से निकलती मालूम हुई। मुश्किल से मैं दबी ज़बान कह सका, "मैं तुम्हें चाहता हूँ। मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। क्या तुम यहाँ से भाग नहीं सकतीं? शाम को सात बजे मेरे मकान पर आओ।"

"वह स्त्री ठीक सात बजे मेरे घर पर आई। उस सवेरे उसने कुछ भी नहीं कहा। शायद एक मिनट तक हम चुपचाप एक दूसरे को देखते रहे। मैं दुनिया में सब कुछ भूल चुका था, सिवाय उसके। तब उसने अपना सिर हिलाया और मैं चला गया। अब जब कि मैं यह घटना कह रहा हूँ, मुझे उसका एक भी शब्द याद नहीं। वह सात बजे मेरे मकान पर आई। अँधेरा हो चुका था। मैंने लेम्प नहीं जलाया था और अपने नौकरों को रवाना कर चुका था।"

× × ×

"उस दिन कई दोस्त आये। उन्होंने कई चर्चाएँ छेड़ीं। परन्तु मेरा दिमाग़ ही ठिकाने न था। मैं न जाने क्या-क्या असम्बद्ध बोलता रहा। उन्होंने शायद यह समझा कि मैं नज़दीक आई हुई शादी की मस्ती में अपना होशहवास खो बैठा हूँ।

"विवाह से ठीक एक दिन पहले मुझे अपनी प्रेयसी—भावी पत्नी का पत्र मिला। पिछली रात उसे भी नींद नहीं आई थी और उसने जाग कर यह लम्बा पत्र लिखा था। जो कुछ उसने लिखा था, सत्य था चुभने वाला था, प्रभावशाली था। परन्तु उसकी मूर्त्ति ओझल हो गई थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो वह उस पक्षी के समान है, जो सुदूर नील आकाश में बादलों की तहों में घूम रहा है और मैं नीचे ज़मीन पर खड़ा, सिर उठा कर उसे देखने का प्रयत्न कर रहा हूँ। मुझे सन्देह है कि तुम मेरा भाव समझ भी सकोगे।

"चिट्ठी में उसने अपना हृदय खोल कर रख दिया था। वह भी रात को बिस्तर पर बेकरार पड़ी थी। उसे भी मेरी तरह भविष्य की चिन्ता सता रही थी। वह भी भविष्य-स्वप्न देखने का प्रयत्न कर रही थी। वह उठी और काग़ज़ पर कलम से, अपने फिरते विचारों को एक जगह बटोरने लगी। उसकी चिट्ठी प्रेम-रसपूर्ण थी। उसकी भाषा मुहावरेदार और भाव भी तदनुकूल थे। उसने लिखा था—'विवाह के बहुत समय

बाद हम भूल जायँगे कि हम पति-पत्नी थे। तब हम मात्र सामान्य मनुष्य रह जायँगे। याद रखना कि मैं संसार से सर्वथा अपरिचित हूँ और सम्भव है कि कभी-कभी मेरा व्यवहार तुम्हें अनुचित प्रतीत हो; परन्तु फिर भी मुझ से नाराज़ न होना—मुझ से प्रेम करना। जब बड़ी हो जाऊँगी और तुम्हारे सहवास से अनुभव सीख लूँगी, तब मैं अपनी पिछली कमियों का बदला मय सूद के चुका दूँगी। मैं तुमसे अत्यधिक प्रेम करूँगी। इसका हमें भरोसा है, नहीं तो मैं तुमसे विवाह करने का अनुरोध ही न करती। कभी-कभी भय लगता है कि तुम मुझसे नाराज़ न हो जाओ...। परन्तु नहीं, नहीं; मुझे विवाह के समीप आने की अत्यन्त प्रसन्नता है।'

"अब तुम मेरी विवशता का अनुमान कर सकते हो। आफ़िस में यह चिट्ठी पढ़ने के बाद, मेरे हृदय में एक प्रकार की शक्ति का अनुभव हुआ। मुझे अपनी भावी पत्नी के प्रेमातिरेक को देख कर ढाढ़स मिला। मैंने झटका देकर पुराने कुत्सित विचार को बहिष्कृत करने का प्रयत्न किया। ऐसा प्रतीत हुआ मानो मुझ में नवीन शक्ति आ गई। मुझे निश्चय हो गया कि मैं अपनी भावी पत्नी के चारित्र्य-बल से इस पर-स्त्री-प्रलोभन को दूर भगा दूँगा। मैंने टेलीफ़ोन उठाया और घर से 'कनेक्शन' करके अपने नौकर को सुनने के लिए कहा। आज सुबह मैं उससे कह आया था कि शाम को उसके घर पर आने की कोई ज़रूरत नहीं है। परन्तु अब उसे शाम तक ठहरने के लिए हुक्म देने का निश्चय किया। मगर टेलीफ़ोन पर बोलते-बोलते रुक गया। विचार उठा, यदि वह घर पर रहा, शाम को वह आई तो विवाह से एक रात पहले मेरे घर पर-स्त्री देखकर उसके हृदय में क्या-क्या विचार उठेंगे। यह सोचकर टेलीफ़ोन लटका दिया और शाम के समय क्या होगा, वह आयेगी, उसे जाने के लिए कैसे कहूँगा, इत्यादि प्रश्न एकाएक दिमाग़ में मँडराने लगे।

"वह स्त्री आई। ठीक सात बजे थे। अक्टूबर के अँधेरे सायंकाल में मैंने उसे आने दिया। मैं दिन की प्रतिज्ञा भूल चुका था। दरवाज़े पर घंटी लगी थी, उसने वह नहीं बजाई। केवल द्वार को धीरे से खटखटाया। मुझे उस दिन उसकी प्रत्येक क्रिया में कोमलता और दृढ़ निश्चय दिखाई दिया। जब वह आई तो मैं भीतर के दरवाज़े में खड़ा था। आध घण्टे से ऐसे ही सड़क पर आँखें बिछाये प्रतीक्षा कर रहा था। मेरे हाथ इस समय भी वैसे ही काँप रहे थे जैसे कि प्रातःकाल उसकी दुकान पर पैसे देते समय। दरवाज़ा खोला। वह अन्दर आई और मैंने अपने बाहुपाश में उसका स्वागत किया। हम अँधेरे में देर तक इकट्ठे रहे। मेरे हाथ अब नहीं काँपते थे। मैं बहुत स्वस्थ और प्रसन्न था।

"यद्यपि मैंने सब मामला साफ़ करने की कोशिश की है; परन्तु मैंने अपनी स्त्री के विषय में बहुत कम कहा है। पर-स्त्री का ही वर्णन किया है। परन्तु इतना तुम्हें विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं अपनी पत्नी से अत्यधिक प्रेम करता हूँ, लेकिन ऐसा कहने का मतलब? मुझे भय है कि मैंने यह चर्चा करके व्यर्थ तुम्हें सन्देह का अवसर दिया है। तुम ज़रूर समझते होगे कि मैं उस तम्बोलिन को प्यार करता हूँ। सत्यता इसमें है कि मैं अपनी स्त्री को ही अधिक प्यार करता हूँ। मानता हूँ कि विवाह से एक सप्ताह पूर्व इस तम्बोलिन के विचार ने मुझे पागल बना दिया था; परन्तु उस दिन शाम को मिलने के बाद से वह सर्वदा के लिए मेरे हृदय-पट से विलीन हो गई है।

"उसी रात को मैं अपनी भावी पत्नी से मिलने गया। पर-स्त्री साथ न थी; परन्तु भाव-शरीर में उसका सम्पर्क, वह आनन्द और मिलन सब प्रमुख रूप से मेरे हमराह थे। मैं उसके मकान पर पहुँचा। मित्र तथा बन्धु आ जा रहे थे। मेरे पहुँचते ही उसकी नज़र पड़ी। स्वागत के लिए किसी अज्ञात-शक्ति से खिंची हुई वह आगे आई। 'ओह! मैं

बहुत प्रसन्न हूँ। तुमने मुझे ठीक समझा है। मुझे भय था कि कहीं तुम मेरे पत्र का कोई और आशय न निकालो। हम दोनों, दो सजीव व्यक्ति—इकट्ठे होंगे। केवल पति-पत्नी ही नहीं।' उसने कहा।

"मैंने कहा है, 'उस दिन के बाद से फिर मैंने पर-स्त्री का ध्यान नहीं किया।' यह अंशतः सच है, क्योंकि कभी-कभी शाम के समय जब मैं बाग़ में घूमता रहता हूँ और सूर्य की अन्तिम किरणें पश्चिमीय आकाश में अपनी रंगीन प्रतिच्छाया फेंकती हैं और उत्तर की सुहावनी वायु मन्द गति से बहने लगती है, तो मेरा शरीर हठात् रोमांचित हो जाता है और चञ्चल मन लगामें तोड़कर भागना चाहता है। उस समय—मुझे उसकी याद आती है, अन्यथा जब से मेरा विवाह हुआ है, मैं पर-स्त्री को सर्वथा भूल गया हूँ। उस मार्ग से भी नहीं जाता, क्योंकि मैं अपनी पत्नी के अखण्ड विश्वास को तनिक भी आघात नहीं पहुँचाना चाहता।

"तुम जानने हो, मैं विवाहित हूँ। मेरी स्त्री सुन्दर है; सर्व गुण-सम्पन्न है; स्वभाव की सीधी है। मेरी समस्त आशाओं का केन्द्र है। मैं उसे प्यार करता हूँ और उसके अतिरिक्त अन्य किसी को नहीं चाहता। मैंने सब पुरानी बातों को गहरे गढ़े में गाड़ दिया है। आज तुम्हें भूली बात सुनाकर उसके गुप्त चिह्न को भी मिटा देने की इच्छा है। परन्तु इस चर्चा से कहीं मुरझाई बेल फिर तो न हरी होगी? नहीं, कभी नहीं। आज अन्तिम बार वह मेरे विचारों में उठेगी। रात को जब सब सो जायँगे, मेरी स्त्री भी साथ के कमरे में सोती होगी, दरवाज़ा खुला होगा और चन्द्रमा की शीतल चाँदनी उसके खुले बालों तथा उज्ज्वल चेहरे पर पड़ रही होगी, उसे देखकर मैं प्रेम-सागर में हिलोरें लेने लगूँगा। उस अर्द्ध-निद्रावस्था में हठात् पर-स्त्री का दर्शन होगा और वही दृश्य होगा, जब मैंने उसका अपने द्वार पर स्वागत किया था और दोनों प्रेम-पाश में आबद्ध हुए थे। आँखें खुलते ही मेरी प्रेयसी दिखाई देगी और उसका कोमल, मधुर चुम्बन लेकर सो जाऊँगा। सवेरे उठकर वही भाव होगा, वही अवस्था होगी और वही आनन्दानुभव, जो उस शाम को हुआ था। परन्तु भेद इतना होगा कि वह पर-स्त्री का सम्पर्क था और यह स्व-पत्नी का अनन्त सहवास।"

जर्मनी

नव-वर्ष की शाम

लेखक—हेरमैन ज़ूदरमैन

भद्रे ! परमात्मा को धन्यवाद है कि एक बार फिर मैं आप के पास शान्ति से बातचीत करने बैठ सकता हूँ। छुट्टियों का भीड़-भक्कड़ निकल गया है और अब आप के पास मेरे लिये थोड़ा समय है।

ओह ! ये क्रिसमस के दिन ! मैं तो यह समझता हूँ कि हम बेचारे अविवाहितों को परेशान करने के लिये ही किसी दुष्ट राक्षस ने इस त्योहार को बनाया है, ताकि हम लोगों के नीरस जीवन की नीरसता और गहरी हो कर हमारे सामने आ जाय। दूसरों के लिये त्योहार आनन्द का देने वाला है, पर हमारे लिये तो सिर्फ़ कष्ट ही लाता है। यह तो मैं मानता हूँ कि हम लोग बिलकुल ही अकेले नहीं हैं—दूसरों को सुखी बनाने का अवसर पा ही जाते हैं और इसी सुख पर छुट्टी की ख़ुशी मनाने का रहस्य निर्भर है। किन्तु दूसरों के सुख में शरीक होना हमारे भाग्य में नहीं बदा है, क्योंकि कुछ तो आत्म-व्यंग्य के मारे और कुछ, उसके कारण जिसे आप लोग 'घर की याद' कहते हैं, पर जिसे मैं 'शादी की याद' कहता हूँ, हमारी अभिलाषा दब कर मर जाती है।

आप पूछती हैं, मैं अपने हृदय की व्यथा कहने आपके पास क्यों नहीं आया ? आपकी आत्मा दयापूर्ण है—आप सहानुभूति को उसी अनुपात में दान कर सकती हैं, जिसे आपकी दूसरी जाति-बहिनें अपने व्यंग्यों और छोटी-मोटी कुटिल कथाओं के लिये रखती हैं। न अनि का

भी एक कारण है। आपको याद होगा, बड़े दिन के एक दिन बाद आपने मुझे एक किताब 'तनहा परिन्दे' पढ़ने को दी थी । श्पाइदल उस पुस्तक में कहता है :—'स्वभाव से ही अविवाहित मनुष्य सान्त्वना नहीं चाहता। वह चाहता है कि यदि एक बार वह सुखी नहीं है तो अपने दुख का अच्छी तरह लुत्फ़ लूटे।' पुस्तक के विचार मेरे विचारों से मिलते-जुलते हैं।

'तनहा परिन्दा', जिसका चित्र श्पाइदल ने शब्दों में खींचा है, के अतिरिक्त, एक दूसरे प्रकार का भी क्वाँरा पुरुष होता है—उसे 'परिवार का-मित्र' कह सकते हैं। इनसे मेरा मतलब उन शरीफ़ बदमाशों से नहीं है जिनका पेशा ही भले घरों को बिगाड़ना है; जिनकी आँखों में, परिवार के साथ बैठ कर आतिथ्य ग्रहण करते समय लोभ का सर्प नाचता है। मैं तो उस भले 'चाचा' की बात कह रहा हूँ जो पुराने समय में पिता जी का स्कूल का साथी था और जो अब बच्चे को घुटनों पर खिलाते हुए उसकी माँ को किताबें आदि पढ़ कर सुनाता है, अच्छे-अच्छे भाग छाँट-छाँट कर, आदर के साथ और प्रेमपूर्वक ।

मैं ऐसे अनेक सज्जनों को जानता हूँ जिन्होंने अपना सारा जीवन किसी परिवार की सेवा में लगा दिया है, जिसकी मित्रता पाने का सौभाग्य उनको था—ऐसे-ऐसे पुरुष जिन्होंने अपनी सब इच्छाओं का दमन कर सुन्दर महिला की मित्रता में उम्र बिता दी, यद्यपि मन ही मन उस देवी का पूजन ही करते रहे।

आप मेरा विश्वास नहीं कर रही हैं ? 'अपनी इच्छाओं का दमन कर' शायद आपको ठीक नहीं लगा ? शायद आप ही सच कहती हों ! अच्छी तरह क़ाबू में किये हुए हृदय के गर्भ में भी अतृप्त अभिलाषा छिपी रह सकती है—पर यहाँ मेरी बात समझने की चेष्टा कीजिये—वह अभिलाषा जंज़ीरों में बँधी रहती है।

उदाहरण के लिये एक वार्त्तालाप सुनाता हूँ। यह अभी परसों ही,

व वर्ष की संध्या को दो बुड्ढे—बहुत ही वृद्ध सज्जनों के बीच हुआ ना । मैंने उनकी बातें कैसे सुन लीं, यह नहीं बताऊँगा और आप से भी यही आशा रखता हूँ कि आप इस कथा को अपने ही पास रक्खेंगी । अगर आज्ञा हो तो सुनाऊँ अब ?

मेरी कहानी के स्थान की कल्पना करने के लिये विचार कीजिये कि आप बड़ी ऊँची छत के कमरे में हैं और कमरे का सारा सामान पुराने ढंग का है । हरे रंग की चिमनी का प्रचीन लेम्प बीच में लटक कर कमरे में धृष्टतापूर्वक प्रकाश फेंक रहा है । ऐसे लेम्प हम लोगों के दादी-दादे मिट्टी के तेल के आगमन से पहले काम में लाते थे । रोशनी का दायरा, सफ़ेद मेज़पोश से ढँकी एक गोल मेज़ को प्रकाशित कर रहा है । नव वर्ष के उपलक्ष्य में पी जाने वाली शराब 'पंच' में पड़ने वाली कई मदिरायें मेज़ पर रक्खी हैं । बीच में तेल की बूँदों के कई निशान पड़े हैं ।

हमारी कथा के दोनों वृद्ध सज्जन, निर्बल नेत्रों से पृथ्वी को ताकते हुए, समय के द्वारा घिसे हुये पैसों के समान शरीर वाले, जीर्ण, कमर झुकाये, लेम्प के प्रकाश के आधे भाग में बैठे थे । दोनों मनुष्यों के सुन्दर शरीर अब खंडहर समान थे । एक जो मेज़बान था, देखने से सेना का अवकाश-प्राप्त अफ़सर मालूम पड़ता था, उसकी मूँछें बड़ी-बड़ी और नुकीली थीं, गले का रूमाल बड़ी सफ़ाई से लपेटा हुआ था, भवें ऊपर को तनी हुईं । अपनी पहियेदार कुरसी के हत्थे को वह बड़ी मज़बूती से दबाये था, मानो बैशाखी का सहारा लिये बैठा हो । जबड़े को छोड़ कर उसका सारा शरीर निश्चल था । मुँह तो लगातार चल रहा था, मानो कोई चीज़ चबाये जा रहा हो । दूसरा बुड्ढा, जो पहले के पास सोफ़े पर बैठा था, लम्बा, दुबले शरीर वाला था । उसके कम चौड़े कंधों के ऊपर विचारशील मनुष्य का उच्च मस्तक वाला सिर था । यह वृद्ध कभी-कभी अपने लम्बे पाइप

पर एक या दो दम लगा लेता था। पाइप की आग तो बिलकुल बुझ ही चली थी। झुर्रीदार चेहरे पर सूखी खाल के प्रभाव से बच कर शान्तिमय मुस्कराहट थी, ऐसी शान्ति जिसे सुखद, सन्तुष्ट जीवन ही वृद्धावस्था में ला सकता था। सफ़ाचट मुख के ऊपर श्वेत बालों की एक आध लट लटक रही थी।

दोनों चुपचाप बैठे थे। कमरे के पूर्ण सन्नाटे में लैम्प के तेल का धीमा कलकल शब्द और तम्बाकू के जलने का स्वर सुनाई दे जाता था। अँधेरे में टँगी दीवार घड़ी ने गम्भीर शब्द में ग्यारह बजाने शुरू किये। "इसी समय तो वह पंच तैयार करने लगती थी।" ऊँचे मस्तक वाले बुड्ढे ने कहा। उसकी आवाज़ मधुर थी, किंचित् कम्पित भी।

"हाँ, यही समय होता था," दूसरे ने उत्तर दिया। इसकी आवाज़ कुछ कर्कश थी मानो फौज़ी हुक्म की झनकार अब भी गूँज रही हो।

"मैं यह ख्याल नहीं करता था कि उसके बिना जीवन इतना नीरस लगने लगेगा।" पहले ने फिर कहा।

मेज़बान ने अपना जबड़ा चलाते-चलाते सिर हिला कर 'हाँ' कह दिया।

"नव-वर्ष की पंच शराब हम लोगों के लिये बेचारी ने चवालीस बार तैयार की थी।" उसका मित्र कहता ही गया।

"हाँ, जब से हम लोग बर्लिन में रहने आ गये और तुमसे मित्रता हो गई थी।" वृद्ध सैनिक-अफ़सर ने उत्तर दिया।

"पारसाल आज के दिन हम लोग साथ-साथ कितने सुखी थे!" दूसरे ने कहा, "वह वहाँ उस आराम कुरसी पर बैठ कर पाल के ज्येष्ठ पुत्र के लिये मोज़ा बुन रही थी। बड़ी तत्परता से वह काम कर रही थी। कहती थी कि रात के बारह बजने से पहले ख़तम कर देना है। और तब हम लोगों ने पंच पी थी और मृत्यु पर कुछ बातचीत हुई थी और दो महीने बाद ही भगवान् ने उसे उठा लिया! तुम्हें तो मालूम

होगा, मैंने 'विचारों की अमरता' पर एक मोटी पुस्तक लिख मारी है। तुमने शायद उसमें अधिक दिलचस्पी नहीं ली—मैं स्वयं अब तुम्हारी पत्नी की मृत्यु के बाद उस पुस्तक की कुछ परवाह नहीं करता। अब तो विश्व का समस्त विचार तक मेरे लिये कुछ अर्थ नहीं रखता।"

"हाँ, बड़ी नेक बीबी थी," मृत स्त्री के पति ने कहा, "वह मेरा बहुत ध्यान रखती थी। जब मुझे परेड पर सुबह पाँच बजे जाना होता था, वह मुझसे भी तड़के उठ कर मेरी काफ़ी का प्रबन्ध कर देती थी। यह बात नहीं थी कि उसमें दोष नहीं थे। जब वह दार्शनिक वाद-विवाद करने लगती थी—हुँ।"

"तुम्हीं ने उसे कभी न समझा," दूसरे ने धीमे स्वर में उत्तर दिया। काँपते हुये ओठों पर कठिनाई से दबाये हुये हृदयावेग की छाप थी। किन्तु अपने मित्र पर जमी हुई उसकी दृष्टि में शान्त दुख भरे भाव के अतिरिक्त और कुछ न था, मानो हृदय में कोई गूढ़ अपराध छिपा हो और आत्मा को धिक्कारता हो।

थोड़ी देर बाद चुप रह कर उसने फिर कहना शुरू किया—"फ्रांज़, मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ जो बहुत दिनों से मुझे परेशान कर रहा है। मैं यह नहीं चाहता कि मेरा रहस्य मेरी मृत्यु के साथ क़ब्र में दफ़ना दिया जाये।"

"अच्छा तो कह डालो," अपने पास की कुरसी से अपना पाइप उठाते हुये विधुर बुड्ढे ने कहा।

"एक बार—तुम्हारी पत्नी—और मेरे बीच में—कुछ सम्बन्ध था।"

मेज़बान वृद्ध के हाथ से पाइप छूट कर गिर गया; वह आँखें फाड़ कर अपने मित्र की ओर ताकता ही रह गया।

"देखो डाक्टर, मुझसे मज़ाक मत करो।" उसने दृढ़ता से कहा।

"मैं बहुत ही गम्भीर हूँ, फ्रांज़! यह भेद मैं अपने भीतर चालीस

साल तक छिपाये रक्खा; पर अब वह समय आ गया है, जब तुम्हें सब बता देना मेरा कर्त्तव्य है।"

"क्या तुम यह कहने जा रहे हो कि मेरी मृत पत्नी ने मुझसे विश्वास-घात किया था?" पति ने क्रोधित स्वर में पूछा।

"ऐसी बात मेरी ज़बान पर न आये, फ्रांज़!" उसके मित्र ने अपने शान्त स्निग्ध स्वर में मुस्कराते हुये उत्तर दिया।

बुड्ढा कुछ बड़बड़ा कर चुप हो गया और अपना पाइप जलाने लगा।

"नहीं, वह तो देव-बालिका के समान पवित्र थी," दूसरा कहता गया—"अपराधी तो हम और तुम हैं। मेरी बात सुनो। तितालीस वर्ष पहले की बात है; तुम यहाँ बर्लिन में कप्तान बना कर बदले गये थे और मैं तब यहीं विश्व-विद्यालय में प्रोफ़ेसर था। तुम उस समय बड़े रँगीले थे। याद है न?"

"हूँ," बुड्ढे सिपाही ने उत्तर दिया और झुर-झुरा, काँपता हुआ हाथ उठा कर मूँछ की नोकों पर ताव देने लगा।

"और याद है, यहाँ पर विशाल काले नेत्रों वाली, उज्ज्वल मोती समान दंत-पंक्ति वाली एक सुन्दर अभिनेत्री रहती थी—याद आया?"

"मुझे याद है—उसका नाम बियांका था," वृद्ध के शुष्क चेहरे पर एक हलकी मुस्कराहट, पुराने रसीले दिनों की याद कर फैल गई। "वह सफ़ेद सुन्दर दाँत काट भी सकते थे, यह मैं तुम्हें बता सकता हूँ!"

"तुमने अपनी पत्नी को धोखा दिया और वह सदैव तुम पर शक करती रही। वह कुछ कहती नहीं थी, केवल मौन होकर मानसिक वेदना सह लेती थी। वह पहली स्त्री थी, जो मेरी माता के देहान्त के बाद मेरे जीवन में आई। वह मेरे जीवन-पथ में चमकते हुये नक्षत्र के समान थी और मैं उसे देवी की भाँति पूजता था।

एक बार साहस बटोर कर मैंने उससे पूछा कि उसे क्या कष्ट है। वह मुस्कराई और बोली कि कुछ भी बात नहीं है, अब तो काफी स्वस्थ है—यह पाल के जन्म के कुछ दिन बाद ही की बात है। फिर नव वर्ष की संध्या आई। आज से ठीक तितालीस वर्ष पहले। मैं रोज़ की भाँति रात के आठ बजे आया। वह बैठी कुछ काढ़ रही थी। तुम्हारे लौटने की प्रतीक्षा हम लोग करने लगे। समय काटने के लिये मैं उसके लिये ज़ोर-ज़ोर से पढ़ रहा था। घण्टे के बाद घंटा निकलता गया, पर तुम नहीं आये। वह बेचैन होती जा रही थी और मैंने देखा कि काँपने भी लगी थी। मैं भी सिहर उठा। मैं जानता था, तुम कहाँ थे और मुझे डर लग रहा था कि कहीं तुम नये वर्ष के जन्म का समय (मध्य-रात्रि) भी उसी स्त्री के बाहुपाश में न बिता दो। उसने काढ़ना रोक दिया था और पढ़ना बन्द कर मैं भी चुप हो गया था। विकट सन्नाटे के बोझ से हम लोग दबे जा रहे थे। और मैंने देखा कि उसकी पलकों के बीच एक बड़ा अश्रु-बिन्दु जमा होकर ढुलका और गोद में रक्खे हुये कढ़े चित्र पर बिखर गया। तुम्हें ढूँढ़ने के लिये मैं उठ खड़ा हुआ और बाहर चलने को तैयार हुआ। मैं अनुभव कर रहा था कि मैं बल-पूर्वक उस स्त्री के पाश से तुम्हें छुड़ा लाऊँगा। पर वह भी झट से खड़ी हो गई—इस कुरसी से जहाँ इस समय मैं बैठा हूँ।

" 'कहाँ जा रहे हो तुम ?' भय से काँपती हुई वह पूछने लगी।

" 'मैं फ्राज़ को बुलाने जा रहा हूँ,' मैंने उत्तर दिया।

"और वह व्याकुल हो चीखकर बोली, 'तुम तो ठहरो ! भगवान्, तुम भी मुझे यहाँ छोड़ कर चले जा रहे हो !'

"और वह दौड़ कर मेरे पास आ गई और दोनों हाथ मेरे कंधों पर रख दिये। उसने अपना आँसुओं से भीगा मुख मेरे हृदय पर रख दिया। मेरा सारा शरीर काँप रहा था, क्योंकि स्त्री मेरे जीवन में इतने निकट कभी खड़ी नहीं हुई थी। पर प्रयत्न कर मैंने अपने हृदय को

क़ाबू में कर लिया और उसे सान्त्वना देने लगा। उसे सहानुभूति की सख्त ज़रूरत थी। थोड़ी देर बाद तुम भी आ गये। तुमने मेरे भाव की छाप नहीं देख पाई, क्योंकि तुम स्वयं भावों के कारण लाल पड़ रहे थे। तुम्हारी आँखें प्रेम लीला की थकान से भारी हो रही थीं। उस रात से मुझमें एक अजब परिवर्त्तन आ गया—ऐसा परिवर्त्तन कि मैं उससे भय खाता था। उसकी कोमल भुजाओं को अपनी गरदन में लिपटी अनुभव कर, उसकी सुगंधित गर्म श्वास को मुख पर पा कर, केशों का झुरमुट मेरे मुख से टकराता हुआ, स्वर्ग का नक्षत्र, साक्षात् मेरे पास आ गिरा—और मेरे सामने स्त्री थी, प्रेम की प्यासी, जीती-जागती। मैंने अपने आप को बदमाश, विश्वासघाती कह कर धिक्कारा और अपनी आत्मा को सन्तुष्ट करने के लिये तुम्हें तुम्हारी प्रेमिका से अलग करने की तदबीरें करने लगा। सौभाग्यवश मेरे पास खर्च करने को रुपया काफ़ी था। मेरे दिये हुए रुपये को पा कर वह अभिनेत्री सन्तुष्ट हो गई और..."

"शैतान!" चकित हो कर वृद्ध अफ़सर बोला, "तो तुम ही वियांका के भेजे हुये विदाई के पत्र की जड़ थे—जिसमें लिखा था कि उसे मुझे ज़बर्दस्ती छोड़ना पड़ रहा है, पर उसका हृदय फटा जा रहा है?"

"हाँ, मैं ही था!" उसके मित्र ने उत्तर दिया—"पर सुनो तो। उस धन से मैंने शान्ति ख़रीदनी चाही थी, पर शान्ति मिली नहीं। मेरे सिर में बड़े विचित्र विचार किलोलें करते ही रहे। उलझन कम नहीं हुई। मैंने अपने काम में डूब जाने की चेष्टा की, उसी समय 'विचारों की अमरता' पर नोट बना कर उसका ढाँचा बना रहा था,—पर शान्ति नहीं पा सका। इसी प्रकार एक साल निकल गया और नव-वर्ष की संध्या फिर आ पहुँची। इस बार भी हम लोग साथ बैठे थे—वह और मैं। अब की बार तुम घर पर ही थे, पर दूसरे कमरे में सोफे पर पड़े सो रहे थे। डट कर बढ़िया भोजन करने के बाद तुम आलस कर रहे थे।

मैं उसके पास बैठा था। मेरी नज़र उसके पीले चेहरे पर पड़ी और साल भर की पुरानी स्मृति ने मुझे धर दबाया। एक बार फिर मैं उसका सिर गोद में ले लूँगा—एक बार फिर उसका चुम्बन करूँगा—और फिर, यदि आवश्यकता हुई तो इस व्यापार का अन्त हो जायगा। हमारी आँखें क्षण भर के लिये लड़ीं; दोनों ने एक दूसरे के भाव पढ़ लिये। मैंने उसकी दृष्टि में अपनी याचना का उत्तर देखा। अब मुझसे रुका न गया। दूसरे ही क्षण मैं उसके चरणों में था और अपना गर्म मुख उसके पल्ले में छिपा लिया था।

"शायद दो सेकण्ड तक मैं स्थिर पड़ा रहा। उसने अपना ठण्डा कोमल हाथ मेरे सिर पर रख दिया और प्यार भरे मीठे शब्दों में बोली, 'प्यारे दोस्त, हिम्मत न छोड़ो, साहसी बनो!—उस कमरे में सोते हुए विश्वासी पुरुष को धोखा मत दो!' मैं उछल कर खड़ा हो गया और बौखलाया हुआ सा इधर-उधर ताकने लगा। मेज़ से एक किताब उठा कर उसने मेरे हाथ में दे दी। उसका मौन आदेश समझ कर मैंने एक सफ़ा खोल लिया और पढ़ने की चेष्टा करने लगा। मुझे मालूम नहीं, मैं क्या पढ़ रहा था। अक्षर मेरी आँखों के सामने नाचते मालूम पड़ते थे। पर हृदय का तूफ़ान अब ठण्डा हो चला था, और बारह का घण्टा बजते ही तुम ऊँघते हुए नव-वर्ष की बधाई देने आये। मुझे ऐसा लग रहा था कि पाप का क्षण खिसक कर बहुर दूर चला गया—मानो अनेक दिन निकल गये हों।

"उस दिन से मुझे बहुत शान्ति मिली। मैं जानता था कि उसने मेरे प्यार को नहीं अपनाया है और अब केवल दया की आशा उससे की जा सकती थी। वर्ष पर वर्ष बीतते गये। तुम्हारे बच्चे बड़े हो गये और उनकी भी शादियाँ हो गईं। हम तीनों बुड्ढे हो चले। तुमने अपनी पुरानी ज़िन्दगी त्याग दी और दूसरी स्त्रियों को भूल कर केवल एक स्त्री के लिये रहने लगे, मेरी ही भाँति! मेरे लिये यह असम्भव था

कि कभी उसे भूल सकूँ, पर मेरे प्रेम ने अब दूसरी शक्ल धारण कर ली थी। वासना का नाम भी न था, केवल मित्रता का बन्धन दृढ़ होता जाता था। हम दोनों के दार्शनिक तत्वों को सुन-सुन कर तुम बहुत हँसा करते थे। पर यदि भास कर सकते होते कि ऐसे समय में हमारी आत्माएँ कितने निकट आ जाती थीं, तो शायद तुम ईर्ष्या करने लगते। अब वह नहीं रही है और शायद अगली नव-वर्ष-रात्रि के आते-आते हम लोग भी उसकी राह पकड़ लें। इसलिये मैंने सोचा था कि अपने हृदय का रहस्य तुम्हें बता दूँ और तुमसे कह सकूँ,—फ्रांज़ एक बार मैंने तुम्हारे प्रति अपराध किया था, मुझे क्षमा करो!"

उसने अपने सैनिक मित्र की ओर, अपना हाथ बढ़ा दिया, पर उसके मित्र ने, नहीं-नहीं करते हुए कहा—"वाह, इसमें क्षमा माँगने की क्या बात है! अभी जो कुछ तुमने मुझे बताया, वह सब मैं बहुत पहले से जानता था। चालीस वर्ष हुए उसने स्वयं सब हाल मुझे बता दिया था और अब मैं तुम्हें बताता हूँ कि मैं बुढ़ापे तक दूसरी स्त्रियों के पीछे क्यों भागता रहा—क्योंकि उसने मुझे बताया था कि उसको जीवन में तुमसे ही एकमात्र प्रेम था—दूसरे से नहीं।"

बिना कुछ बोले, मुँह बाये, उसका दोस्त ताकता रह गया। अँधेरे में लटकी हुई घड़ी गम्भीर स्वर में बारह बजाने लगी।

स्पेन

एक रात

लेखक—बी० ब्लास्को इबायेन्ज़

रात के ग्यारह बजे थे। पेरिस के थियेटर इसी समय अपने दरवाज़ें बन्द करते थे। भोजनालयों और काफ़े आदि ने आध घंटा पहले ही अपने ग्राहकों से छुट्टी ले, किवाड़ बन्द कर लिये थे।

हमारे साथियों का दल पक्की सड़क के किनारे असमंजस में खड़ा था। आनन्द के, तमाशे के स्थानों से निकलती हुई भीड़ अँधेरे में तितर-बितर हो रही थी। वायुयान के आक्रमण के भय से ढँकी हुई सड़क की बिजली की बत्ती अपनी पीली रोशनी फेंक रही थी, जिसे दूर ले जा कर अँधेरा दबोच खाता था। पहले रात्रि के ऊपर तारों की चादर तनी रहती थी; अब एकाएक आने वाली, 'सर्चलाइट' की तेज़ रोशनी आसमान के अँधेरे को चीर कर यदा-कदा ऊपर उड़ते हुए शत्रु के गुब्बारेनुमा वायुयान को खोज निकालती थी।

हमारे मन में इच्छा हुई कि यहीं देर तक खड़े रहें। हम लोग चार जने थे; एक फ्रांसीसी लेखक, दो सर्बिया के सैनिक कप्तान और मैं। हम लोग उदास, अन्धकार से मढ़े पेरिस में कहाँ आनन्द खोजने जाते?...सर्बियन कप्तानों में से एक ने, एक फ़ैशनेबिल होटल का नाम बताया जो रात भर ग्राहक मेहमानों के लिये खुला रहता था। जितने अफ़सर छुट्टी पा कर पेरिस में समय बिताना चाहते थे, यहीं आ पहुँचते थे, मानो घर हो। यह बड़ा रहस्य था, जिसे कम लोग जानते थे कि विभिन्न राष्ट्रों के सैनिक अफ़सर पेरिस में आकर यहीं पर आपस में

मिलना-जुलना और काम-काजी बातें (जासूसी आदि की) करते थे। हम लोग सावधानी से उज्ज्वल हाल के अन्दर घुसे। बाहर की अँधेरी सड़क और यहाँ के प्रकाशयुक्त वायुमंडल में बड़ा अन्तर था। कमरा एक प्रकार से मीनार (लाइट हाऊस) के अन्दर का भाग प्रतीत होता था; बिजली के बल्बों के गुच्छों के प्रकाश को दमकाने के लिये दीवारों पर अनेक शीशे लगे थे। देखते ही हम लोगों को युद्ध के दो वर्ष पहले के दृश्य याद हो आये। फ़ैशनेबिल, सजी, बनी-ठनी स्त्रियाँ, शेम्पेन शराब, वायलिन का संगीत और हृदय को तोड़ने वाले मधुर गान के साथ हबशियों का नृत्य—सारे दृश्य युद्ध के पहले के समय के थे। किन्तु उपस्थित मनुष्यों में से कोई भी साधारण नागरिकों के वस्त्र नहीं पहिने था। सब, धूल से भरी इस्तेमाली वर्दियाँ पहिने थे,—फ्रेंच, अँग्रेज़ी, बेलजियन, रूसी, सर्बियन। कुछ अँगरेज़ सैनिक वायलिन बजा रहे थे और प्रशंसा की करतल ध्वनि का मुस्करा कर शान्त भाव से गम्भीर बने स्वागत कर रहे थे। पुराने, लाल कोट वाले 'जिप्सी' बजाने वालों का स्थान अब इन्हीं ने ले लिया था। उन में से एक की ओर स्त्रियाँ अँगुली उठा कर आपस में बात कर रही थीं; 'इसके पिता लार्ड—, उच्च-वंश और अपार धन के लिये जो प्रसिद्ध हैं।' वह कह रहा था, "भाइयो कल मरना है, आओ आज मौज कर लो!"

इन सब मनुष्यों, ने अपने प्राण रणचंडी को भेंट कर रक्खे थे! जीवन को वे लोग एक ही साँस में पीकर चढ़ा जाना चाहते थे। मल्लाहों की भाँति जिन्हें नगर घूमने की आज्ञा मिली थी, अब वे आनन्दपूर्वक, गाते, खातेपीते, प्रेम करते मौज कर रहे थे; क्योंकि कल समुद्र में तूफ़ान का सामना करना था जिसमें जीवन का कुछ ठिकाना नहीं था।

दोनों सर्बियन कप्तान युवक थे और सन्तुष्ट प्रतीत होते थे कि अपने देश के दुर्भाग्य के कारण उन्हें पेरिस देखने का सौभाग्य प्राप्त

हुआ। अपने छोटे से सैनिक नगर के सूखे जीवन के सामने विलास-नगरी पेरिस के दृश्य स्वर्ग जैसे मालूम पड़ते थे।

कहानी कहने का सुन्दर ढंग दोनों जानते थे, क्योंकि उनके लिये यह गुण स्वाभाविक था; उनके देश में हरेक कवि का हृदय रखता था। लामार्टिन, पचहत्तर वर्ष हुए, जब तुर्कों के अधीन एक सर्बियन प्रान्त में होकर निकला, तो भेड़ चराने वाले सैनिकों के उस देश में, कविता का महत्व देख कर चकित हो गया था। देश भर में लोग लिखना-पढ़ना कम जानते थे; किन्तु पूर्वजों के विचार, रीति-रिवाज आदि, पद्य के रूप में हर पीढ़ी में चलते थे। 'गुज़लेरोस' उनके राष्ट्रीय इतिहासज्ञ थे और वह सर्बियन प्राचीन कथाओं में स्वयं बनाये हुए गीत आदि जोड़ कर उन्हें और सुन्दर बना देते थे।

दोनों अपनी 'शेम्पेन' चखते हुए कुछ महीने पूर्व की देश की पराजय और सेना की भगदड़ की संकट कथाएँ सुनाने लगे—भूख और शीत से युद्ध; बर्फ़ के ऊपर लड़ाई; एक-एक के लिये दस-दस शत्रु; घबराये हुए मनुष्यों और जानवरों की शत्रु के आगे से भयानक भगदड़, जिनके पिछले भाग में अब भी तड़ातड़ राइफ़लें और मशीन-गन शत्रु से लोहा ले रही थीं; जलते हुए गाँव; लपटों के बीच में घायलों और थके मनुष्यों का चीत्कार; अंग-भंग स्त्रियाँ, जिन पर कौए मँडराते थे; राजा पीटर का भाग कर जान बचाना, जिसकी गठिया के कारण और भी मुसीबत थी और सहारे के लिये जिसके पास केवल एक तिरछा-मिरछा लकड़ी का डण्डा रह गया था। राजा अपनी पराजित घुड़सवार सेना का अब भी संचालन कर रहा था—शेक्सपीयर के किसी दुःखान्त नाटक के नायक के समान।

मैं अपने सर्बियन दोस्तों को बातें करते देख रहा था। वे हृष्ट-पुष्ट युवक थे; लम्बे, हलके शरीर के, नाक दोनों की बहुत नुकीली थी—गिद्ध की चोंच की तरह। उनकी मूँछें नुकीली थीं; टोपी के नीचे से

उनके लम्बे बालों की लटें निकल रही थीं, ऊपर उलटे गुम्बज-सी टोपी धरी थी। उनकी शक़्ल चित्रकारों की सी थी, जिन पर पुराने ज़माने की राजकुमारियाँ भावावेश में आकर मोहित हो जाती थीं; किन्तु वे इस समय बादामी वर्दी में सुन्दर लग रहे थे। चेहरे पर ऐसा दृढ़ शान्त भाव था जो केवल उन्हीं के पास रह सकता है, जो मृत्यु के सामने अक्सर खड़े रहते हैं।

वे लोग बातें करते ही गये। कुछ महीने पहले की घटनाओं को वे सुनाने लगे और ऐसा मालूम पड़ता था कि पौराणिक कथा-कहानियाँ सुना रहे हों, मानो 'चिड' के हाथ में भाले की जगह साँप लेकर 'विलास' वन-दैत्यों से युद्ध करने के क़िस्से चल रहे हों। ये दोनों मनुष्य जो पेरिस के होटल में बैठ कर कथाएँ सुना रहे थे, हाल ही में मनुष्यता का भीषण रूप देख चुके थे—सर्बिया के युद्ध में भाग ले चुके थे।

हमारा फ्रांसीसी मित्र चला गया था। बात करते हुए कप्तानों में से एक बीच-बीच में बार-बार पास की मेज़ पर बैठी हुई, सफ़ेद रेशम से पर लगे टोप को सिर पर रक्खे हुई सुन्दरी को देख लेता था, जिसकी निगाह उसी पर लगी थी। कप्तान का ध्यान उस तरफ़ खिंच गया था। थोड़ी देर बाद, सुन्दरी के आकर्षण से खिंच कर वह उठा और मेज़ पर चला गया। ज़रा देर बाद वह और सुन्दरी—दोनों ही उठ कर चल दिये।

मैं अकेला दूसरे नवयुवक कप्तान के साथ बैठा रह गया। यह युवक आयु में भी कम था और इसने बातें भी कम की थीं। गिलास को खाली कर के वह दीवार पर टँगी घड़ी को देखने लगा। उसने दूसरा गिलास मँगा कर ख़ाली कर दिया और मेरी ओर इस प्रकार ताकने लगा कि मैं समझ गया कि अब यह मुझ से कुछ दिल की बात कहने ही वाला है। मुझे मालूम पड़ गया कि नवयुवक के हृदय में कुछ दुखी विचार घुसे हैं, जिनके स्मरण से ही उसे कष्ट

होता है। उसने फिर घड़ी की ओर देखा। रात का एक बज गया था।

"यही समय था, ठीक"—एकाएक वह मौन वातावरण तोड़ कर मुझ से कहने लगा—"आज से चार महीने पहले की बात है।"

और उसकी बातें सुन कर मैंने अपनी आँखों के आगे सारे चित्र कल्पना की सहायता से खींच लिये—अँधेरी रात है, बर्फ़ से भरी घाटी है, सफ़ेद पहाड़ है, जिसके ऊपर चीड़ और बाँझ के वृक्ष लगे हैं, जिनकी शाखाओं के बीच में से वायु चीत्कार कर के बर्फ़ के गुच्छों की वर्षा कर रही है। मैंने देखा कि उजड़ा हुआ गाँव सामने है और टूटी-फूटी झोंपड़ियों के बीच में से पराजित सर्बियन सेना की एक टुकड़ी भगदड़ में, पीछे हट रही है और अड्रियाटिक सागर की ओर भाग रही है।

मेरा मित्र, यही युवक कप्तान भागती हुई उस सेना के पिछले भाग का अफ़सर था। उसकी टुकड़ी जो पहले सैनिकों की पूरी "कम्पनी" थी, अब हार के कारण बदहवास भीड़ हो रही थी। उस सैनिक दल का भम्भड़ भयातुर, विपत्ति के मारे किसनों की भीड़ के कारण और भी अधिक हो गया था। किसान इतने बदहवास और सुन्न थे कि मशीन की भाँति चल रहे थे, तथा उन्हें जानवरों की तरह आगे-आगे हाँकना पड़ रहा था। बच्चों को अपने साथ खदेड़ती हुई औरतें कराहती चलती थीं। दूसरी स्त्रियाँ, लम्बी, साँवली, कठोर, दुःखद सन्नाटे में आगे चलती जाती थी, मुर्दों पर से कारतूसों की पेटियाँ और बन्दूकें उठाती हुईं।

उजड़े गाँव पर गिरते हुए गोलों के फटने से कभी-कभी आग्नेय प्रकाश के कारण अँधेरा मानो सिहर उठता था। रात के गम्भीर अंधकार में दूसरी चीज़ें भी चमक जाती थीं—सन्-सनाती हुई गोलियाँ जो मृत्यु का दूत बन कर भागती हुई भीड़ पर गिर रही थीं।

सुबह होते-होते शत्रु का भयानक, कुचलने वाला आक्रमण शुरू हो

जायगा, उन मनुष्यों को यह तक नहीं मालूम था कि कौन-सा शत्रु उनको खदेड़ रहा है—जर्मन, आस्ट्रियन, बलगेरियन या तुर्क ? ......छोटे से देश को इन सब का सामना करना पड़ा था।

"हमें पीछे हटना ही पड़ा," वह सर्बियन कप्तान सुनाता गया, "जो पिछड़ जाते थे उन्हें छोड़ना पड़ा था। सुबह होने से पहले पहाड़ों पर पहुँच कर हमें शरण लेनी थी।"

मर्दों, स्त्रियों, बच्चों, वृद्धों के समूह के समूह, लादे के खच्चरों की पंक्तियों के साथ रात्रि के अंधकार में विलीन होते जाते थे। गाँव में केवल हाथ-पैर के साबित लोग ही रह गये थे, जो टूटे मकानों की आड़ से, आगे बढ़ते हुये शत्रु पर गोली चला रहे थे। समय आने पर इन वीरों की टुकड़ियाँ भी पीछे हटने की चेष्टा करने लगीं। कप्तान को बड़ा निर्दय विचार क्षोभित करने लगा।

"घायलों का क्या होगा ? घायलों का क्या करें ?"

टूटे मकान के बड़े कमरे में, जिसके फ़र्श पर पयाल छितरा पड़ा था और जिसकी छत में, गोलों की मार के कारण बड़े-बड़े छेद हो रहे थे, दर्द से अर्द्ध मूर्च्छित या कराहते हुये पचास के करीब घायल पड़े थे। उनमें से ऐसे भी थे जो कई दिन पहले घायल हुये थे और यत्न कर के पट्टी आदि बाँध कर इतनी दूर तक किसी प्रकार साथ-साथ भाग सके थे; ऐसे भी थे जिन्होंने उसी रात को चोट खाई थी और बहती हुई रक्त की धारा को जिन्होंने जल्दी-जल्दी उलटी-सीधी पट्टी से रोका था; स्त्रियाँ भी थीं जो फटते हुये गोलों के उड़ते हुये टुकड़ों से घायल हुई थीं।

कप्तान इस मकान में आया। चारों तरफ सड़ते हुये मांस की, सूखे रक्त की, मैले कपड़ों की, बदबूदार हवा की महक फैल रही थी। कप्तान के शब्द पर, जिन में अब भी कुछ शक्ति शेष थी, वे टिमटिमाती हुई अकेली लालटेन की रोशनी में बेचैन हो इधर-उधर डुलने लगे। करा-

हना रुक गया। सब के ऊपर आश्चर्य और भय से भरा सन्नाटा छा गया, मानो मृत्यु से भी अधिक भयानक कोई वस्तु उनके सामने आ खड़ी हुई हो।

यह सुन कर कि उन्हें शत्रु की दया के भरोसे छोड़ दिया जायगा, घायलों ने खड़े होने की चेष्टा की, किन्तु शक्तिहीन होने के कारण अधिकतर लड़खड़ा कर पृथ्वी पर गिर पड़े।

घायलों की विनती, याचना, हताश स्वर में दया की भीख, करुण प्रार्थना, कप्तान और उसके साथ के सैनिकों के सामने एक स्वर में आई।

"भाइयो, हमें यहीं मत छोड़ जाओ। भाइयो, भगवान् के नाम पर—"

तब धीरे-धीरे उनको वहीं छोड़ जाने की आवश्यकता घायलों की समझ में आई और भाग्य के भरोसे अपने को छोड़ कर वे बैठ रहे। परन्तु शत्रु के हाथ में पड़ जाना! बलगेरियन या तुर्क, जो जन्म जन्मान्तर से देश के शत्रु हैं! उनकी आँखें मूक भाव से वह बात कह रही थीं, जिसे ओठ कहने में असमर्थ थे। अगर एक सर्बियन युद्ध में बन्दी बना लिया जाय, तो पहले पाप सामने आ जाते हैं। अनेक जो मृत्यु के समीप ही थे, बन्दी बनने के भय से काँप उठे।

बलगेरियन अथवा तुर्कों की प्रतिहिंसा मौत से भी अधिक भीषण होती है।

"भाई, भाई—"

कप्तान ने, उनकी पुकार के गर्भ में छिपे आशय को समझ कर आँखें फेर लीं

"क्या तुम लोग चाहते हो कि मैं—?" उसने उनसे कई बार पूछा।

सब घायलों ने सिर हिला कर "हाँ" कह दिया। उनको वहीं छोड़

कर पीछे हटना अनिवार्य था, इसलिये कि उनके पीछे एक भी जीवित सर्बियन, शत्रु को बन्दी बनाने को न मिले।

यदि स्वयं कप्तान उनकी जगह होता, तो क्या वह भी यही भीख नहीं माँगता ?

पराजय और भगदड़ के कारण गोली बारूद की कमी थी, इसलिये सैनिक अपने कारतूस बड़े यत्न से ख़र्च करते थे। कप्तान ने अपनी तलवार म्यान से निकाल ली। कुछ सैनिकों ने अपना अप्रिय कार्य आरम्भ कर दिया था, तथा संगीन से काम ले रहे थे; किन्तु उनके हाथ काँप रहे थे। उनके भद्दे, सहमे हुये वारों से रक्त के फ़व्वारे छूट पड़ते थे तथा वेदना की चीख़ घायलों के मुख से अनायास निकल पड़ती थी। कप्तान के उच्च-पद से आकर्षित हो घायल उस की ओर घिसट-घिसट कर आने लगे। उसके सधे हुये वार से, उसके हाथों मृत्यु पाना सरल और आदरणीय था।

"मुझे लो, भाई, अब मेरी बारी है..." तलवार की धार आगे किये, वह सफ़ाई के साथ एक ही वार में गरदन की नस साफ़ काटने की चेष्टा कर रहा था।

"खट्-खट्," कप्तान ने मुझे कह कर बताया; सारा वीभत्स दृश्य मेरी आँखों के सामने नाच उठा।

चारों हाथ पैरों के बल घिसटते हुये घायल आगे प्राण देने बढ़ते आते थे। पहले तो उसने सिर एक तरफ़ फेर लिया कि अपना भयानक कृत्य दिखाई न पड़े; उसकी आँखें आँसुओं से भरी थीं; किन्तु इस मानसिक दुर्बलता का फल यह हुआ कि हाथ का वार करारा न रहा और एक ही पर दुबारा हाथ चला कर उसके कष्ट को व्यर्थ ही बढ़ाना पड़ता था। तनिक स्थिर हो कर वार करो, अच्छा ! हाथ सधा रहना चाहिये, दिल को पत्थर कर लो ! खट्-खट् !

"भाई, मुझे मारो, अब मेरी बारी है..."

वह अपनी पारी के बारे में ऐसे झगड़ते थे, मानो डर था कि उनके बलिदान के पहले ही शत्रु न आ पहुँचे। अपने आप ही उनको आ गया था कि किस हालत में रहने से तलवार की चोट साफ़ पड़ती है। हरेक, अपनी पारी आने पर सिर एक ओर कर लेता था ताकि गरदन तन कर कड़ी हो जाय, कटने के लिये नस फूल कर साफ़ दीखने लगे।

"भाई, अब मेरी गरदन, !" और ख़ून की धारा छूटते ही एक और लाश ज़मीन पर लाल बोरों के समान पड़े शवों में मिल कर छटपटाने लगती।

होटल का हाल खाली होने लगा। वर्दी पहिने हुये सैनिकों की बाहों के सहारे पर चल कर स्त्रियाँ, अपने पीछे पाउडर और सेंट की ख़ुशबू फैला कर; निकलने लगीं। हर्ष-सूचक ताली की ध्वनि के बीच, आंग्ल सैनिकों के वायलिनों ने अन्तिम संगीतमय 'आह' भरी।

चेहरे पर यह भाव लिये कि यह रक्तरंजित स्मृति सदैव उसके मस्तिष्क में ताजी बनी रहेगी, वह सर्बियन कप्तान हाथ के कलम बनाने के छोटे से चाकू से मेज़ पर ठक-ठकाये जाता था...खट्।...खट्!

रूमानिया

वाज़ील ने क्या देखा ?

लेखिका—रूमानिया की रानी मेरी

रात का समय था।

मैदान के ऊपर प्रचंड वायु बह रही थी; बड़ी ही भयानक सर्दी पड़ रही थी। बहुत ऊँचाई पर तारे ऐसे चमक रहे थे, मानो पृथ्वी की कड़ी सर्दी के डर से सिकुड़ कर और भी दूर चले गये हों; पर धरती पर जमा हुआ बर्फ़ इतनी मोटी और इतनी श्वेत तह का था कि ज़मीन पर से तारों के प्रकाश की धुँधली ज्योति निकल रही थी। यदा-कदा हवा के तेज़ झोंके आकर बर्फ़ की धूल को खदेड़ देते थे जो ग़ुबार बन कर आकाश की ओर उठ जाती थी, मानो अपने को त्रास देने वाले अंधड़ से बचाना चाहती हो।

रात्रि बड़ी ही उदास और शोकपूर्ण प्रतीत होती थी। वह ऐसी रात थी जब कि अनायास ही विश्वास हो सकता था कि भूत-प्रेत विचर रहे हैं। हवा का चीत्कार जब कुछ क्षण के लिये शान्त हो जाता था, तो कभी-कभी, दूर से, धमाके का गंभीर शब्द आ जाता था—युद्ध काल का स्वर—तोपों की गड़गड़ाहट !

उस रात में भी सड़क सफ़ेद बर्फ़ की चादर पर मोटी काली लकीर सी, जो लोगों के पैरों द्वारा बनाये हुये गड्ढे थे, दीखती थी। इस काली लीक के किनारे, सिकुड़े हुये, शीत से काँपते सैनिकों की एक टोली, लगभग बुझी हुई लकड़ियों के इर्द-गिर्द सटी बैठी थी।

यह लगता था कि पवन देवता ने अपना क्रोध उतारने के लिये इन्हीं अभागे सिपाहियों की टोली को चुन रक्खा है। बर्फ़ के बुरादे का ढेर का ढेर झोंकों के साथ आकर उनके ऊपर बिखर जाता था, मानो चट्टानों पर लहरें सिर पटक-पटक कर झाग बहा रही हों। सिपाहियों ने अपने कोटों के कॉलर उलट कर कानों तक ढँक लिये थे और टोप खींच कर माथे के सामने तक चिपका दिए थे; पर बर्फ़ीले तूफ़ान के आगे ऊन और खाल के कपड़ों की कुछ नहीं चल रही थी।

सब मिलकर लगभग एक दर्जन सिपाही थे, तीन-चार पुराने दाढ़ी वाले बुज़ुर्ग तथा एक बिलकुल नवयुवक भी था। बुझते हुये अन्तिम अंगारों के आसपास उदास, हताश, बन्दियों के एक छोटे-से गिरोह की निगरानी इन सैनिकों के सिपुर्द थी। बन्दी, बर्फ़ की चपेटों और सैनिकों की सहानुभूति और घृणा-मिश्रित दृष्टि से बचने के लिए अपना मुख घुटनों के बीच छिपाये हुये थे। दस्तानों से रहित उनके हाथ पाले के प्रकोप के कारण फट गये थे और सूज आये थे। उनका शरीर यदा-कदा ठण्ड या शोक अथवा भय के कारण काँप उठता था—शायद तीनों एक साथ उन अभागों पर आक्रमण बोल देते थे।

उनके भीमकाय रक्षक उनकी ओर अधिक ध्यान नहीं दे रहे थे। छोटे वाक्यों में वे अपने एकमात्र नवयुवक साथी से बातें कर रहे थे। नवयुवक अपनी बन्दूक़ पर झुका खड़ा था, मानो गर्मी के दिनों में अहीर अपनी लाठी पर टेक दिये ढोर चरा रहा हो। प्रचंड वायु उनके शब्दों को अपने चीत्कार से बीच-बीच में भंग कर देती थी।

वह नवयुवक निरा लड़का ही था। मुश्किल से अठारह-उन्नीस का होगा। अपनी बड़ी-बड़ी आँखों को फैलाये, रात्रि के अँधेरे में वह ताक रहा था। बर्फ़ के मुलायम टुकड़े उसके चारों ओर बरस रहे थे, उसके बालों वाली खाल की टोपी पर जमा हो रहे थे और उसकी लम्बी रेशम

सी पलकों पर भी गिर पड़ते थे; बर्फ़ पोंछने के लिये वह कभी-कभी अपना हाथ, मुँह पर फेर लेता था।

"वाज़ील ! आग बुझी जा रही है !" एक प्रौढ़ सैनिक ने ग़ुर्रा कर कहा, "इस चुड़ैल रात के ख़तम होते-होते जान पड़ता है, हम लोग भी सर्दी से ख़तम हो जायँगे।"

"हम लोगों को रास्ता भूलना ही नहीं चाहिये था।" एक दूसरे ने बड़बड़ा कर कहा।

"कोई जानबूझ कर तो भूले नहीं हैं !" पहले वाले ने, जिसका नाम आन्द्रेई स्कूर्तू था, कहा। आन्द्रेई इस छोटी सी सैनिक टुकड़ी का नायक था। अपने नाम के समान ही अंधड़ स्वभाव का था और दूसरे साथी उससे बिगड़े मन से दबे रहते थे।

"इन क़ैदियों को साथ लेकर जाड़े से अकड़े पैरों के बल कोई कितनी दूर जा सकता है ! हम लोगों से उम्मीद की जाती थी कि शाम होने से पहले गाँव में पहुँच जायँगे—लो, बहुत पहुँच गये ! बड़े अच्छे पहुँचे हैं ! अगर सुबह होते-होते हम लोग यहीं जम कर मर गये, तो भी इसके मरने-वालों से गिनती में कम ही होंगे। अगर मरे तो न दोष हमारा है, न भगवान् का।"

"तो फिर किसका दोष है ?" किसी ने पूछा।

"सारा दोष लड़ाई का है।" वृद्ध पेत्रे पास्का ने कहा। पास्का अभी तक चुप था।

"लड़ाई, लड़ाई !" बड़बड़ाते हुये स्कूर्तू ने सुनाया, "कमबख़्त आती है तो सूखे जेठ जैसी, नहीं तो सावन-भादों की सी बाढ़ से लदी—बीज पत्तों को दोनों से नुक़सान !"

"लेकिन, जैसी यह लड़ाई है !" दूसरे ने आक्षेप करते हुये कहा।

"यह जर्मन साले तो यमराज के ख़ुद भेजे हुये हैं।" दूसरे ने

अन्तिम साँस भरते हुये कोयलों को लकड़ी से कुरेद कर जलाने की व्यर्थ चेष्टा करते हुये कहा।

"सब बदमाशों का नाश हो।" स्कूर्तू ने कहा और अपनी घृणा दिखाने के लिये राख में थूक दिया।

वाज़ील ने अपना युवा पाले से मारा मुख बड़ों की ओर किया।

"मुझे इन बेचारे क़ैदियों के लिये दुख है।"

"अफ़सोस है!" कई आवाज़ों ने विरोध करते हुये एक साथ कहा, "इन विदेशी कुत्तों के लिये दुख है!"

"ये भी नवयुवक हैं और अपने घरों से बिछुड़े हुये हैं।" वाज़ील ने समझाया।

"तो फिर हम! हम लोग कहाँ हैं?"

"हम लोग कम से कम अपनी जन्मभूमि, रूमानिया की ज़मीन पर तो हैं।'

"दोष तो सारा इन्हीं लोगों का है।"

वायु का एक तेज़ झोंका आया और बर्फ़ की एक विशाल लहर उठ कर इन पर दौड़ पड़ी। हरेक ने तूफ़ान की चोट सहने के लिये अपनी पीठ कर दी।

"आज रात तो भेड़ियों की मौज है।" एक ने कहा।

"यमराज की रात है!" दूसरा बोला।

"मुर्दों के लिये रात है।" तीसरे ने समर्थन किया।

"वाज़ील, अगर लकड़ी नहीं मिली, तो हम सब जम कर मर जायँगे!" स्कूर्तू ने फिर कहा।

"ऐसे बर्फ़ीले रेगिस्तान में लकड़ी कहाँ मिल सकती है?" वाज़ील ने बन्दूक का सहारा, अहीरों की भाँति, लिये हुये उत्तर दिया।

"तेरी तो टाँगें जवानों की हैं," पेत्रे पास्का बोला, "और फिर रात भी ऐसी बहुत अँधेरी तो है नहीं...।"

"बर्फ़ की वजह से बहुत अँधेरी नहीं है।" राख के ढेर की दूसरी तरफ़ से कोई बोला।

"यमराज की रात है।" कराहते हुये किसी ने दोहराया।

"वाज़ील, तेरी टाँगें मज़बूत हैं..." पेत्रे पास्का अपनी बात पर अड़ा रहा। प्रौढ़ स्कूर्तू ने, जो अपना सिगरेट जलाने की चेष्टा कर रहा था, ऊपर सिर उठाया।

"हाँ, हाँ, तू तो ताक़तवर है। लकड़ी खोज कर क्यों नहीं ले आता ?"

"मैं यहाँ क़ैदियों की निगरानी के लिये हूँ।" वाज़ील ने विरोध किया; उसने एक बार बूट की ऐड़ी मिलाकर 'खट्' कर दिया, पर रहा पहली ही अवस्था में।

"निगरानी तो एक कुत्ता भी कर सकता है।" स्कूर्तू ने आवाज़ ऊँची करके कहा, "जानते हो कि नहीं कि मैं यहाँ पर नायक हूँ !"

कोई भर्राये स्वर में टहाका मार कर ज़ोर से हँस पड़ा।

"तेरी बुढ़िया तेरे ओहदे को देख कर फूल कर कुप्पा हो जायगी !"

"मेरी बुढ़िया ! क्या बक रहे हो !" स्कूर्तू ने उत्तर दिया, "कभी वह भी जवान थी। मेरे लिये उसने अनेक सन्तानें जन्मी हैं, अधिकतर लड़के !"

"अब वे कहाँ हैं ?"

स्कूर्तू ने मुँह बना कर हाथ हिला कर निराशा का भाव जताया।

"ईश्वर जाने कहाँ...इस लड़ाई में क्या ठीक...फिर ये पाजी जर्मन..." उसने रुकते-रुकते अनमना होकर उत्तर दिया।

"लड़ना जानते हैं, ये जर्मन !" किसी ने कहा।

"खास यमराज के भेजे हुये हैं !" अँधेरे में से किसी ने दोहराया।

"कहीं के हों, हमें क्या लाभ !" दूसरा बोला।

"जी नहीं; हमें फ़ायदा तो इनकी तोपें करेंगी !" स्कूर्तू, जो बड़ी देर से गीला सिगरेट जलाने की कोशिश में लगा रह कर अब सफल हुआ था, मज़ाक बनाता हुआ बोला।

"अब भी गड़गड़ाहट सुनाई दे जाती है न ?" वाज़ील ने पूछा।

"सत्यानाश हो इनका !" कई स्वर एक साथ बोल पड़े और फिर क्षण भर को सन्नाटा छा गया, केवल वायु का चीत्कार रात के अँधेरे में गूँजता रहा।

पेत्रे ने अभी तक अपनी बात नहीं छोड़ी थी। उसने फिर पुकारा, "वाज़ील, तेरे पैर अभी स्वस्थ और शक्तिवान् हैं, लकड़ी कहीं न कहीं मिल ही जायगी, फिर रात भी ऐसी बहुत अँधेरी नहीं है...।"

"अगर आग जलाने के लिये कुछ ईंधन नहीं मिला तो सुबह होने से पहले हम लोग मर जायँगे," स्कूर्तू ने धीरे-धीरे सिर हिला कर सम्मति दी। "अपनी बन्दूक कंधे पर रख, समझा वाज़ील, और कुछ ढूँढ़ कर ला—जो कुछ भी मिले, उठा ला।"

वाज़ील ने कंधे बिचका कर कहा—"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी !" और बन्दूक उठा कर पीठ पर लटका ली और ऊबड़-खाबड़ बर्फ़ से ढकी ज़मीन पर, बिना विरोध किये, अपने डण्डे की सहायता से रास्ता टटोलता हुआ चल दिया। उसे इसकी कुछ परवाह न थी कि वह किधर चला जा रहा है। भला बताये कोई, कहाँ लकड़ी मिल सकती है, तिनका तक तो खोजे न मिले ?...अँधेरी तो रात, सफ़ाचट मैदान; न कोई झोपड़ा, न कोई पेड़, कोई बाड़ा भी नहीं ! यह भी तो नहीं कि किसी पुराने कुयें पर की लकड़ी मिल जाय; वह क्या ख़ाक खोज कर ले आये ? अपने को भाग्य के सहारे छोड़, गिरता पड़ता, वाज़ील रात्रि के अनन्त अन्धकार में धँसता चला जा रहा था।

चलते-चलते उसके दिमाग़ में विचारों की दौड़ हो रही थी, उलझे हुए, सुलझे हुये, पर विचार सब तरह के; कभी-कभी उसे कल्पित दृश्य

भी दीखने लगते । उसे ऐसा लगता मानो उसे इस लड़ाई और शीत
से कोई सरोकार नहीं है । कितने सुखदायक थे, ये दृश्य !

वाज़ील को लगा कि वह अपने सामने, हरी-भरी घाटी देख रहा
है जिसके बीच में से एक लम्बी सड़क निकल जाती है । सड़क के दूसरे
छोर पर, यहीं से दीखता है कि फलों के पेड़ों के बीच में छिपा हुआ
एक सुन्दर गाँव है । शाम का समय है, बैलों का एक झुण्ड उसी सड़क
से गाँव की ओर लौट रहा है । उसके पीछे किसान युवक हाथ में हरी
लकड़ी का डण्डा लिये चला जा रहा है ? युवक मस्त भाव से एक
तान छेड़ता जा रहा है—"दोइना !"—रह रह, दुगने उत्साह से ।

अपने आप ही प्रेरित हो वाज़ील ने सीटी द्वारा वही गाना बजाने
की चेष्टा की, पर पाले और ठण्ड से मारे हुये ओठों से गाने की स्वर
लहरी के स्थान पर बड़ी ही भद्दी "सी-सी" निकली ।

किन्तु दृश्य का वह युवक अब भी उसी सड़क पर, सूरज छिपने
के समय, अपने बैलों को हाँकता हुआ चला जा रहा था—पशुओं की
उड़ाई हुई धूल उसके हाथ और चेहरे पर जम रही थी...

सड़क लम्बी थी, पर उनको जल्दी क्या थी । ऐसा लगता था कि
न युवक को और न उसके पशुओं को ही समय की चिन्ता है ।

गाँव के अन्दर पहुँचने पर, बैल एक-एक करके अपने-अपने
छप्परों में जाने लगे । युवक आगे बढ़ता जाता था और बैलों का दल
संख्या में कम होता जाता था ।

वह अपने डण्डे को हवा में घुमाता हुआ आगे चल रहा था—
वही तान अलापता हुआ ।

कुछ बच्चे सड़क के किनारे मिट्टी खोदते हुये अपने सुअरों के झुण्ड
को लेकर, युवक और बैलों को आता देख एक ओर भाग गये । सूअर
अपनी फन्देनुमा दुम को हिला-हिला कर उछल रहे थे और बच्चे अध-
नंगे, फटी हुई कमीज़ें पहिने उनके साथ कूद रहे थे ।

लगभग हर घर के दरवाज़े के सामने कद्दुओं के ढेर लगे थे और किवाड़ों पर बन्दनवार लगे थे, मानो बड़े-बड़े विशाल मनुष्यों की मूँछें हों। सारे गाँव पर सुख, समृद्धि और सुस्ती का वातावरण छाया हुआ था। सब जगह चैन था—शान्ति थी और वह युवक अब अपनी प्रेमिका से मिलने जा रहा था।

अँधेरे में वाजील किसी चीज़ से टकराया और धड़ाम से घुटनों के बल जा पड़ा। गिरने पर चोट तो नहीं लगी, क्योंकि बर्फ़ की मोटी मुलायम तह थी, पर वह सुखमय, सुन्दर दृश्य ग़ायब हो गया। उसने अपने को फिर अकेला अँधेरे में काँपता हुआ पाया, सर्दी से अकड़ा हुआ; दूर से आते हुए तोप के धमाके ने क्षण भर में उसे अपनी पुरानी स्थिति पर लौटा दिया।

"लकड़ी—लकड़ी! मुझे तो लकड़ी ढूँढ़नी थी," वह बड़बड़ाया—"इस बर्फ़ में कहाँ से लकड़ी खोज लाऊँ? हे भगवान्! कैसी भयानक रात है; कोड़े की तरह हवा बदन पर मार कर रही है और बर्फ़ चेहरे पर सुई की तरह गड़ता है;—मैं लकड़ा कहाँ से लाऊँ?"

जाड़े से नीले पड़े हाथों से वह अपना बदन थपथपाता रहा। अपनी अँधाधुंध चाल में वह सड़क छोड़ चुका था, बस अन्धे की भाँति एक ओर चलता ही चला गया था। उसे अँधेरे में ज्यादा नहीं दिखाई दे रहा था; पर कहीं-कहीं जहाँ बर्फ़ की तह पतली थी, काले-काले ढेर दिखाई पड़ जाते थे—शायद मुर्दे घोड़े थे, पत्थरों का ढेर था, शायद पायल क़ी सड़ती हुई गाँठ थी—उस भयप्रद रात में कुछ भी हो सकता था। शायद कोई बड़ी डरावनी चीज़ हो—लड़ाई के दिनों में कुछ भी असम्भव न था...

वाजील काँप उठा। एक बार फिर उसके सामने वही शान्तिपूर्ण गाँव का दृश्य आ गया। एक बार फिर उसने देखा कि मकानों के सामने पीले-पीले काशी-फलों के ढेर लगे हैं और मेंहदी की आड़ के

पीछे से किसी युवती के कोमल स्वर में संगीत आ रहा था—वही गाना "दोइना !" जिसे वह युवक गा रहा था...

"लेकिन मुझे लकड़ी ढूँढ़नी है !" वाजील चिल्लाया। वह इन सुखमय स्वप्नों को दूर करने की जी-जान से चेष्टा कर रहा था। "दूसरे लोग जाड़े में बर्फ़ के मारे जमे जा रहे हैं और मैं इन सपनों में पड़ा हूँ ! कब तक ऐसा भटकता हुआ मारा-मारा फिरूँगा !"

उसने अपने चारों ओर आँखें दौड़ा कर देखा। दूर पर कुछ आगे बर्फ़ की सफ़ेदी में सड़क की काली लीक धुंधली-सी दिखाई पड़ रही थी—बहुत दूर नहीं थी, सड़क पर चलना आसान होगा।

धीरे-धीरे बड़े परिश्रम से वह कठिनाई से उस सड़क, कहीं जाने वाली पगडण्डी, की ओर बढ़ने लगा। ज़मीन ऊँची-नीची थी, वह थका हुआ था। सर्दी से उसके हाथ-पैर बेकाम हो रहे थे।

एकाएक वह चौंक कर खड़ा हो गया—वह सामने क्या है ? तीन प्रेत के समान मूर्त्तियाँ पास-पास खड़ी थीं—तीन कंकाल शायद उस निर्जन स्थान में, रात के क्षीण प्रकाश में और भी अधिक भयावह प्रतीत होते हुये !

उसका दिल बड़े ज़ोर से धड़कने लगा। उसकी हथेलियाँ पसीने से भीग कर गीली हो गईं,—ये सामने कौन थे ! ओह, रात में कैसा पैशाचिक सन्नाटा छाया था ! किन्तु उसे भय का कारण ही क्या था ? भूत तो भूत ही होते हैं—उनसे क्या खास डर—एक ज़िन्दा 'बोश' (जर्मन) से मुठभेड़ हो जाना अधिक ख़तरा रखता था ! पर उस समय दिल ही दिल में वाजील समझ रहा था कि ज़िन्दा जर्मन से मुठभेड़ ही ऐसे मौक़े पर भली थी।

अपने भय को बड़े यत्न से कम कर के वाजील उन तीनों मूर्त्तियों की ओर बढ़ा। वे तीनों बिलकुल निश्चल खड़ी, उसे पास आने दे रही

थीं—तीन क्रास खड़े थे ! तीन आँधी-पानी से धोये और गलाये लकड़ी के क्रास थे ! तीन तिरस्कृत क़ब्रों पर तीन लकड़ी के क्रास !

वाजील ने धर्म की आज्ञानुसार अपने वक्षःस्थल पर अँगुली से क्रास का चिन्ह बनाया और दबी साँस से मृत व्यक्तियों के लिये प्रार्थना पढ़ी। वह चकित-सा खड़ा हो कर उनको ताक रहा था; अनुमान करने की चेष्टा कर रहा था कि ये तीनों मनुष्य जिनके जीवन-मार्ग का अन्त ये क्रास थे, कौन थे। क्या ये सिपाहियों की क़ब्रें थीं या स्त्रियों की थीं या शायद तीन छोटे-छोटे बच्चे यहाँ अनन्त निद्रा की गोद में सो रहे थे...तीन छोटे-छोटे बच्चे, भूख और ठण्ड के शिकार...लड़ाई शुरू होने के बाद कितने ही बच्चे भूख और ठण्ड द्वारा निगल लिये गये थे।...

अचानक वाजील को याद आ गया कि तीनों क्रास लकड़ी के थे...भारी लकड़ी के ! उसे तो लकड़ी खोजने भेजा गया था न ? इस रात में ?

उस मनुष्य की भाँति जो किसी ऐसे खज़ाने को ढूँढ़ निकालता है जिसे छूना वर्जित है, वाजील उन लकड़ी के क्रासों द्वारा मंत्र-मुग्ध-सा उनके सामने खड़ा रहा; हाथ लगाने की उसे हिम्मत नहीं पड़ रही थी और छोड़ कर चला जाना उसका हृदय स्वीकार नहीं कर रहा था।

बड़ा भयानक लालच उसके हृदय में तूफ़ान मचाये था। क्यों नहीं इन में से एक उखाड़ कर ले चले और बुझती हुई आग को जला दे ? मुर्दे तो मुर्दे ही होते हैं ! वे तो ऐसी गहरी नींद में सोये होते हैं कि उन्हें कुछ भी खबर नहीं हो सकती कि उनकी क़ब्र के ऊपर क्या हो रहा है। उनकी अटूट नींद के लिये परमात्मा का ही धन्यवाद है, नहीं तो शायद समझने की कोशिश करने लगें कि सिर पर क्या हो रहा है।

कुछ क़दम आगे बढ़ा कर उसने पहले क्रास पर हाथ रक्खा। पर

हाथ रखते ही ग्लानि से उसका हृदय भर आया—नहीं ! यह काम बुरा है ! मृत का आदर करना चाहिये, ज़िन्दों से भी अधिक उनका ख्याल होना चाहिये। इस काम पर परमात्मा और मनुष्य दोनों धिक्कारेंगे। मृत अपनी रक्षा नहीं कर सकते हैं; वे ऊपर चलने वाले की दया के भिखारी हैं—इसलिये क़ब्र को पूजा की वेदी की तरह मानना चाहिये, उसका आदर करना चाहिये...क़ब्र पर लगे क्रास को उखाड़ने के लिये छूना भी पाप है। क्रास उस मृत का आदर-चिन्ह है, जो दुनिया में किसी न किसी का मान्य अवश्य रहा है !

पर वाजील के दिल में लकड़ी के लोभ का सागर फिर लहरें मारने लगा। मुर्दे तो मुर्दे ही हैं, उनके दुख-सुख तो अब समाप्त हो गये। वहाँ तो ज़िन्दा मनुष्यों की जान पर बन रही है, लकड़ी के बिना शीत उन्हें निगले जाती है। वीर साहसी मनुष्य जो इस समय अपना कर्त्तव्य पालन कर रहे हैं, अवश्य ही ऐसे जीवितों को मारने से मृतकों का इस प्रकार अपमान करना भला है—वीर सैनिकों को, जो अपने देश की रक्षा में लगे हैं, बचाना अधर्म नहीं है ! अगर मृतक बोल सकते तो इस समय स्वयं उससे अपने क्रास उखाड़ कर ले जाने को कह देते—और वे अपने सब क्रास दे देते ! देश के रक्षक को लकड़ी देते—ठण्ड से मरते सैनिकों को जीवन-दान देते...

शीघ्र गति से आगे बढ़ कर वाजील ने पहले क्रास को बाहुपाश में जकड़ लिया और जमी हुई धरती से उसे उखाड़ने की चेष्टा की... क्रास नहीं उखड़ा...पेड़ की तरह जिसकी जड़ें ख़ूब नीचे तक फैली हैं वह अड़ा रहा, मानो कोई जीवित वस्तु हो, जो अपनी रक्षा के निमित्त जूझ रही हो। पर इस विरोध से वाजील का ख़ून खौल उठा—क्रास के अड़ने ने उसके अन्दर भिड़ने की वह भावना पैदा कर दी जो हर मनुष्य में होती है। वह निश्चल क्रास अब उसके लिये प्रतिद्वन्द्वी के समान था जिसके ऊपर विजय पाना उसका कर्त्तव्य था।

उस निर्जन मैदान में बड़ा विचित्र और विकट द्वंद्व होने लगा—अंधड़ साक्षात् यमपुरी के दूतों के समान गरज रहा था और वह नवयुवक उस लकड़ी के क्रास से कुश्ती लड़ रहा था ! वह जड़ पदार्थ उखाड़ने का विरोध कर रहा था मानो प्रतिद्वन्द्वी हो ! और युवक ऐसे लड़ रहा था, मानो सचमुच के शत्रु से लोहा ले रहा हो।

उसके दोनों हाथ क्रास के चारों ओर लिपटे हुये थे, मानो मनुष्य को जकड़ रक्खा हो; वाजील खींच रहा था; धक्का दे रहा था; हिला रहा था; पर वह लकड़ी का क्रास टस से मस नहीं हो रहा था। वाजील के गालों पर पसीने की धारें बह रही थीं। उसने अपनी टोपी उतार कर फेंक दी थी और पीठ से बन्दूक उतार कर नीचे डाल दी थी। अपनी पूरी शक्ति लगा कर वाजील पूर्ण शत्रुता के भाव से उखाड़ने का प्रयत्न कर रहा था !

एकदम से वह क्रास निकल आया...इतनी जल्दी उखड़ा कि उसे लेकर वाजील धड़ाम से ज़मीन पर गिर पड़ा और अपने धराशाई प्रतिद्वंद्वी के ऊपर फैला लेटा रहा—प्रतिद्वंद्वी जो एक लकड़ी के क्रास के अतिरिक्त कुछ भी न था।

वाजील हाँफता हुआ पड़ा था; विजय के उल्लास से उसके नेत्र चमक रहे थे; हर बार साँस लेते समय उसकी हिचकी-सी बँध जाती थी। वायु चीखती-चिल्लाती उसके ऊपर बर्फ़ के कण लादे दे रही थी।

पर वह जीत गया था ! क्रास उखड़ आया था। साथियों की जान बचाने के लिये, आग जलाने को लकड़ी मिल गई थी...सब अच्छा ही हुआ...

आग बुझ गई थी—कोयले भी काले पड़ कर ठण्डे हो गये थे और उनके साथ बातचीत भी बन्द हो गई थी ! पुराने कपड़ों के अलग फेंके हुये बंडलों के समान क़ैदी और सैनिक इधर-उधर बिखरे, राख के

आसपास हताश बैठे थे; उस मुसीबत की रात में दोनों के बीच कोई अन्तर न था।

अँधेरे में से किसी के आने का धीमा शब्द उन्हें सुनाई दिया। कुछ देर तक तो कुछ न सूझा, पर दूसरे ही क्षण वाजील उनके सामने खड़ा था; वह अपने पीछे कोई भारी काली विशाल छाया-सी घसीटे ला रहा था।

लकड़ी !

राख के आसपास पड़े मनुष्यों के मुख से प्रसन्नता की हुंकार उठी। वाजील के लौट आने पर उसका स्वागत करने वाले स्वरों में उत्साह, उल्लास, ख़ुशी सभी कुछ था। कई लोग तो उठकर खड़े हो गये और सर्दी से बेकाम अपनी अँगुलियों से अपनी जेबों में चकमक आदि ढूँढने की चेष्टा करने लगे। अकड़े हुये हाथ इस प्रसन्नता में भी ठीक-ठीक काम नहीं कर पा रहे थे।

वाजील कुछ नहीं बोला। उसकी साँस ज़ोर-ज़ोर से चल रही थी। रात के विषम अंधकार में क्रास को घसीट कर लाना बड़ा भारी युद्ध लग रहा था—लड़ाई थी बर्फ़, तूफ़ान और शीत से, विशेषकर अपनी आत्मा से...क्रास का उखाड़ना। इसलिए वह चुपचाप खड़ा रहा; और जैसे अन्तिम बार शरीर हिलाने की चेष्टा कर रहा हो। उसने थके हुये भाव से वह भारी क्रास लकड़ी की प्रतीक्षा करते हुये उन मनुष्यों के सामने डाल दिया।

ईंधन का असली रूप स्कुर्तू ने पहले-पहल देखा—वाज़ील क्या लाया था—श्राप के समान उसके मुख से निकला—"क्रास लाया है... क्रास...क्रास !"

ईंधन देखने दूसरे भी दौड़े आये और वाजील की लाई हुई लकड़ी को देखकर तरह-तरह की टिप्पणियाँ करने लगे।

बन्दियों ने सिर उठा कर निःशब्द हो, भाव-हीन नेत्रों से बात

करने वालों की ओर ताकना शुरू किया। वाजील गूँगा बना बैठा था। थकान से चूर हो वह बर्फ़ पर बैठ गया।

"क्रास !"—स्कूर्त चिल्लाया, "क्रास लाने की हिम्मत की !"

"है तो लकड़ी ही, और हम लोग सर्दी से मर रहे हैं !"—किसी ने प्रत्युत्तर देने का साहस किया।

"लकड़ी हो चाहे कोयला, है तो क्रास ! क्रास नहीं जलाया जा सकता !"

"जलाना पाप होगा।"

"भगवान् का कोप लगेगा !"

"मृतक भी शाप देंगे !"

"किन्तु हम लोग तो सर्दी के मारे जान दे रहे हैं..."

"मुर्दों का क्या भला होगा, यदि हम लोग मर जायँगे तो ?"

"हमें जीवित रह कर देश की रक्षा करनी है !"

"तमाम क़ब्रें बिना क्रास के पड़ी रहती हैं !"

"कैसी शर्म की बात है ! किसमें साहस है कि क्रास जलाये !"

एक साथ अनेक मुख बोल रहे थे। केवल वाजील और बन्दी चुप थे। लज्जा, ग्लानि और थकान के भार से वाजील मरा जा रहा था—वह कर ही क्या सकता था ? उसे कोई दूसरी लड़की मिली ही नहीं थी।

मनुष्यों के स्वर आपस की बहस में ऊपर चढ़ते और नीचे उतरते। तूफ़ान अपने चीत्कार से कभी-कभी इन विवाद करते मनुष्यों के शब्द को बिलकुल ढँक लेता था।

"मैं यह नहीं होने दूँगा !"—स्कूर्तू गला फाड़ कर ग़ुस्से में चिल्ला रहा था ! "मैं तुम लोगों का बर्फ़ में गल कर मर जाना अच्छा समझता; पर ईसा का क्रास जलाने न दूँगा !"

वह प्रौढ़ सैनिक अपनी बात पर अड़ा रहा। विशाल जाबवान् की

तरह वह अपने साथियों के सामने खड़ा था। उसके कपड़ों पर बर्फ़ की तह जमी थी, भद्दा चेहरा शीत से नीला पड़ रहा था। हिमकणों को गिराने की चेष्टा में वह सुन्न पैरों को पटक रहा था, हाथों से झटक रहा था और कपड़े झाड़ रहा था; पर अपने दल का नायक होने के कारण साथियों की धमकियाँ अथवा विनय की कुछ भी परवाह नहीं कर रहा था। "मर जाऊँगा बर्फ़ में दब कर, ईसा के इस पवित्र क्रास को जलने नहीं दूँगा...।"

शीत से अधमरे मनुष्यों का वह दल अब चुप हो गया। खोई हुई बकरी-भेड़ों के समान बाहों में सिर छिपाये, ठण्डी राख के आस-पास, शत्रु से शत्रु सटा कर लेटा हुआ था। मुसीबत ने सब को एक बना दिया था। आखिर ईश्वर के सामने तो सब मनुष्य ही थे। शीतकाल की भयानक रात की निर्दयता किसी के लिये कम अधिक नहीं हो सकती थी!

थोड़ी दूर अलग हट कर वाजील पड़ा था, सिर उस क्रास पर रखा था, जिसे इतनी दूर से लाने के लिये इतना परिश्रम किया था। उसे नींद नहीं थी; शीत ने उसे और भी अधिक सुन्न बना दिया था—वह कभी सोचने-विचारने वाला मनुष्य नहीं था। वह भी इस समय जीवन के प्रश्नों पर विचार कर रहा था।

यह युद्ध क्यों होता है? इस शीत में मुसीबत की, बलिदान की क्या ज़रूरत है, जब मनुष्य आराम से रह सकता है—क्यों? क्यों? आसमान पर परमात्मा क्या करता है?...बहुत दूर है? इन धार्मिक चिन्हों की, इस अंधविश्वास की, जिनका कुछ भी तत्व नहीं है, क्या आवश्यकता है? इनसे क्या लाभ है? राष्ट्रों में आपस में इतनी घृणा क्यों है? ये क्यों आपस में लड़-कट कर खून कर डालते हैं? क्यों क्यों?

आँधी उसके चारों ओर डोलती रही। बीच-बीच में सर्दी से

जकड़ा हुआ हाथ उठा कर वाजील आँखों पर से बर्फ़ झाड़ने की चेष्टा करता था।

सुहावने गर्म मौसम के बाद यह भयंकर जाड़ा क्यों आता है ? हम इतनी दूर क्यों पड़े हैं ? यह दूसरे की वस्तु की अभिलाषा क्यों ? यह तूफ़ान क्यों ? क्यों ? क्यों ?

वाजील की कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

वह शक्ति लगा कर उठ कर बैठ गया; रात ऐसी अँधेरी क्यों है ? इस सब का क्या मतलब है ?

आह ! वह धीमी रोशनी सी क्या है ? क्या सुबह होने वाला है ? क्या सबकी मुसीबतों का अन्त होने वाला है ?जीवन दाता सूर्य क्या अब आने वाला है ?

दूर के उस धुंधले प्रकाश को वाजील बड़े ध्यान से ताक रहा था। दाहिनी ओर बहुत दूर पर वह रोशनी सी थी—क्या सुबह होने वाला है ? क्या सचमुच सुबह होने वाला है ? लेकिन प्रकाश फैल तो नहीं रहा, पर आगे तो बढ़ रहा है—चल रहा है—सचमुच चल रहा है ! पास आ रहा है !...उसी की ओर आ रहा है !

बाद में...दिन के सुहावने प्रकाश में वाजील ने जब दूसरे लोगों को जो रात में सो रहे थे सुनाया कि रात में उसने क्या देखा था, तो वे लोग मानने को तैयार ही न हुये। पर वे लोग तो सो रहे थे और केवल वाजील जाग रहा था ! पर मनुष्य तो मनुष्य ही है। विश्वास न करना उसका शायद पहला कर्त्तव्य है......

वाजील ने देखा था कि एक सफ़ेद मूर्त्ति बड़ी स्थिर चाल से उसकी ओर चली आ रही है, बर्फ़ के ऊपर लम्बे-लम्बे डग रखती हुई; सफेद मूर्त्ति के चारों ओर प्रकाश का लबादा सा था—मूर्त्ति स्वयं प्रकाशयुक्त थी; और प्रकाश इतना तेज़ था कि वाजील को आश्चर्य हो रहा था कि ये सोते हुये मनुष्य क्यों नहीं जा-

प्रकाश मूर्त्ति के पीछे चमकीली धारा सी बह रही थी—पवित्र चरणों द्वारा चली हुई पृथ्वी जगमगा रही थी...क्योंकि वाजील की तरफ़ बर्फ के ऊपर होकर स्वयं ईश्वर का बेटा—ईसा आ रहा था—प्रभु ईसा मसीह !

रात्रि के अन्धकार से निकल कर प्रभु ईसा आ रहा था। उसका शरीर इतना प्रकाशमान् था कि वाजील सिर से टोपी उतार कर घुटनों के बल गिर पड़ा और श्रद्धा से हाथ जोड़ दिये।

वह सब मुसीबतें भूल गया था; उसके हृदय का तूफ़ान न जाने कहाँ ग़ायब हो गया। उसके सब प्रश्न हवा हो गये थे; सारे संशय दूर हो गये थे ! वह उन सारी बातों को भूल गया था जो अभी-अभी उसको आत्मा को खाये डालती थीं।

इस समय वह केवल अंधकार में पड़ा हुआ प्राणी था, खोया हुआ बालक था जिसके उद्धार के लिये ईश्वर स्वयं आया था ! वाजील की सारी काया पुलकायमान हो गद्‌गद् हो रही थी, क्योंकि प्रकाश का सागर उसकी ओर आ रहा था—वाजील की ओर—उस पापी वाजील की ओर जिसने मृतक का क्रास चुराया था !

लेकिन यह ईश्वर का बेटा अपनी पीठ पर क्या ला रहा था—कोई बड़ी विशाल भारी काली चीज़ थी......

अपना क्रास ला रहा था ! ईसा स्वयं अपना क्रास ला रहा था, क्यों ? ओह क्यों ? बड़े हलके पग धरता हुआ वह संसार की ज्योति आ रही थी कि मालूम पड़ता था कि उसके कंधों पर भारी क्रास का कुछ भार ही नहीं है, पर वाजील के कंधे अपने लाये हुये क्रास के भार से अब तक दर्द कर रहे थे।

प्रकाश की वह मूर्त्ति युवक सैनिक के पास रुकी नहीं, किन्तु वाजील ने उसका देव समान मुखड़ा देखा, उसकी आँखों में देवताओं का दयार्द्र-भाव देखा...जहाँ वाजील घुटने के बल बैठा था, वहाँ से धीरे-धीरे ईश्वर का बेटा निकल गया और शान्त भाव से धीरे-धीरे चल कर सोते हुये सैनिकों के पास पहुँच कर उनके बीच खड़ा हो गया और वाजील ने देखा, स्वयं अपनी आखों से देखा कि प्रभु ईसा ने राख पर अपना क्रास रख दिया और उज्ज्वल अग्नि शिखा बुझे हुये राख के ढेर से निकल पड़ी और क्रास के चारों ओर लिपट गई, यहाँ तक कि वह क्रास स्वयं ज्योति बरसाने लगा !

प्रभु ईसा स्वयं अपना क्रास लाया था जलाने के लिये, इसलिये कि देश के वीर रक्षक शीत से न मर जायँ !

इसके बाद वाजील के पास केवल धुँधली स्मृति है; क्या हुआ उसे ठीक-ठीक याद नहीं है। वह घिसटता हुआ उस पवित्र अग्नि के पास आया और गिर पड़ा था। इसके बाद बेहोश होकर जीवन दाता पवित्र आग के पास पड़ रहा था...

दिन निकल आया था।

एक के बाद एक सोते हुये मनुष्य जागने लगे और ओह ! क्या चमत्कार ! ठण्डी बुझी हुई राख जो रात तक थी, अब दहकते हुये अंगारों से चमक रही थी। गर्म, जान डालने वाली दमक उनसे निकल रही थी, इतनी तेज़ और सुखदायक कि जाड़े की शीत अब अतीत की दुखभरी स्मृति मालूम पड़ रही थी।

प्रत्येक मनुष्य अब धीरे-धीरे समझ रहा था कि यह कुछ चमत्कार हो गया है। सब का शरीर गरम था और हृदय में ख़ुशी भरी थी; मन आनन्दित था। इन सब का कारण किसी की समझ में नहीं आ रहा था। पीले, दुर्बल बन्दियों के भी नेत्र सुख की ज्योति से चमक रहे थे...

धमकाते हुये स्कूर्तू ने चिल्ला कर वाजील को बुलाया—आज्ञा के विरुद्ध क्यों गया ? नायक जब सो रहा था, तब क्यों बिना अनुमति के क्रास जला दिया ?

किन्तु नहीं ! वह दूर पर वाजील का लाया हुआ क्रास पड़ा हुआ है, शव की भाँति हाथ फैलाये हुये और भारी लकड़ी की बग़ल में बर्फ़ पर घुटनों के बल वाजील बैठा हुआ, हाथ बाँधे निकलते हुये सूर्य की ओर एकटक दृष्टि से देख रहा है...

स्कूर्तू ने अपने वक्षःस्थल पर पवित्र क्रास का चिन्ह बनाया।

"वाजील !" उसने पुकारा, "उदय होते हुये सूर्य में तू क्या देख रहा है ?"

वाजील उसकी ओर मुड़ा। उसके नेत्रों में अद्भुत ज्योति थी; किन्तु कुछ बोला नहीं और स्कूर्तू कभी नहीं जान सका कि वाजील उदय होते हुये सूर्य में क्या दृश्य देख रहा था।

रूस

मकर छुद्रा

लेखक—मैक्सिम गोर्की

घास के अनन्त मैदान के ऊपर से समुद्र की लहरों का उदास संगीत ठंडी नम हवा ला रही थी। किनारे पर लगी झाड़ियों की महक और जल का चट्टानों पर लग कर चीत्कार एक ही द्वार से आते प्रतीत होते थे। यदा-कदा तेज़ वायु द्वारा खदेड़े सूखे, पीले पत्ते 'खड़-खड़ सड़-सड़' शब्द करते हुये कैम्प के बीच में जलती हुई आग में आ गिरते थे और लपट को उत्साहित कर देते थे। हम लोगों को घेरे हुये अँधेरे में अग्नि के इस प्रकार प्रज्ज्वलित हो जाने से एक सनसनी फैल जाती; प्रकाश की चमक से क्षण भर के लिये शरद के पूर्व की रात्रि एक बार छिद जाती और बायीं ओर हम लोग देखते, सुदूर तक फैल हुआ घास का मैदान और दाहिनी ओर सीमाहीन सागर। समुद्र की ओर बैठा हुआ अधेड़ जिप्सी (बंजारा) मकर छुद्रा दिखाई दे जाता था। वह हम लोगों से लगभग पचास गज़ दूर बँधे कैम्प के घोड़ों पर पहरा रखने के लिये बैठाया गया था।

कंजरों के लम्बे ढीले कोट को शीतमयी हवा बार-बार खोल कर उसकी खुली छाती और ताँबे के रंग की भुजाओं पर निर्दय वार करती, पर उस पर तो मानो इसका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता था। अपना एक प्रकार से सुन्दर, स्वस्थ चेहरा मेरी ओर करके वह गम्भीर भाव से विचार-मग्न हो अपने पाइप पर कश खींचने लगा। वह मुख से और नथुनों से धुयें के गाढ़े बादल बाहर फेंक रहा था। मृत्यु-सम शान्त

मैदान पर फैले अंधकार पर उसकी स्थिर दृष्टि जमी थी। बिना रुके वह मुझसे बात कर रहा था; अपने को बचाने के लिये उसने कोई उपाय नहीं किया था, क्रूर अन्धड़ उस पर शीत की मार किये जाता था।

"अच्छा तो, तुम भी हमारे साथ चल रहे हो! रास्ता तो अच्छा ढूँढ़ा है, फालकन। हम सबको अपना भाग्य भुगतना है। चलो फिरो और दुनिया देखो और जब काफ़ी देख लो, तो चुपचाप लेट कर प्राण त्याग दो—बस यही सब कुछ है!"

"ज़िन्दगी? दूसरे लोग?" उसने कहा, "उँह, इससे तुम्हें क्या मतलब? तुम स्वयं भी तो जीवन का ही एक टुकड़ा हो। और दूसरे लोगों की क्या, वे तुम्हारे बिना रहते चले आये हैं और तुम्हारे बिना ही रहते चले जायँगे। क्या तुम यह समझते हो कि दूसरों को तुम्हारी आवश्यकता होगी? न तो तुम किसी की रोटी हो न लाठी, फिर किसी को तुम्हारी क्या ज़रूरत?

"तुम कहते हो, सीखना और सिखाना? क्या तुम कभी सीख सकते हो कि लोगों को खुश कैसे किया जा सकता है? नहीं, तुम नहीं सीख सकते। पहले तुम्हारे बाल सफ़ेद हो जायँगे तब तुम कहने लगोगे कि दूसरों को सीख देनी चाहिये। किन्तु तुम उन्हें सिखाओगे क्या? हर कोई जानता है कि उसे किस की आवश्यकता है। बुद्धिमान् सब पा जाते हैं, बेवकूफ़ों को कुछ नहीं मिलता। प्रत्येक मनुष्य स्वयं ही शिक्षा पाता है...

"मनुष्य जाति होती बड़ी विचित्र है। जब संसार में इतनी सारी जगह पड़ी है तब भी एक ही स्थान में सब जमा होकर एक दूसरे को घोंट कर मार डालने की कोशिश करेंगे," उसने हाथ फैला कर अनन्त मैदान को जताया—"और हमेशा काम पर जुटे रहेंगे। क्यों? किसके लिये? कोई नहीं जानता। तुम एक आदमी को हल पर काम करते

देखते हो तो सोचते हो; पहले तो यह मनुष्य अपनी शक्ति को धरती जोत कर पसीने में गलाये डाल रहा है, फिर इसी में अपनी लाश फैला कर सड़ जायेगा। उसका कुछ भी निशान नहीं बचता है—वह अपना बोया काट भी नहीं पाता, वरन् जैसा काठ का उल्लू पैदा हुआ था वैसा ही मर जाता है।

"क्या यह बात है कि वह पैदा ही इसीलिये हुआ है कि सारी धरती खोद डाले और अपनी क़ब्र न खोद पाये और मर जाये? क्या उसने स्वतंत्रता का मूल्य जाना है? क्या उसमें इस अनन्त, घास के मैदान को समझने की शक्ति है? सागर का गम्भीर संगीत सुन कर क्या कभी उसका हृदय उल्लसित हुआ है? हुँ! वह तो जन्म के समय से ही ग़ुलाम है और सारी ज़िन्दगी परतन्त्र बना रहता है, बस यही तत्व है। वह अपनी सहायता के लिये कुछ भी नहीं कर सकता; अगर कुछ अक़्ल आ जाय, तो शायद अपने गले में फाँसी लगा ले।

"और मैं अपनी सुनाऊँ—मुझे देखो ज़रा! मैंने अपने चालीस के ऊपर के जीवन में इतना देखा है कि यदि उसे लिखने बैठूँ, तो उस बोरे जैसे एक हज़ार भर जायँ। मुझे उस देश का नाम तो बताओ जहाँ मैं नहीं हो आया हूँ! तुमने तो शायद ऐसे-ऐसे देशों के नाम भी न सुने होंगे। जीवन का मज़ा लूटने का यही तरीक़ा है कि घूमो—ख़ूब घूमो—हर नई जगह थोड़ी-थोड़ी देर रुक लो। और क्यों नहीं? आख़िर दिन-रात भी तो हमेशा एक दूसरे का पीछा संसार भर में करते फिरते हैं, कभी रुकते ही नहीं। मैं तो तुम्हें यही राय दूँगा कि हमेशा चलते फिरते रहो और अगर जीवन के विचारों से ऊबना नहीं चाहते, तो उन्हें इस प्रकार पास न फटकने दो, क्योंकि असली बात तो यह है कि जीवन के बारे में जितना अधिक सोचोगे, उतनी ही अधिक उससे तुम्हें घृणा होती जावेगी। मैंने भी यही अनुभव किया है। हाँ, फालन्न! मैं स्वयं वैसा रह चुका हूँ।

"मैं जेल काट चुका हूँ; गालीसिया में सज़ा भुगतता रहा और वहाँ दार्शनिक विचारों का मनन करने के लिये मेरे पास ढेरों समय था। मैं अपने से पूछा करता था: मैं इस संसार में क्यों आया हूँ ? ऐसे विचार जेल-जीवन में नवीनता लाने के लिये आते थे, क्योंकि वहाँ की ज़िन्दगी वास्तव में बड़ी ही निःसार थी, उसमें कुछ भी दिलचस्पी न थी। ऐसे मौक़ों पर जेल की खिड़की से बाहर के लहलहाते खेत देख कर हृदय से निकली हुई एक आह दबा कर बैठ जाता था। ऐसा लगता था कि किसी लोहे के औज़ार से दिल को मसल डाला हो!... हाँ, फालकन! सच बात यही है कि हम लोग संसार में केवल रहते ही हैं। कोई नहीं कह सकता कि क्यों ? किसे मालूम ? और पूछना व्यर्थ है। दुनिया में आकर रहो और जीवित रहो; हमेशा घूमते रहो और संसार देखते जाओ, फिर तुम्हें कभी उस चीज़ की अभिलाषा न रहेगी जो तुम्हारे पास नहीं है। कभी नहीं रहेगी। जेल में तो मैं अगर पाता तो अपने ही कमरबन्द से फाँसी लगा लेता। फालकन, मैंने सब भुगता है!

"हुँ! एक बार मैंने एक मनुष्य से बात की...वह तुम्हारी तरह रूसी था...तो उसने कहा, 'तुम्हें अपनी इच्छानुसार नहीं रहना चाहिये, वरन् जैसा परमात्मा ने निर्धारित किया है, वैसे तुम्हें चाहिये कि ईश्वर के चरणों पर गिर पड़ो और फिर जिस वस्तु के लिये प्रार्थना करोगे वह देगा।' और यह हज़रत स्वयं एक फटा-सा पुराना, हजारों छेदों वाला सूट पहिने थे। मैंने कहा कि अपनी प्रार्थना से एक नया सूट क्यों नहीं मँगवा लेते ? तो बिगड़ खड़े हुये और दुत्कार कर मुझे भगा दिया। और अब तक यह व्यक्ति सज्जनता, क्षमाशीलता और प्रेम पर उपदेश देता आया था। अगर मेरे शब्द उसे बुरे लगे, तो उसे मुझको क्षमा करना चाहिये था। दुनिया में ऐसे सिखाने वाले भरे पड़े हैं जो तुम्हें सिखाते हैं, कम खाओ, लेकिन खुद दिन में दस बार खाते हैं!..."

आग की ओर एक बार थूक कर वह चुप हो गया और तम्बाकू से अपना पाइप भरने लगा। वायु अब अपना वेग कम कर धीमे स्वर में

सिसकती मालूम पड़ती थी। अँधेरे में घोड़े हिनहिना उठते थे और तम्बुओं की ओर से कोमल, मधुर, उदास, शोक-संगीत का स्वर वायु के झोंकों पर उतराता आ जाता था। गाने वाली, मकर की लड़की, सुन्दरी नोनका थी। मैंने उस गम्भीर, मृदु स्वर को सुनते ही उसकी आवाज़ पहिचान ली थी। उसकी आवाज़ में सदैव एक करुण, असन्तुष्ट अभिलाषाओं से भरी कसक का भाव रहता था—चाहे वह गाना गाती हो अथवा केवल आपसे 'गुड मार्निंग' कहती हो। उसके गेहुएँ चेहरे पर पराजित सम्राज्ञी के बुझते हुये गर्व की अग्नि की चमक रहती थी। उसके भूरे नेत्रों में दुख के प्रतिबिम्ब के अन्दर अपने अनुपम सौन्दर्य की। शक्ति की आभा झलकती थी। वह अपने से भिन्न प्रत्येक वस्तु को नीची दृष्टि से देखने वाली स्त्री थी।

मकर ने मेरे हाथ में अपना पाइप थमा दिया।

"एक दम मारो! मेरी लड़की अच्छा गाती है न? क्या कहते हो? क्यों? अगर एक ऐसी ही बालिका तुम्हें प्रेम करे तो कैसा हो? तुम प्रेम नहीं करोगे? यह अच्छा है! ठीक कहते हो। कभी स्त्रियों का विश्वास नहीं करना, उनसे अलग ही रहना अच्छा है। युवती को चुम्बन करना मेरे पाइप पर दम लगाने से अधिक रुचिकर और सुखदायी अवश्य है...किन्तु स्त्री का चुम्बन लेते ही तुम्हारे हृदय की स्वतन्त्रता नष्ट हो जाती है। स्त्री तुम्हें ऐसे बंधनों से बाँध लेती है जिन्हें न तुम देख सकते हो, न तोड़ कर फेंक सकते हो। तुम्हें अपनी आत्मा भेंट कर देनी पड़ती है और बदले में कुछ नहीं पाते हो। तुम मेरी बात मानो, स्त्री से सदैव सावधान रहना। वे सब नागिनें होती हैं...झूठ कैसा बोलेंगी, 'मैं तुम्हें संसार की हर वस्तु से अधिक प्रेम करती हूँ,' और फिर भी यदि कभी ग़लती से एक पिन भी तुमने उसके चुभा दिया तो खाने को दौड़ेगी। मैं सब जानता हूँ! हे भगवान्, मैं कितनी अच्छी तरह जानता हूँ! अगर तुम सुनना चाहते हो फालकन, तो मैं तुम्हें

एक कहानी सुनाऊँगा। मगर मेरी बात मान तो लो, कभी सावधानी कम न करना; इससे हमेशा स्वतंत्र रहोगे।

"एक समय में एक नवयुवक जिप्सी (खानाबदोश) लोक्यो जोबार नाम का रहता था। आसपास के सारे देश, हंगरी, बोहेमिया, स्लावोनिया उसे जानते थे, क्योंकि वह साहसी युवक था। उस समय सारे देश में कोई गाँव ऐसा नहीं था, जहाँ पर चार-छः मनुष्य लोक्यो जोबार के खून के प्यासे न हों। पर फिर भी वह जिन्दा था। अगर उसे कोई घोड़ा पसन्द आ जाय, तो फौरन चढ़ कर भाग निकलता था। अगर पल्टन की पल्टन घोड़े की रखवाली करती हो, तो भी साफ़ निकाल ले जाय! उसे न मनुष्य का भय था, न ईश्वर का। दिल का ऐसा कट्टर कि यदि यमराज भी सेना का ब्यूह बना कर मोर्चा लें, तो उनसे भी एक बार भिड़ जाय! मैं तो यही समझता हूँ कि शैतान की ठोड़ी भी ज़बोार के प्रबल मुष्टि-प्रहार को चख सकती थी।

"खानाबदोशों का एक-एक दल, एक-एक कैम्प उसे पहिचानता था। उसे केवल घोड़ों से प्रेम था और किसी से नहीं, और वह भी क्षणिक। एक बार नये घोड़े पर सरपट भाग निकला और मन भर गया। घोड़ों के बेचने से जो रुपया मिलता था, वह कोई भी माँग ले, देने में कुछ भी आनाकानी नहीं। उसके पास कोई चीज़ ऐसी नहीं थी जिसमें दूसरों को हिस्सा देने को वह तैयार न हो। अगर एक बार कोई दिल भी माँग बैठे, तो फ़ौरन चीर कर सामने रख दे, केवल इसलिये कि किसी के काम तो आया। लोक्यो ज़ोबार ऐसा अनोखा युवक था!

"उस समय हम लोगों का दल बूकोवीना में भ्रमण कर रहा था—दस वर्ष पहले की बात है। एक बार बसन्त ऋतु में—मुझे ऐसा याद है मानो कल की ही बात हो, हम लोग आराम कर रहे थे। मैं था, दानीला, वृद्ध सैनिक जो कोस्सूथ की ओर से लड़ चुका था, बुड्ढा नूर और दूसरे लोग थे। राद्दा, दानीला की लड़की भी हमारे साथ थी।

"तुमने मेरी नोनका को देखा होगा ? देखा है न ? लड़कियों में रानी नहीं जँचती ? किन्तु राद्दा का नोनका से क्या मुकाबिला था; दोनों की समानता करना नोनका के लिये बड़ा भारी सौभाग्य हो जायगा। राद्दा के रूप का वर्णन शब्द नहीं कर सकते। शायद वायलिन की झनकार से कोई उसको बयान कर सकता हो। किन्तु वही संगीतज्ञ इसमें सफल होगा, जो अपनी आत्मा की भाँति अपने वायलिन को परख सकता है।

"पता नहीं कितने वीर हृदयों का राद्दा ने नाश किया था। भगवान् जाने कितने मर मिटे। एक बार एक बूढ़े अमीर ने उसे देख पाया। उस पर दृष्टि पड़ते ही भौंचक्का-सा खड़ा रह गया। अपने घोड़े पर बैटा ऐसा उसे ताकता रह गया, मानो बेहोश हो। ख़ूबसूरत तो वह ऐसा था कि नवयुवकों को मात दे,—उसकी जीन पर सोने का काम था और जब-जब घोड़ा हिनहिना कर उछले, बग़ल में लटकती हुई उसकी तलवार चमक उठती थी—सारी म्यान पर रत्न जड़े थे। उसकी टोपी पर चमकीली नीली मखमल आसमान को लजा रही थी...बड़ा भारी अमीर था वह! वह राद्दा को घूरता ही रहा और फिर बोला, 'अगर एक चुम्बन दोगी तो बदले में तुम्हें एक थैली भर धन दूँगा!' उसने केवल अपना मुँह फेर लिया और चुप रही। 'माफ़ करना। अगर बुरा मान गई हो, तो सिर्फ़ एक बार मुस्करा कर ही ख़ुश कर दो, ज़रा-सा!' इस प्रकार अपना गर्व कम कर उसने थैली उसके कदमों में फेंक दी—थैली क्या, भाई, बड़ा-सा थैला था। किन्तु राद्दा ने ठुकरा कर उसे धूल में फेंक दिया। उसका उत्तर यही था।

'आहा! ऐसी लड़की हो तुम?' अमीर ने सकपका कर कहा, और हण्टर फटकार कर, धूल का ग़ुबार उड़ा कर तिड़ी हो गया।

"और अगले दिन वह फिर आया—'इसका बाप कौन है?' तेज़ आवाज़ में पुकार कर पूछा कि सारा कैम्प दहल गया। दानीला सामने निकल कर आया। 'अपनी लड़की मुझे बेच दो, चाहे जो दाम लगा

दो।' किन्तु दानीला ने उत्तर दिया, 'बेचने का कायदा तो सिर्फ़ भले मानुसों के यहाँ होता है। वह मवेशी से लेकर आत्मा तक बेच सकते हैं। मैं कोस्सूथ के झण्डे के नीचे लड़ चुका हूँ, मैं कुछ न बेचूँगा।' सुनते ही अमीर का हाथ तलवार की ओर लपका। वह ग़ुस्से से लाल हो रहा था। तलवार निकालने से पहले ही हम लोगो में से एक ने जलती हुई दियासलाई उसके घोड़े के कान के पास रख दी। घोड़ा उसे लेकर ऐसा भागा कि उसे कुछ करने का अवसर ही नहीं मिला। उसी दिन हम लोगों ने डेरा उठा लिया और आगे चल पड़े। दो दिन तक हम चलते रहे। पर अगले दिन वह फिर आ गया और कहने लगा, 'सुनो तुम लोग! मैं ईश्वर को साक्षी करके कहता हूँ कि मेरा मन साफ़ है। तुम पत्नी के रूप में मुझे इस लड़की को दे दो। मैं बड़े सुख से रक्खूँगा और मेरी हर चीज़ में तुम्हारा हिस्सा होगा। मैं बड़ा अमीर हूँ।' मारे जोश के वह ऐसा काँप रहा था, जैसे आँधी में घास का पत्ता काँपता है। उसका घोड़ा हाँफ रहा था।

" 'बोल बेटी, तू बोल,' अपनी दाढ़ी के अन्दर ही अन्दर दानीला बड़बड़ाया।

" 'अगर सिंह की बच्ची अपनी ख़ुशी से भेड़िये की माँद में रहने चली जाये तो क्या बन जायगी ?'—राद्दा ने पूछा।

"दानीला ठहाका मार कर हँसा और हम लोग भी हँसे।

" 'शाबास, ख़ूब कहा! वाह बेटी! सुना हुज़ूर! यह बात हो ही नहीं सकती। अब तो तुम अपने लिये एक नन्हीं-सी बकरी ढूँढ़ लाओ। वह बड़ी सीधी होती है।'

"और हम लोग आगे-आगे चल दिये। अमीर ने अपनी टोपी उतार कर ज़मीन पर फेंक दी और घोड़ा दौड़ा कर भाग खड़ा हुआ। घोड़े की टाप से धरती हिलती मालूम पड़ती थी—इतना तेज़ भागा वह। फालकन, ऐसी विचित्र लड़की थी राद्दा!

"हाँ, तो एक दिन हम लोग शाम को बैठे सुन रहे थे। संगीत की स्वर-लहरी घास के मैदान के ऊपर से बह कर आ रही थी। बड़ा स्वर्गीय संगीत था। ऐसा लगता था कि हमारा खून जोश के मारे उबला पड़ रहा है और हमें आह्वान सुन कर कहीं चल देना चाहिये। संगीत सुन कर हमारे हृदय में बड़ी विचित्र-सी इच्छा पैदा हो रही थी, कि या तो जीवन त्याग दें अथवा संसार के राजा बन कर ही जीवन का उपभोग करें। फालकन, ऐसा उत्साहित करने वाला वह संगीत था।

"और संगीत पास आता ही गया। हम लोग अब देखते हैं कि अंधकार में से एक घोड़ा निकल कर आया—और घोड़े पर बैठा हुआ एक मनुष्य वायलिन बजाता आ रहा है। आग के ढेर के पास रुक वह बजाना बन्द कर देता है और हम लोगों का मुस्करा कर अभिवादन करता है।

"'अहा ! ज़ोबार, तुम हो !' दानीला खुशी से चिल्ला उठा।

"वह लोक्यो ज़ोबार ही था। उसकी मूँछ का सिरा बल खा कर नीचे की ओर लटकता हुआ लम्बे गहरे भूरे वालों के गुच्छे में मिल रहा था। उसके नेत्र दो उज्ज्वल नक्षत्रों की भाँति चमक रहे थे। उसकी हँसी में सूर्य्य के प्रकाश की प्रफुल्लता थी और खुदा जानता है, बिलकुल मालूम पड़ता था कि मूर्त्ति के समान तराशा गया हो—घोड़ा और सवार एक ही पत्थर से काटे गये हों। सुलगते हुये अङ्गारों की रोशनी में वह खून में सराबोर-सा लगता था; उसके हँसने पर उसकी मनोहर दंत-पंक्ति चमक जाती थी। ईश्वर साक्षी है, मैं तो पहली ही नज़र में मोहित हो गया और उसने अच्छी तरह देख भी नहीं पाया था कि मैं भी इस दुनिया का एक बाशिन्दा हूँ।

"हाँ, फालकन, दुनिया में अक्सर ऐसे अद्भुत व्यक्ति मिल ही जाते हैं। बस एक बार आँखों में आँखें डाल कर देख लिया और तुम्हारी

आत्मा उनकी हो गई। और यह बात नहीं कि पुरुष का अपने ऊपर इतना प्रभाव देख कर झेंप लगे, वहाँ तो तुम्हें उसकी दोस्ती का गर्व होने लगता है। ऐसे आदर्श पुरुषों से मेल-जोल रखने से स्वयं अपना ही सुधार होता है। सुनो दोस्त, मैं तो यह कहता हूँ कि उसके समान संसार में आदमी कम ही मिलेंगे। और ऐसा होना भी चाहिये। अगर सब चीज़ें संसार में अच्छी होने लगें, तो फिर अच्छाई का मज़ा ही क्या, वह तो फिर बुराई हो जायगी। बस, असल बात यही है। किन्तु अब सुनो आगे क्या हुआ।

"राद्दा ने कहा—'तुम बड़ा सुन्दर बजाते हो, लोक्यो। ऐसे सुमधुर स्वरों का वायलिन तुम्हें किसने बना कर दिया?'

"लोक्यो हँसने लगा—'इसे मैंने खुद ही बनाया है! यह लकड़ी का नहीं बना है। मैंने इसे एक लड़की के वक्षःस्थल से, जिसे मैं बहुत प्यार करता था, बनाया है। इसके तार उसी की हृदय-तंत्री के तार हैं। बहुत दुरुस्त तो नहीं बना है, लेकिन कमान हाथ में आने पर इसे वश में कर लेता हूँ। समझीं?'

"यह तो तुम जानते ही होगे कि हम जिप्सी लोग हमेशा स्त्रियों का मज़ाक ही बनाते हैं ताकि वे लोग कभी हमारे हृदयों को हाथ से छीन न लें; हम लोग तो ऐसा काम करते हैं कि वे खुद हम पर मरने लगें। लोक्यो ने भी इसी विचार से ऐसा उत्तर दिया था, पर फल उलटा ही हुआ। राद्दा ने मुँह फेर लिया और जम्हाई लेते हुए बोली—'उँह! लोगों ने तो मुझे यह बताया था कि लोक्यो बुद्धिमान् और चतुर है। कैसा झूठ बोलते हैं लोग!' यह कह कर वह चली गई।

"'अरे मेरी हंसिनी! तुम तो बिगड़ कर चल दीं।' लोक्यो ने कहा, और घोड़े से कूद कर बोला—'लो भाइयो, मैं भी आ गया!'

"'आओ भाई, आओ। तुम तो हमारे मेहमान हो, मेरे शेर!'—दानीला ने उत्तर दिया। उससे गले मिल कर हम लोग इधर-उधर की

बातें करते रहे और फिर सोने चल दिये।.. खूब गहरे सोये...अगले दिन सुबह देखा कि ज़ोबार ने सिर पर पट्टी लपेट रक्खी है। क्या हो गया यहाँ ? उसने उत्तर दिया कि घोड़े का खुर लग जाने से कनपटी पर चोट आ गई है।,

"हम लोग 'उँह' कह कर चुप हो गये। हम समझ गये थे कि कैसे घोड़े ने लात मारी है। मन ही मन हँसते रहे। दानीला भी मुस्कराया। क्या लोक्यो राद्दा के योग्य नहीं था ? नहीं, यह बात नहीं थी ! लड़की चाहे प्रभात की तरह ही सुन्दरी क्यों न हो, किन्तु यदि उसकी आत्मा छोटी है, वह मन की खोटी है, तो फिर उसके गले में सोने की थैली भर कर ही क्यों न लटका दो, वह कभी भी भली नहीं बनेगी; जैसी पहले थी वैसी ही रहेगी। हाँ, भैया असल बात यही है।

"उस स्थान पर हम लोग ऐसे ही जीवन व्यतीत करते हुये टिके रहे। हम लोगों का काम अच्छा चल रहा था और ज़ोबार हमारे साथ ही रहता था। उसका जैसा साथी ढूंढ़े न मिले, फालकन ! प्रौढ़ मनुष्य की तरह बुद्धिमान् और गम्भीर, हर चीज़ में होशियार; वह तो रूसी और हंगेरियन भाषायें भी लिख, पढ़ और बोल सकता था। जब वह बोलता था तो ऐसा मन करता था कि खाना-पीना, सोना छोड़ कर हमेशा उसकी बातें ही सुनते रहें। और वायलिन तो ऐसा बजाता था कि अगर मैं झूठ न बोलता हूँ, तो उसकी जोड़ का बजाने वाला दुनिया में अभी पैदा ही नहीं हुआ। उसकी कमान के तारों पर पहली बार फिरते ही हृदय नाच उठता था; धड़कन बढ़ जाती थी और दुबारा खिंचते ही लगता था कि दिल ने धड़कन बन्द कर दी। हम लोगों की ओर मुस्करा-मुस्करा कर वह बजाये ही जाता था। उसके वायलिन की गत सुन-सुन कर हँसने और साथ ही रोने की भी एक ही समय इच्छा होती थी। कभी लगता कि स्वर में किसी आपत्ति के मारे दुखिया की आह भरी पुकार है, जो अपनी करुणा से तुम्हारा दिल तोड़

डालेगी। फिर लगता कि बाजे से मैदान की परियों के परिहास की गूँज निकल रही है; फिर वायलिन आकाश की ओर मुख कर परी-देश की दुःखान्त कहानियाँ सुनाता प्रतीत होता। कभी लगता कि किसी बालिका के भरे हृदय की सिसकती हुई आवाज़ है, जिसका प्रेमी अब उससे विदा माँग रहा है। कभी प्रेमी के प्रफुल्लित आह्वान का फव्वारा छूटता मालूम पड़ता कि अपनी प्रिया को विस्तृत 'स्टेपी' (मैदान) में बुला रहा हो। एकाएक देखो, जलप्रपात के समान उत्साह से भरी स्वर लहरी झरने लगी; ऐसा लगने लगा कि नभ में सूर्य देवता भी गत सुन कर नाचने लगेंगे! फलकन, लोक्यो ज़ोबार का संगीत ऐसा विलक्षण था।

"उसका संगीत सुन कर बदन का रोम रोम खिल उठता था और सारा अस्तित्व ही उस बजाने वाले की गुलामी स्वीकार करता मालूम पड़ता था। और यदि इसी समय लोक्यो चिल्ला पड़ता—'भाइयो! हथियार उठाओ,' तो उसी क्षण हम लोग जिसे वह बताता, उसमें अपने-अपने खंजर भोंक देते। वह हम से जो चाहता, करा सकता था। हम लोग उस पर जान देते थे। वह हम लोगों का पूज्य देवता-सा था। केवल राद्दा उसकी ओर आँख उठा कर भी नहीं देखती। सिर्फ़ इतनी ही बात न थी, वह उसका मज़ाक भी बनाती थी। ज़ोबार का दिल तो उसने अपने अटूट फन्दे में फाँस ही लिया था। लोक्यो दाँत पीस कर मूँछों पर ताव देता रह जाता। कभी-कभी हम उसकी चमकीली आँखों में पाताल की भीषण गहराई का भास पाकर काँप उठते। रात को यह निडर उद्दंड लोक्यो, मैदान में दूर तक निकल जाता और फिर सुबह होने तक अपने वायलिन को रुलाता। उसके वायलिन का स्वर विलाप करता हुआ मालूम पड़ता था, क्योंकि ज़ोबार की स्वतन्त्रता मर चुकी थी। अपने तम्बुओं में पड़े हम लोग जागते रहते और सोचते—'अब क्या किया जाय? यह तो हम अच्छी

तरह जानते थे कि यदि दो चट्टानों की टक्कर होती है, तो बीच में पड़ना मृत्यु को निमन्त्रण देना है। यही तो सारी बात थी, फालकन !

"एक दिन हम लोग बैठे हुये अपने रोज़गार के बारे में बातचीत कर रहे थे। हम लोगों का वार्त्तालाप अब रूखा होता जा रहा था, इसलिये दानीला ने कहा—'एक गाना सुनाओ, ज़ोबार ! ज़रा एक राग छेड़ कर हम लोगों का दिल ही बहला दो। उसने राद्दा की ओर नज़र डाली। राद्दा हम लोगों से ज़रा हट कर, आकाश की ओर मुख कर घास पर लेटी हुई थी। लोक्यो ने अपना वायलिन सम्हाला। कमान के तारों पर फिरते ही वायलिन बोल उठा, मानो सचमुच किसी युवती के हृदय की आवाज़ हो। लोक्यो ने गाया—

'देखो ! मैं फैले हुए लम्बे-चौड़े मैदान में उड़ा जा रहा हूँ और मेरा हृदय उल्लसित है। बाण के वेग से मेरा घोड़ा सनसनाता जाता है, क्योंकि पवन-देव ने स्वयं उसकी नाल ठोकी है।'

"राद्दा ने अपना सिर घुमाया, कुहनी के बल थोड़ा उठी और लोक्यो की आँखों में आँखें डाल कर ज़रा मुस्कराई। ज़ोबार का चेहरा अरुणोदय के आकाश के समान दमक उठा।

'शाबास ! आओ, चौकड़ी भर सरपट भाग चलें। रात्रि को त्याग दिन का द्वार पकड़ें ! आओ, कुहरे का आवरण हटा कर देखें, कहाँ सूर्य रश्मियाँ पर्वत-शृंगों का चुम्बन करती हैं।

'आओ ! हम अरुण देव के साथ प्रभात से संध्या तक उड़ेंगे। हम आकाश में सूर्य का प्रकाश फैला देंगे। आओ, मध्याह्न से अर्द्ध रात्रि में कूद पड़ें। चलो, हम चन्द्रमा पर चढ़ कर विश्राम करेंगे।'

"ऐसा गाना गाया उसने ! आजकल ऐसा कोई भी नहीं गा सकता। किन्तु राद्दा ने महज़ यह कहा, मानो बैठी चलनी में पानी उँड़ेल रही हो; 'अगर मैं तुम्हारी जगह होऊँ लोक्यो, तो कभी इतना ऊँचा न उड़ूँ। अगर तुम वहाँ से लुढ़क पड़े और नाक कीचड़ में सन

गई, तो तुम्हारी मूँछें गन्दी हो जायँगी। ज़रा सम्हल कर उड़ना।' लोक्यो उसकी ओर कुछ देर तक घूरता रह गया, कुछ बोला नहीं। अपने गुस्से को पीकर उसने गाना ज़ारी रक्खा—

'शाबास! और कल सुबह हम लोग झाँक कर देखेंगे कि हम लोग अभी तक सोये हैं। फिर हम सूर्य्य की लाल किरणों पर बैठ कर स्वर्ग की ओर उड़ चलेंगे।'

" 'वाह, क्या गाना है!' दानीला ने उठ कर कहा, 'अपने जीवन में ऐसा संगीत नहीं सुना। अगर झूठ कहता हूँ तो नरक का पाप लगे!' बुड्ढा नूर केवल अपनी मूँछें सहलाता रहा और कुछ न बोला; बस कंधे हिला दिये। ज़ोबार के इस गाने ने हम सब पर असर किया था। पर वह राद्दा को ख़ुश न कर सका।

" 'एक बार एक मक्खी भी कोयल के स्वर की नक़ल करते समय इसी प्रकार भिनभिनाने लगी थी।' वह बोली। हम लोगों को ऐसा लगा, मानो हम पर सैकड़ों घड़े पानी पड़ गया हो।

" 'अब शायद तुम कोड़े का मज़ा चखना चाहती हो, क्यों राद्दा?' उसका बाप बोला। लेकिन ज़ोबार अपनी टोपी ज़मीन पर पटक कर बोला: 'ठहरो, दानीला; इसकी कोई ज़रूरत नहीं है। तेज़ घोड़े को ज़रा कड़े हाथ और मज़बूत हण्टर की आवश्यकता होती है। मैं तुम्हारी लड़की से शादी करने की इज़ाज़त चाहता हूँ।'

" 'वाह, वाह! खूब कहा;' दानीला ने कहा, 'अगर तुम्हारी यही इच्छा है तो कोशिश कर लो। सफल हुये तो अच्छा है।'

" 'बहुत ठीक!' लोक्यो ने उत्तर दिया और राद्दा की ओर मुड़ कर बोला: 'अच्छा, मेरी कट्टो, ज़रा अपना घमंड छोड़ कर मेरी बात सुनो! मैंने तुम्हारी जैसी बहुत देखी हैं, अनेक! किन्तु किसी ने यदि दिल छीन लिया है तो तुमने। अहा, राद्दा, तुमने मेरी आत्मा को बन्दी बना लिया है...अच्छा तो बोलो, मैं अब क्या करूँ? जो होना होगा,

हो कर रहेगा...इस दुनिया में ऐसा घोड़ा नहीं है जो तुम्हें मर्ज़ी के खिलाफ़ उड़ा कर ले जाय! मैं ईश्वर के सामने, तुम्हारे पिता और उपस्थित लोगों के सामने, अपनी इज़्ज़त के नाम पर पूछता हूँ कि मेरी धर्मपत्नी बनोगी या नहीं। लेकिन सावधान रहना, मेरी स्वतन्त्रता में बाधा मत डालना, क्योंकि मैं स्वतंत्र हूँ और जैसे मैं चाहूँगा, रहूँगा!' यह कह कर, मुख से दृढ़ भाव टपकाता हुआ, वह उसके पास आया। उसके नेत्रों से ज्योति बरस रही थी। उसे पकड़ने के लिये वह आगे बढ़ा......'अहा,' हम लोगों ने मन में कहा, 'आखिरकार राद्दा ने इस बनैले घोड़े को वश में कर ही लिया।' किन्तु एकाएक हमने देखा कि ज़ोबार के हाथ सम्हलने के लिये हवा में उठ गये और पीठ के बल कटे वृक्ष की तरह गिर पड़ा, मानो किसी ने गोली मार दी हो!

"वह ऐसा अचानक गिरा कि हम भौंचक्के रह गये। क्या बात हो गई? यह राद्दा की करतूत थी। उसने अपने कोड़े को उसके पैरों में लपेट कर झटके के साथ अपनी ओर खींच लिया था, इससे लोक्यो धड़ाम से जा पड़ा।

"और फिर वह चुपचाप लेट गई और आकाश की ओर देख कर मुस्कराने लगी। लोग आशंकित हृदय लेकर प्रतीक्षा करने लगे कि लोक्यो क्या करता है। पर वह अपनी कनपटी दबाये, ज़मीन पर बैठा रहा, मानो डर रहा हो कि घाव खुल न जाय। फिर वह जल्दी से उठा और हम लोगों की ओर मुड़ कर एक बार भी बिना देखे, मैदान की ओर चला गया। नूर ने धीरे से मुझे आदेश दिया, 'निगरानी रखना!' और मैं भी ज़ोबार के पीछे मैदान की तरफ़ अंधकार में विलीन हो गया। ऐसे दिन थे वे, समझे फालकन!"

मकर ने अपने पाइप की राख झाड़ कर ताज़ी तम्बाकू भरी।

मैंने अपना लबादा चारों तरफ़ अच्छी तरह लपेट कर मकर के धूप और वायु द्वारा दमकाये चेहरे को ताकना शुरू किया। गम्भीर, कठोर

मुद्रा बनाये वह कुछ बड़बड़ाता हुआ, जिसे मैं समझ नहीं पाया, सिर हिलाता रहा। हवा में उसकी भूरी घनी मूछें और बाल फहरा रहे थे। बिलकुल यह लगता था कि कोई प्राचीन विशाल बरगद का वृक्ष हो जो बिजली गिरने के बाद भी अकड़ा खड़ा हो। सागर और किनारा आपस में बात करते मालूम पड़ते थे और उनके वार्त्तालाप की भनक हवा उड़ा कर मैदान के ऊपर ले जा रही थी। नोनका ने अब गाना बन्द कर दिया था और बादलों ने आकाश में घेरा डाल कर रात को और भी अंधकारमय बना दिया था।

"लोक्यो धीरे-धीरे एक-एक क़दम बढ़ाता हुआ चल रहा था, सिर झुका हुआ, हाथ बेजान से लटकते हुए। नदी के पास घाटी में आकर वह एक चट्टान पर बैठ गया और कराहने लगा। उसके हृदय की व्यथा का शब्द सुन कर मेरा गला भर आया। परन्तु मैं उसके पास नहीं गया। शब्द मनुष्य को सांत्वना देने में कभी सफल नहीं हो सकते, क्यों भाई, है कि नहीं?...वह एक घंटे, दो घंटे, तीन घंटे तक वैसे ही पत्थर-सा, नदी के किनारे बैठा रहा।

"पास ही घास में मैं भी लेटा हुआ था। रात चाँदनी से नहा रही थी। चन्द्रमा ने सारे जगत् को रजतमय बना दिया था। सब बिलकुल साफ़ दिखाई देता था।

"एकाएक मैंने देखा कि तम्बुओं की ओर से जल्दी-जल्दी कदम बढ़ा कर राद्दा लोक्यो की तरफ़ चली आ रही है। उफ़, मेरी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा! जो कुछ भी हो, राद्दा थी लाखों में एक! वह उसके पास आई, पर उसने जैसे कुछ सुना ही नहीं। उसने अपना हाथ उसके कंधे पर रख दिया। चौंक कर लोक्यो ने अपने चेहरे से हाथ हटाये और सिर उठाया और देखते ही वह उछल कर खड़ा हो गया, उसका हाथ ख़ंजर की मूठ पर था! 'अरे यह लड़की को मार डालेगा!' मैंने मन में कहा। मैं भाग कर कैम्प से मदद लाने ही

वाला था कि मेरे कानों में यह वाक्य पड़े; 'फेंक दो खंजर अपना, नहीं तो तुम्हारा सिर उड़ा दूँगी! यह देखते हो?' और राद्दा ने एक पिस्तौल निकाल कर ज़ोबार के सिर की ओर नली कर दी। कितनी साहसी और उद्दड थी वह लड़की, फालकन! 'अब तो', मैंने मन में सोचा, 'दोनों जोड़ के हैं। देखें, क्या होता है।'

" 'मेरी बात सुनो,' पिस्तौल अपनी पेटी में लगाती हुई राद्दा बोली, 'मैं तुम्हारी हत्या करने नहीं आई हूँ, बल्कि सुलह करना चाहती हूँ! अपना चाकू फेंक दो!' उसने छुरा ज़मीन पर डाल दिया और गुस्से भरी दृष्टि से देखने लगा! बड़ा अनोखा दृश्य था, भाई! दो व्यक्ति खड़े थे, हिंसक पशुओं की भाँति एक दूसरे को घूरते हुये, मानो फाड़ कर खा जायँगे, पर दोनों ही वीर और आदर्श थे। चन्द्र-देव और मैं, यही दोनों, उस अनुपम दृश्य के साक्षी थे...तीसरा कोई नहीं।

" 'सुनो लोक्यो! मैं तुमसे प्रेम करती हूँ!' ज़ोबार ने सिर्फ़ कंधे हिला दिये, मानो हाथ पैर बँधे हों।

" 'मैंने तमाम युवक देखे हैं, किन्तु तुम सब से सुन्दर और बहादुर हो। बाक़ी तो केवल मेरे एक कटाक्ष पर अपनी मूँछें काट कर फेंक देंगे और मेरे क़दमों को चूमने लगेंगे। उनको तो इशारे भर की देर होती है। परन्तु इन बातों से मुझे कोई ख़ुश नहीं कर सकता। उनको तो मैं औरत बना कर चरा सकती हूँ। दुनिया में वीर जिप्सी कम हैं, बहुत ही कम, लोक्यो! मैंने अभी तक किसी को प्यार नहीं किया था, पर अब मैं तुम्हें प्यार करती हूँ। किन्तु मैं अपनी आज़ादी भी नहीं छोड़ सकती। उसे मैं तुम से अधिक प्यार करती हूँ। इसलिये मैं चाहती हूँ कि तुम दिल से, आत्मा से मेरे हो जाओ। सुना तुमने?'

"वह मुस्कराया, 'सुन लिया! तुम्हारे शब्दों से मुझे बड़ी ख़ुशी हुई। आगे कहती जाओ!'

" 'मुझे अभी यह और कहना है, लोक्यो : चाहे तुम कुछ भी करो, मैं तुम्हें अपना बनने को मज़बूर करूँगी। इसलिये मैं तुम्हें यही राय देती हूँ कि अब समय मत खोओ। मेरे चुम्बन और आलिंगन तुम्हारी राह देख रहे हैं—और प्रेम भरे होंगे ये चुम्बन और आलिंगन, यह बताती हूँ लोक्यो! मेरी भुजाओं के प्रगाढ़ालिंगन में फँस कर तुम अपना साहसी जीवन भूल जाओगे और तुम्हारे सुन्दर गीत, जिन्हें सुन कर अपनी जाति के लोग ख़ुश होते हैं, मैदान में गूँजना बन्द कर देंगे...तुम केवल मेरे लिये, अपनी राद्दा के लिये कोमल प्रेम-गीत सुनाया करोगे...इसलिये समय नष्ट मत करो, जैसा मैं कहूँ वैसा करो। कल तुम मेरा अधिकार मान कर अधीनता स्वीकार करो, जैसा ऊँचे अफ़सर से करते हैं। कल तुम सारे कैम्प के सामने, मेरे चरणों में झुक कर मेरा दाहिना हाथ चूमोगे...और तब मैं तुम्हारी हो जाऊँगी!'

"वह शैतान-बच्ची यह चाहती थी! मैं दंग रह गया। ऐसी घटनायें तो केवल पुराने ज़माने में होती थीं और सो भी मोण्टेनीग्रो के निवासियों में; पर हम ख़ानाबदोशों में कभी नहीं। एक स्त्री की अधीनता स्वीकार करना! बताओ फालकन, क्या इससे भी अधिक हास्यास्पद शर्त बता सकते हो? यह तो सौ बरस में भी नहीं हो सकता! नहीं साहब, कभी नहीं!

"लोक्यो चीख़ कर उछल पड़ा। सारा मैदान गूँज उठा! ऐसा मालूम होता था कि उसने अङ्गारों पर पैर रख दिया हो। राद्दा काँपने लगी, पर विचलित नहीं हुई।"

" 'अच्छा तो कल तक के लिये बिदा। कल तुम मेरे आदेशानुसार करोगे। सुना, लोक्यो?'

" 'सुन लिया! मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूँगा।' कराह कर ज़ोबार ने उत्तर दिया। उसने उसकी ओर हाथ फैला दिये। पर राद्दा कूद

कर अलग खड़ी हुई। आँधी से उखड़े पेड़ की भाँति वह ज़रा डोला और पागलों की तरह हँसता और रोता हुआ ज़मीन पर गिर पड़ा।

"इस प्रकार वह दुष्टिनी उस बेचारे को सज़ा दे रही थी। मैं बड़ी मुश्किल से उसे होश में ला पाया।

"मेरी समझ में नहीं आता कि स्त्री-पुरुषों को ऐसे भीषण दुख में डुबो कर शैतान को अथवा बीलज़ेबुब को अथवा ईश्वर ही को क्या सुख मिलता है! मनुष्य की दर्दनाक विलाप करती हुई आह सुन कर उसे क्या लाभ होता है? मैं नहीं समझता कि दार्शनिक लोग भी इस के बारे में कुछ जानते हैं...

"डेरे पर लौट कर मैंने बुड्ढे को सारा हाल सुना दिया। कुछ देर तक सलाह कर आपस में हम लोगों ने यह विचारा कि कल देखना चाहिये, क्या होता है। और दूसरे दिन यह हुआ: अगले दिन शाम को हम लोग आग जला कर चारों ओर बैठे हुये थे। लोक्यो हमारे पास आया। वह बड़ा गम्भीर और शुष्क लग रहा था; आँखों के नीचे काली लकीरें पड़ गई थीं। दृष्टि ज़मीन पर गड़ी थी। बिना नज़र उठाये वह हम लोगों से बोला—'भाइयो, सुनो! आज मैंने अपने दिल को अच्छी तरह टटोल कर देखा है; किन्तु अब अपनी आज़ादी के लिये उसमें बिलकुल भी जगह नहीं पाई है। उसमें अब केवल राद्दा निवास करती है। यहाँ अब राद्दा ही है, अति सुन्दरी राद्दा, रानी की भाँति मुस्कराती हुई। उसे अपनी स्वतंत्रता मुझसे अधिक प्यारी है, पर मैं अपनी आज़ादी से अधिक राद्दा से प्रेम करता हूँ। इसलिये मैंने उसके पैरों पर गिरने का निश्चय कर लिया है। यह मैं उसकी आज्ञानुसार करने को तैयार हूँ, यह उसका हुक्म है, ताकि आप लोग सब देख लें कि उसकी सुन्दरता ने अक्खड़ लोक्यो ज़ोबार को भी पराजित कर दिया है—लोक्यो ज़ोबार जो राद्दा को जानने से पहले स्त्रियों से ऐसे खेलता था, जैसे बिल्ली चूहे से खेलती

है। किन्तु फिर उसके बाद वह मेरी पत्नी हो जायगी और चुम्बनालिंगनों से मुझे इतना वश में कर लेगी कि मुझे दूसरों के लिये जाने और अपनी आज़ादी खोने का शोक करने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी !...ठीक कहा न मैंने, क्यों राद्दा ?' आँख उठा कर उदास भाव से उसकी ओर ताका। राद्दा ने उत्तर में कुछ नहीं कहा, पर ज़ोर से सिर हिला कर अपने क़दमों की तरफ़ इशारा किया। विस्मय, दुख और क्षोभ में भरे हम लोग देखते ही रहे, कुछ समझ में नहीं आया। हम लोग वहाँ से भाग कर दूर चले जाना चाहते थे कि लोक्यो ज़ोबार का स्त्री के चरणों पर गिर कर पतन न देख पायँ, चाहे वह स्त्री राद्दा ही क्यों न हो। लज्जा, दया और शोक के मारे हमारा सिर ही नहीं उठता था।

" 'अच्छा, तो ?'—राद्दा ने ज़ोबार से कहा।

" 'अरे ! इतनी जल्दी मत करो ! उसके लिये तमाम समय पड़ा हुआ है। आज तुम्हें काफ़ी गौरव प्राप्त हो जायगा !' लोक्यो ने हँस कर कहा। लोहे के संघर्ष के समान कर्कश उसकी हँसी थी।

" 'हाँ, भाइयो, सारी कथा यही है। अब मेरे लिये दूसरा रास्ता ही क्या है ? मेरा यह जानना आवश्यक है कि क्या वास्तव में मेरी राद्दा का हृदय ऐसा ही पत्थर का है, जैसा वह दिखाती आई है ! मैं अब यही जानने जा रहा हूँ...माफ़ करना, प्यारे भाइयो !'

"और इससे पहले कि हम लोग समझ सकें कि ज़ोबार क्या करने जा रहा है, राद्दा पृथ्वी पर लेटी थी और उसकी छाती में लोक्यो का खंजर मूठ तक धँसा हुआ था ! हम लोगों को तो जैसे काठ मार गया हो।

"किन्तु राद्दा ने अपने सीने से कृपाण निकाल कर अलग फेंक दिया और अपने काले केशों की एक लट घाव में दबा कर मुस्कराई और

बोली, साफ़ तेज़ आवाज़ में : 'विदा, प्यारे लोक्यो ! मैं जानती थी तुम यही करोगे !...' यही शब्द मृत्यु के समय उसके ओठों पर थे।

"फालकन, अब तुम समझे किस प्रकार की लड़की थी वह ? कैसी विचित्र स्त्री थी ! मैं तो यही कहूँगा कि ख़ास शैतान की पुत्री थी ! हाँ भैया...

" 'अब, मेरी गर्विणी रानी, मैं तुम्हारे चरणों पर गिरता हूँ !' वह विलक्षण युवक लोक्यो चिल्लाया, और सारा मैदान उसके शब्दों से गूँज उठा। वह धरती पर गिर पड़ा और मृत राद्दा के क़दमों पर अपने ओठ लगा ऐसा पड़ा रहा, मानो स्वयं मरा पड़ा हो। सम्मान-प्रदर्शन करते हुये हम लोग टोपी उतार, उन दोनों को घेर कर चुपचाप खड़े रहे।

"ऐसी कहानी के बारे में क्या राय देते हो फालकन ?

"तब नूर ने कहने की चेष्टा की: 'इसे बाँध लें !' पर लोक्यो ज़ोबार को बाँधने के लिये किसी का हाथ नहीं उठ सकता था और नूर इसको अच्छी तरह जानता था। परन्तु दानीला ने राद्दा द्वारा बाहर निकाल कर फेंका हुआ खंजर उठा लिया और ग़ौर से देखने लगा। उसके ओठ काँप रहे थे। राद्दा का गर्म ख़ून अभी चाकू पर लगा था; कितना तेज़ और तिरछा कृपाण था ! तब दानीला ने ज़ोबार के पास पहुँच कर उसकी पीठ में, ठीक दिल के ऊपर, वह छुरा घुसेड़ दिया, क्योंकि आख़िर वह वृद्ध सैनिक था तो राद्दा का पिता ही !

"शाबास !' दानीला की तरफ़ मुड़ कर देखते हुये लड़खड़ाती हुई आवाज़ में लोक्यो ने कहा और लुढ़क कर राद्दा के शव पर गिर पड़ा। उसकी आत्मा अपनी प्रेमिका की आत्मा के साथ पृथ्वी छोड़ कर उड़ गई।

"वहाँ पर हम लोगों के सामने राद्दा लेटी थी, हाथ से बालों की लट को वक्षःस्थल में दबाये, नेत्र स्थिर दृष्टि से आकाश की ओर ताकते

हुये, चरणों पर उसके सुन्दर प्रेमी का शव पड़ा हुआ। लोक्यो ज़ोबार के बाल बिखर कर आगे आ गये थे और हम उसका चेहरा नहीं देख सकते थे।

"गम्भीर चिन्तन में मग्न हम लोग निश्चल खड़े थे। वृद्ध दानीला की मूँछें काँप रही थीं और उसके नेत्रों में भयानक भाव था। आकाश की ओर ताकता हुआ वह चुपचाप खड़ा था। किन्तु बूढ़ा दुर्बल नूर मुँह ढाँपे ज़मीन पर पड़ा फूट-फूट कर बच्चों की भाँति रो रहा था।

"हाँ, फालकन! वह सबके रोने का समय था! हाँ, भैया, सब के रोने का...

"अच्छा तो, कहानी ख़तम हुई! भगवान् तुम पर कृपा दृष्टि रक्खें। बस सीधे चलते रहो और मुड़ो मत। अगर एक ही जगह रुक गये तो पड़े-पड़े सड़ने लगोगे। बस, असल बात यही है, फालकन भैया।"

मकर ने कहानी समाप्त कर अपना पाइप थैली में रख लिया और लबादा सीने पर डाल लिया। वर्षा हलकी फुहारों में पड़ रही थी। हवा तेज़ हो गई और सागर की विशाल लहरें किनारे की चट्टानों से टकरा कर चीत्कार कर रही थीं। एक के बाद एक, घोड़े हमारी आग के पास आकर खड़े हो गये और बुद्धिमती आँखों से हमें देखने लगे।

"हो, हो, इहो!" मकर ने अपनी स्नेह-मिश्रित वाणी में उन्हें पुकारा। अपने ख़ास प्यारे घोड़े की गरदन पर हाथ फेरते हुये उसने मुझसे कहा—"अब सो जाओ।" लबादे से सिर ढँका और पैर फैला कर वह तत्काल गहरी नींद में सो गया। पर मुझे नींद कहाँ। अन्धकार में गरजते हुये समुद्र की ओर देखने पर मुझे लगता था कि सुन्दरी गर्विणी राद्दा खड़ी है, हाथ कस कर काले केशों को घाव में दबाये है, कोमल अँगुलियों के बीच में से रक्त की बारीक धार निकल कर छाती से 'टप्-टप्' गिर रही है—आग के अंगारों के समान लाल!

"और उसके पीछे, बिलकुल पास, वीर लोक्यो ज़ोबार खड़ा है। चेहरा लम्बे बालों के पर्दे से ढँका है, जिसके पीछे से गर्म आँसुओं की धार बह रही है...

वर्षा का वेग बढ़ गया। हवा शोकाकुल हो अपनी आन पर अड़े, जोड़े की मृत्यु का गीत गाने लगी। लोक्यो और राद्दा, दानीला की पुत्री राद्दा के अन्त पर, वायु विलाप कर रही थी। और रात्रि-के अन्धकार में दोनों प्रेत छायायें एक दूसरे का पीछा कर रही थीं, पर गायक लोक्यो, अपनी गर्विणी प्रेमिका राद्दा को पकड़ नहीं पा रहा था।

गोस्लेविया

नाजा

लेखक—एक्ज़ेवर सेण्डोर गिजालस्की

मुझे कुछ समय पहले से इस बात का सन्देह हो रहा था कि
(कारी दफ़्तर के 'डी' महकमे में मेरे साथ काम करने वाला पैरो बहुत
खी मनुष्य है। वह किसी से अधिक बातचीत न करता था। वह
दा शान्त भाव धारण किये रहता था। उसने अपने दुःख का हाल
ाज तक किसी को भी नहीं बतलाया था। उसके साथ अधिक समय
क रहना कठिन हो जाता था, क्योंकि अधिक समय तक किसी
खिया के साथ रह कर उसकी आत्मा को कुचलने वाले भयंकर दुःख
ा हाल न जानने से भी तो दुःख ही होता है। उसके समस्त शरीर से
नन्त दुःख की श्वास-सी निकलती थी। वह दुःख छिपाया भी नहीं
ा सकता था। वह दुःख उसके शरीर का एक अंग-सा बन गया था।

ग्रीष्म ऋतु की सुहावनी सन्ध्या-बेला थी। वह और मैं दोनों
न्यूब के तट पर अपने दफ्तर के नीचे चहल-क़दमी कर रहे थे।
ाली-काली लहरों में चाँदी के समान चमकते तारों की उज्ज्वल पर-
ाईं बहुत भली जान पड़ती थी। चन्द्रमा के ऊपर से आते-जाते
ादलों की छाया भी दृष्टि को सहसा उस ओर आकृष्ट कर लेती थी।
वा के साथ गाँव के बेला और बाँसुरी के स्वर मिलकर कर्ण कुहरों
प्रवेश कर रहे थे। वेक्सा के पास के सेवार के वृक्षों से कोयल की
धुर आवाज़ स्पष्ट सुनाई पड़ रही थी। हम लोगों के पैरों तले नदी
ालकल निनाद करती हुई बह रही थी। सामने अंधकार में खड़े हुए

मकानों से मिल के चकों के चलने की आवाज़ सुनाई पड़ रही थी। इस शान्त सन्ध्या-काल में एक मिठास-सी मिली हुई थी। सहसा किसी स्थान से, मिल से अथवा अदृश्य नाव से, एक बालिका का स्पष्ट और सरस स्वर निस्तब्धता को विदीर्ण करता हुआ सुनाई पड़ने लगा। पैरो चौंक उठा और वह रुक कर धीरे-धीरे चलने लगा। वह बाँसुरी के स्वरों के समान काँप उठा। "उसका गाना! उसका गाना!" वह धीरे-धीरे कहने लगा। वह खड़ा हो गया। उसके पैरों ने आगे बढ़ने से इंकार कर दिया। हम लोग निश्चेष्ट भाव से वहाँ खड़े-खड़े गाना सुनते रहे। कुछ देर के बाद अंधकारपूर्ण छाया के अन्दर गाना विलीन हो गया। इसके बाद वह नदी की ओर से मुड़ कर सड़क पर आया। उसने मेरा हाथ पकड़ लिया और बिना कुछ पूछे ही बोलना आरम्भ किया। वह लगातार बोलना जानता था। ऐसा जान पड़ता था कि बातचीत करते समय, एक क्षण के लिये भी उसकी साँस बन्द न होती थी। वह अपने दुःख की कहानी कह रहा था। मैं उसे उसी के शब्दों में उद्धृत करता हूँ—

मैं सदा उसके सम्बन्ध में विचार किया करता हूँ। मेरा सारा शरीर प्रत्येक दिन दुःख तथा नैराश्यपूर्ण आशा से सिहर उठता है। मधुर स्मृतियों से दुःख और बाद में जो घटना घटी, उससे हृदय के अन्दर आतंक के भाव जाग्रत हो पड़ते हैं। मेरा मन विक्षुब्ध और भूखा-सा ही उस सुन्दरता की प्रतिमा की ओर दौड़ता रहता है। उसका नाम मेरे ओठों पर रखा रहता है। मैं बड़े प्रेम के साथ अपने दोनों हाथ उसकी ओर बढ़ाता हूँ। यह सब मैं यह जानते हुए करता हूँ कि वह मर चुकी है। मैं उसको क्षण-प्रतिक्षण अपनी आँखों के सामने देखता हूँ। मेरी प्यारी, दुलारी, बेचारी, नाजा! वह एक किसान की सुन्दर बेटी स्लेवोनिया के एक साधारण गाँव में रहती थी। शब्दों में सामर्थ्य नहीं है कि उसकी सुन्दरता का वर्णन कर सकें। आज भी,

कई वर्ष व्यतीत हो जाने के बाद, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि उन विशाल काली आँखों की, सुन्दर अण्डाकार चेहरे की, काले बालों की, मृदुल गम्भीरता के मधुर भाव की, शरीर के चित्ताकर्षक रंग की और सौन्दर्य के निर्बल आकार की संसार में कहीं तुलना नहीं की जा सकती। उसका सौन्दर्य अद्वितीय था, अतुलनीय था और था उसके साथ ही साथ पूजनीय तथा प्रशंसनीय भी। उसके जैसी सुन्दरी आज भी संसार में ढूँढ़ने पर नहीं मिल सकती। इतना होने पर भी, मैंने उसे प्यार नहीं किया। मेरे मन में उससे प्रेम करने का विचार ही कभी उत्पन्न न हुआ। उसका अन्तिम परिणाम यह हुआ कि मैं उसे सदा के लिये खो बैठा। ईश्वर न्यायशील है और साथ ही साथ भयंकर भी।

मेरी उसकी पहली मुलाक़ात एक जंगल में हुई। मैं शिकार खेलने के लिये गया था। परन्तु अधिक तेज़ गर्मी हो जाने के कारण, मुझे विवश होकर विश्राम करने के लिये किसी छायादार जगह की तलाश करनी पड़ी। तभी वह मुझे मिली। वह अपने ढोरों के पास खड़ी हुई थी। वह किसी उज्ज्वल कपड़े को सीने में तल्लीन थी। मैं उस पर से अपनी आँखें हटा न सका। मैं चौंधिया गया। मैंने ऐसा सौंदर्य कभी न देखा था। उसके व्यवहार में एक मधुर गम्भीरता मिश्रित थी। इसलिये उसे एक साधारण किसान-कन्या समझ लेना किसी भी तरह सम्भव न था। जहाँ तक मेरा ख़याल है, मैंने उससे केवल गाँव की ओर जाने वाला पास का रास्ता पूछा था।

पहले-पहल उसने मुझे कोई उत्तर नहीं दिया। वह अपनी गरदन झुकाये हुये कपड़ा सींती रही। उसने एक बार भी नज़र उठा कर मेरी ओर न देखा। जब मैंने अपने प्रश्न को दोहराया, तब उसने एक संक्षिप्त उत्तर दिया। वह प्रेम भाव से पूर्ण नहीं माना जा सकता था। उसने केवल संकेत द्वारा उस मार्ग को मुझे बतला दिया, जिस ओर मुझे जाना था।

"क्या आज गर्मी नहीं है ?" मैंने अपना टोप उतारते हुये और पसीना पोंछ कर उससे फिर पूछा। मैंने अपने सिर पर से बन्दूक के कुन्दे को नीचे उतारा और पास ही एक वृक्ष की जड़ पर बैठ गया।

लड़की ने मेरी ओर ज़रा भी ध्यान न दिया। मैंने पूछा—"तुम कौन हो, बच्ची ?" उसने कोई उत्तर न दिया। वह मेरे पास से चली गई और अपने पशुओं को जाकर देखने लगी।

"क्यों, क्या तुम अपना मुँह नहीं खोल सकतीं ?" मैंने इस समय नाराज़ होकर पूछा—"क्या तुम मुझे अपना नाम भी नहीं बतला सकतीं ?"

"मेरे नाम से आपको क्या सरोकार ? मैं इसी गाँव की रहने वाली हूँ," उसने रुखाई के साथ जवाब दिया और वह जाने के लिये तैयार हो गई। उसने अपना सीना बन्द कर दिया और वह खेत में इधर-उधर फैले हुये बछड़ों को बुलाने लगी।

"क्यों तुम्हें अपना नाम बतलाने में कोई आपत्ति है ? नाम बतलाने में तो कोई हर्ज़ नहीं जान पड़ता। क्या तुम तेजका या मिलजेनका अथवा मारा हो ?"

"नहीं, मेरा नाम नाजा है—टोशा नेडलजोविक को बेटी।" वह शरमा कर भाग गई।

"शिकार भाड़ में जावे ?" मैंने उत्तेजित स्वर में कहा। जिस ओर वह गई थी, मैं भी उसके पीछे-पीछे चला। मुझे उससे फिर मुलाक़ात होने की आशा थी।

इसके बाद मैं रोज़ जंगल में जाने लगा। वहाँ नाजा से मेरी मुलाक़ात होने लगी। पहले तो वह मुझसे बहुत डरती थी। यदि वह मेरे प्रश्नों का उत्तर भी देती थी, तो बड़ी रुखाई के साथ। मुझे भी उसकी उपस्थिति में लज्जा आती थी, इसी कारण उसकी भी लज्जा धीरे-धीरे कम हो गई। वह मेरी ओर अधिक आकृष्ट होने लगी।

अन्त में उसका मुझ पर पूरा विश्वास हो गया। उसने मुझको बतलाया कि मैं अधिकांश सभ्य पुरुषों से बिलकुल भिन्न हूँ। वह मुझसे अपने छोटे-से गृहस्थी के संसार की चिन्ता और दुःख के सम्बन्ध की बातें किया करती थी। इसके अतिरिक्त वह अपने गाँव का भी समाचार सुनाया करती थी। वह बतलाया करती थी कि बहुत से लड़के उससे इसलिये नाराज़ रहते हैं कि वह उनके साथ कताई के काम में अथवा नाच में सम्मिलित नहीं होती।

"तुम उनकी मर्ज़ी के मुताबिक क्यों नहीं चलतीं?" मैंने पूछा।

"मैं इसका कारण नहीं जानती। मैं ऐसा करना भी नहीं चाहती। लोग कहा करते हैं कि कताई का काम करते समय बहुत-सी बातें हुआ करती हैं। परन्तु मैं केवल मज़ाक कर रही हूँ। पिता जी का कहना है कि हम किसानों को अधिक हँसना न चाहिये। ज़मीन के नये बँटवारे के कारण वह ऐसा कहते हैं।

"तुम्हारा आशय नई पैमाइश से है?"

"हाँ, मुझे इस सम्बन्ध में कुछ बतलाइये महाशय—" इसके बाद उसने मुझसे 'अधिकार और कानून' और 'ज़मीन की नई पैमाइश' के सम्बन्ध में प्रश्न करना शुरू कर दिया। वह इस सम्बन्ध में अधिक कुछ नहीं जानती थी।

मैंने कहा, "परन्तु ये सब बातें पुरुषों के विचार करने के योग्य हैं, नाजा! इस विषय में लड़कियों को दखल देने की ज़रूरत नहीं।"

"मेरा भी यही ख़याल है। परन्तु मैं उस सम्बन्ध में आप से बात-चीत तो कर सकती हूँ। मैं दूसरे आदमियों से तो इस सम्बन्ध में बात-चीत भी नहीं कर सकती। हमारे गाँव के सब लोगों का कहना है कि हमारा पादरी पैमाइश करने वालों से मिला हुआ है। वह ज़मींदार को हम लोगों के पुराने कब्रस्तान को उनके हिस्से में लेने के लिये रज़ामन्द

हो जावेगा। वे लोग हम लोगों के लिये जंगल में कब्रस्तान बनाने का विचार कर रहे हैं।"

"इन बातों से तुम्हारा क्या सम्बन्ध है?"

"इससे मेरा क्या सम्बन्ध है? क्यों, वहाँ हमारे दादा और परदादा सभी तो गड़े हुए हैं, ऐसा हमारे पिता जी का कहना है। हमारे-पूर्वज जिस समय से बोसनिया से यहाँ आये, तभी से हमारे गाँव वाले इस कब्रस्तान का उपयोग कर रहे हैं। अब वे लोग काउण्ट को अपनी गायें वहाँ चराने देने का अधिकार देना चाहते हैं। भविष्य में हम लोग भेड़ियों और लोमड़ियों के बीच दफनाये जायँगे।"

मैं उसकी ओर चकित होकर देखने लगा। वह बिलकुल पीली पड़ गई और मेरी ओर टकटकी लगा कर देखने लगी। उस समय उसकी आँखें ऐसी लग रही थीं जैसी कि सरमक के 'वोईवोड की मृत्यु' नामक चित्र में मोष्टीनीग्रो वाली लड़की की आँखें दिखती हैं।

इसके अलावा हमारी मुलाक़ात बहुत सादी और साधारण हुआ करती थी। इसलिये मैं इस बात को समझ न सका कि मुझे उसकी बातों में कितनी दिलचस्पी लेनी चाहिये। अन्तिम समय तक भी मैं इस बात को अच्छी तरह न समझ पाया—उस समय तक भी मैं इस बात को न समझ पाया; जब बहुत विलम्ब हो चुका था। •

एक दिन पौ फटते ही मैं शिकार खेलने के लिये दिन भर के लिये घर से बाहर निकल पड़ा। जिस समय मैं गाँव में पहुँचा, उस समय वहाँ रात्रि के समान शान्ति थी। मेरा रास्ता नेडेलजोविक के मकान के पास ही से जाता था। मैंने नाजा को बगीचे के अन्दर कुएँ के पास देखा। वह अभी-अभी अपना मुँह धो चुकी थी और अपने लम्बे बालों में कंघी कर रही थी। वह सुन्दरी थी—चित्ताकर्षक थी; माधुर्य मिश्रित थी। प्रातःकालीन धुँधला प्रकाश उसके बिखरे हुए काले बालों पर चमक रहा था। उसके बाल गले के मोड़ से घूम कर उसके वक्षः

स्थल पर फैले हुए थे। उसका वक्षःस्थल आधा खुला हुआ था। मैं इस दृश्य को देख कर अपने को बिलकुल न सँभाल सका। मैं उसकी ओर लपका—उसने मुझे न देखा था—उसको मैंने अपनी भुजाओं से पकड़ कर उसके कोमल कपोलों का चुम्बन ले लिया।

वह अपने को मुझसे छुड़ा कर धीरे से चिल्लायी। उस चिल्लाहट में आधी हँसी मिली हुई थी। उसने समझा कि गाँव के किसी युवक ने यह दुष्टता की है। वह न तो भयभीत ही हुई और न बहुत कुपित ही। परन्तु जिस समय उसने मुड़ कर मुझे पहिचान लिया, उसके अधरों से वह तीक्ष्ण मुस्कराहट लुप्त हो गई। उसकी आँखें नीचे झुक गईं और उसने अपने खुले वक्षःस्थल को दोनों हाथों से ढँक लिया। मुझे अपने इस व्यवहार पर दुःख हुआ। फिर भी मैंने लड़खड़ाती हुई ज़बान में कहा—"नाजा, मेरी अपनी सुन्दरी नाजा!"

"यदि आप को सचमुच मेरी चिन्ता रहती, तब आप ऐसा काम कभी न करते।" उसने उदास भाव से काँपती हुई ज़बान में उत्तर दिया। इस प्रकार ज़वाब देकर वह धीरे-धीरे अपने घर की ओर चली। मैं एक मूर्ख के समान उसकी ओर टकटकी लगा कर देखता रहा। मुझे इस बात का विश्वास ही न होता था कि एक किसान-कन्या इस ज़रा सी बात का इतना अधिक बुरा मानेगी। मुझे इस समय पता चला कि नाजा अन्यान्य बालिकाओं से बिलकुल भिन्न है। इस समय मैंने उसका अपमान किया है। मैंने उसके साथ किसी साधारण ग्रामीण सुन्दरी के समान व्यवहार किया है।

जिस समय वह एक फूल के वृक्ष के पास खड़ी होकर अपनी आँखों के आँसू पोंछने लगी, उस समय उसकी दशा देखकर, मेरे दिल पर ज़बर्दस्त धक्का लगा। मुझको उसके पास दोबारा जाने में शरम-सी जान पडने लगी। वह मेरी ओर देखती रही। उसने मुझे

अभी भी उसी स्थान पर खड़े हुए पाया। मुझे उसके अश्रु-पूर्ण नेत्रों में आनन्द की एक झलक-सी दिखलाई पड़ी।

सूर्योदय हो चुका था। बेर के वृक्ष के आर्द्र पत्तों के ऊपर पीले गुलाब के रंग का नृत्य हो रहा था। संसार लाल और सफ़ेद रंग में डूबा-सा जान पड़ता था। केवल सुदूरस्थ तराइयाँ अभी भी बैंगनी छाया के अन्दर काँपती-सी जान पड़ती थीं। प्रातःकालीन नूतन सौन्दर्य जागते हुए सुखी बालक की मुस्कान के समान चमकता हुआ दिखलाई दे रहा था। मेरे ऊपर हरियाली में एक छोटा पक्षी चहचहा रहा था। मेरा वक्षःस्थल दीर्घ निःश्वास लेने लगा और फूल-सा गया। मेरा हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो गया। मैं इस बात को पूछने के लिये ज़रा देर को भी न रुका कि उसके चेहरे पर सूर्य-प्रकाश झलक रहा है अथवा और कुछ।

"नाजा, नाजा !" मैं विजयोत्फुल्ल भाव से चिल्लाया। मैं उसकी ओर बढ़ा। इसी समय मैंने अपने पीछे किसी आदमी को मज़ाकिया आवाज़ में मेरा नाम लेकर बुलाते हुए सुना। मैंने मुड़ कर देखा कि वह मेरा दोस्त गेज़ा था। वह गाँव का सरदार, मेरे समान शिकारी था और बड़ा मज़ाकिया था।

मैं अपनी भावनाओं पर लज्जित हुआ। मुझे भय हुआ कि कहीं मित्र ने मेरी हरकत तो नहीं देख ली है। मुझे अपनी बुज़दिली का उस समय दुःख हुआ, जब मुझे प्रतीत हुआ कि उसने इसे प्रेम को एक साधारण चोचला समझा।

मैं उसके साथ चल दिया। मैंने एक बार भी लौटकर नाजा की ओर न देखा। उस दिन उसके पास जाने की मेरी हिम्मत नहीं हुई। दूसरे और तीसरे दिन भी मैं उसके यहाँ न जा सका। चौथे दिन सर-कारी काम के लिये मुझे मज़बूरन एक दूर स्थान के लिये रवाना होना पड़ा। मुझे वहाँ चार महीने तक रहना पड़ा। सम्भवतः मुझे वहाँ

और अधिक समय तक ठहरना पड़ता, यदि मुझे आवश्यक कार्य के लिये वहाँ से सहसा वापस न बुला लिया गया होता।

बारह घण्टे के बाद मुझे इस आवश्यक कार्य का पता चला। नाजा के गाँव के लोग नई पैमाइश के खिलाफ़ बाग़ी हो गये थे। उन लोगों को जिस प्रकार ज़मीन का बँटवारा किया जा रहा था, वह बिलकुल मंजूर न था। काउण्ट ने अपने नौकरों को हल-बखर लेकर उन खेतों को बखरने के लिये भेजा था, जो अभी तक किसानों के अधिकार में थे। किसानों ने उनको मार कर ज़ख्मी कर दिया। पुराने कब्रस्तान को बन्द करने के लिये जो सरकारी मुलाज़िम भेजे गये थे, उनको धमकी दी गई। जब वे भागे तो उनका पीछा किया गया। भाग्यवश वे इनके हाथ न आये। किसानों ने अपने पादरी अमीन और कौन्सिल के सदस्यों को कारागार में डाल दिया था। इतना करने के बाद उन लोगों ने जमींदार की मवेशियों को छीन लिया था। इन मवेशियों को दूसरे गाँव के शामिल-शरीक चरागाह पर चरने के लिये भेज दिया गया था।

यह एक ज़बर्दस्त और पूरा बलवा था। किसी आदमी की हिम्मत गाँव के अन्दर जाने की न होती थी। स्थानीय मजिस्ट्रेट ने तार के द्वारा फ़ौजी सहायता की प्रार्थना की थी। मुझको दीवानी मामलों की सब कार्रवाई करने का अधिकार और हुक्म दिया गया था। दुर्भाग्य-वश—मुझे कहते हुये शरम मालूम पड़ती है—मैं परिश्रम-शील होने के लिये मशहूर था। इसी नाम की वजह से मैं ऐसे भयास्पद स्थानों में भेजा जाता था। मैं नहीं कह सकता कि मुझ में उतनी कार्य-क्षमता वास्तव में थी अथवा नहीं। परन्तु मैं इस बात को अवश्य जानता हूँ कि मैं ज़बर्दस्त विरोध को भी सहज ही में नष्ट कर सकता था। शान्तिपूर्ण स्लेवोनियन की तो बात ही नहीं, परन्तु जैगोरियन लोगों को भी मैं अपने कब्ज़े में ला सकता था जिनकी धमनियों में कृषक राज

गूबेक का रक्त प्रवाहित होता था। हाँ, आज मैं इतना अधिक कर्त्तव्य निष्ठ नहीं हूँ। परन्तु उस समय मैं जवान और मूर्ख था। मुझे कानून की शक्ति और व्यापकता पर तथा सरकार और समाज पर विश्वास था। मैं इस विद्रोह को दमन करना अपना परम धार्मिक कर्त्तव्य समझता था। मैं कितना मूर्ख था! यह सारी मूर्खता बड़े-बड़े शब्दों के अन्दर छिपी रहती थी। उसकी बर्बरता और असत्यता को छिपाने के लिये इन्हीं साधनों की आवश्यकता थी; परन्तु मेरा शक्ति पर विश्वास था। मैं विद्रोही कृषकों के प्रति किसी भी प्रकार की सहानुभूति प्रदर्शित न करने में ही न्याय समझता था।

मुझ को इस विद्रोह को दबाने के सम्बन्ध में ज़रा भी सन्देह न था। मुझे अपनी शक्ति पर भरोसा था। मुझे विश्वास था कि खबरों में नमक-मिर्च लगाया गया है। मैं उस समय भी बड़ी शान्ति के साथ प्रतीक्षा करने लगा, जब मुझे गाँव के अन्दर फौज़ के सैनिकों को लेकर जाना होगा। मुझे नाजा से दुबारा मिलने के मौक़े को पाकर प्रसन्नता हो रही थी। मैं उसके पैमाइश के वार्त्तालाप को बिलकुल भूल गया था। यदि समय पर मुझे उसका स्मरण हो जाता, तो बहुत अच्छा होता। मैं विद्रोह से नाजा के किसी भी प्रकार के सम्बन्ध को विचार ही न सकता था, यद्यपि मकान की स्वामिनी ने मुझ को यह बतलाया था था कि एक कृषक-कन्या कई मर्तबा उससे मिलने के लिये आई थी। जिस समय मैं गैरहाज़िर था, उस समय आकर उसने मेरे सम्बन्ध में पूछताछ की थी।

"क्या वह नाजा थी?"

"मुझे उसका नाम नहीं मालूम। परन्तु वह बहुत सुन्दरी थी। महाशय, मैं, समझती हूँ कि आप उसे अवश्य जानते होंगे।" वृद्धा स्त्री मुस्कराई और वह अपनी अँगुली मेरी ओर हिलाने लगी।

"इस निरर्थक बात को बन्द भी करो—"

परन्तु बीच ही में उसने मेरी बात काट दी—"वह आप के लिये कोई चीज़ लाई थी—वह दस्तकारी किया हुआ एक कपड़ा था।"

"क्या तुमने उसको यह नहीं बतलाया कि मैं कहाँ गया था?"

"हा-हा! नहीं! आप इतने दूर थे। इसके अलावा मैं समझी कि शायद आपको अपना पता बतलाना पसन्द न हो। मैं कह नहीं सकती कि आजकल उस लड़की को क्या हो गया है। उसको किसी भी प्रकार की लज्जा नहीं मालूम पड़ती थी। मैं समझी थी कि आप को इस बात का बहुत जल्द पता चल जावेगा।"

"ओफ्; निरर्थक बातें न करो!" मैंने ज़ोर से कहा और मैं नाजा के लिये एक उपहार खरीदने के लिये जल्द रवाना हो गया। मैं उससे मिलने के लिये बहुत व्याकुल हो रहा था। जिस समय हम लोग गाँव की ओर रवाना हुए, उस समय मुझे अपने कर्त्तव्य की अपेक्षा अपनी इस मुलाक़ात का अधिक ख्याल हो रहा था।

जिस समय हम लोग वहाँ पहुँचे, तब मैंने देखा कि खबरों में ज़रा भी नमक-मिर्च नहीं लगाया गया था। यदि हम लोग कुछ क्षण के बाद वहाँ पहुँचते, तो हम पादरी और काउण्ट के प्राण किसी भी हालत से न बचा सकते। उन लोगों ने जेलखाने में आग लगा दी थी। हमको गाँव में अधिक कष्ट न हुआ, क्योंकि वहाँ हमें बहुत कम आदमी मिले। खेत में कुछ किसान लोग जमींदार के हल-बखर जला चुके थे। परन्तु ज्योंही उन लोगों ने बन्दूक लिये हुए सैनिकों को देखा, वे भाग गये।

जंगल में प्रवेश करने पर और चरागाह जाने पर हमको आपत्ति का मुकाबिला करना पड़ा। यहाँ दोनों ओर से गोलियाँ चलने लगीं। परन्तु सब से जबर्दस्त मुठभेड़ कब्रस्तान में हुई। प्रायः गाँव के सभी निवासी वहाँ एकत्रित हो गये थे। बूढ़े और जवान, स्त्री-बालक और पुरुष किसी न किसी शस्त्र को हाथ में लिये हुए थे। फटे कपड़े पहिने

हुए एक लड़का पागल के समान ढोल पीट रहा था। उनके निकट पहुँचने के पूर्व हमें शोर-गुल, हँसी-मज़ाक और सौगंध खाने के शब्द सुनाई पड़े। "उनको चिल्लाने दो," मैंने सोचा। "यह अच्छा लक्षण है। भौंकने वाले कुत्ते कभी काटते नहीं।"

हमारे जाते ही वहाँ सहसा शान्ति स्थापित हो गई। बन्दूकों के समूह की चमचमाहट में कुछ न कुछ आतंक अवश्य अन्तर्हित रहता है। यहाँ भी उसका यथेष्ट प्रभाव पड़ा। कुछ देर शान्ति रही। इसी दरमियान मैंने लोगों से शान्ति-पूर्वक वहाँ से हट जाने के लिये कहा। मेरे स्वर में सदा के समान शान्ति और दृढ़ता न थी। इसलिये मेरे शब्द शोरगुल के अन्दर अन्तर्लीन हो गये।

"हम इस बात को कभी सहन नहीं करेंगे। पादरी और काउण्ट ने हमारे साथ विश्वासघात किया है! उन लोगों ने सबसे अच्छी ज़मीन अपने लिये ले ली है और जाकर सरकारी नौकरों से मिल गये हैं। यदि वे लोग हमारी सारी ज़मीन ले लेवेंगे, तो हम उनका क्या कर सकेंगे? लोभी भेड़िये केवल हमारी ज़मीन ही से सन्तुष्ट नहीं हैं। अब वे हमारे कब्रस्तान को भी लेना चाहते हैं। जिस कब्रस्तान में हमारे परदादा और नगड़ दादा शताब्दियों से दफ़नाये जाते हैं, क्या हम उसे अपने हाथ से निकल जाने देंगे?"

सहसा मुझे नाजा के शब्दों का स्मरण हो आया। मैं भीड़ की ओर घूर कर देखने लगा। उसे वहाँ न देख कर मुझे बहुत सन्तोष हुआ। परन्तु फिर भी किसी बात से मुझे कष्ट हो रहा था। पहले-पहल मैं अपने कर्त्तव्य का निश्चय न कर सका। यदि वह मुझे यहाँ देखेगी, तो क्या कहेगी? वह मेरे सम्बन्ध में क्या विचार करेगी? ये विचार मेरे दिमाग़ में चक्कर लगाने लगे। वह मुझसे घृणा करने लगेगी। शैतान कहीं के! इस वीभत्स काम के लिये उन लोगों ने मुझे क्यों चुना?

जब मैं इन सब बातों को सोचता हुआ खड़ा था, उस समय शोर-गुल बहुत तेज़ी के साथ बढ़ा। पागल पशु अथवा कुपित मनुष्य अनिश्चय को कमज़ोरी का चिन्ह समझते हैं। बाग़ी कृषक सैनिकों की ओर बढ़े। मेरा दिमाग़ चक्कर खाने लगा। मैंने अपनी पूरी ताक़त लगा कर अपने को क़ाबू में रखने का प्रयत्न किया और गोली चलाने की आज्ञा दे दी। आगे बढ़ते हुये सैनिकों को कृषकों ने पत्थरों और गोलियों से मारा। खून का निकलना ऐसी परिस्थिति में अनिवार्य हो गया। परन्तु मैंने पहले आसमान की ओर गोली चलाने की आज्ञा दी। कृषकों को मेरी इच्छा का पता चल गया। वे लोग अपने से ज़रा भी हटने को तैयार न थे।

"तुम्हारी हिम्मत हो, तो गोली चलाओ! हम लोग बादशाह की प्रजा हैं और वह हमको कत्ल करने की कभी आज्ञा न देगा। हम लोग ज़रा भी नहीं डरते!"

ऊपर निर्दोष गोली चलाने का यह उत्तर था। भीड़, सैनिकों का मज़ाक उड़ाने लगी। वे लोग कुपित होकर उनकी ओर बढ़े। हाथा-पायी होने लगी। कशमकश में चार सैनिक और लगभग पन्द्रह कृषक काम आये। अन्त में देहाती लोग खेत छोड़ कर भाग खड़े हुये और हम लोगों ने क़ब्रस्तान पर अधिकार कर लिया।

सहसा सामने पहाड़ी पर एक स्त्री दिखलाई पड़ी। वह भागते हुए लोगों को सम्बोधित करती हुई स्पष्ट शब्दों में बोली। उसके शब्द मेरे कानों में गूँज गये।

"तुम डरपोक! तुम लोग पहले प्रहार ही में भाग खड़े हुए! जिस किसी को पुरुष होने का घमंड हो, वह यहाँ मेरे पास आये! यदि ये लोग तुम्हारे पूर्वजों का कब्रस्तान तुम से छीन लेंगे, तो फिर तुम आखिर कहाँ जाओगे? उन लोगों को आने दो—यहाँ उनकी गोलियों का एक

खड़ा हुआ है ! ऐ, बहादुर सैनिको, यदि तुम लोग बड़े बहादुर तो यहाँ गोली चलाओ—मेरी छाती पर निशाना लगाओ !"

मैं नाजा के स्वर को पहिचान गया। मैंने उसके वक्षःस्थल पर गोल कटी हुई सफ़ेद चोली देखी। उसका खुला हुआ सुन्दर वक्षः बड़ा चित्ताकर्षक प्रतीत होता था। यह विश्वास करने योग्य बात था। परन्तु इस भयंकर समय में, मुझे उसकी सुन्दरता का ही ध्यान था। कई क्षण के बाद मैं परिस्थिति की गम्भीरता का अनुभव कर सका। मेरी कनपटियों के नीचे खून उतर आया। मैं पत्थर के समान खड़ा रहा। एक चीत्कार ने मेरा मोह भंग कर दिया। मुझे दूसरे क्षण का ज़रा भी ज्ञान न रहा। मुझे इस बात का भी पता नहीं कि मैंने शब्द अथवा संकेत द्वारा गोली चलाने की आज्ञा दी। मैं उस समय केवल एक चीज़ देख सका, जो मुझे आज भी दिखलाई पड़ती है और वह थी एक बड़ी भयंकर तस्वीर—नाजा पहाड़ी पर खड़ी हुई है। मैंने उसे अपने शस्त्र फेंकते हुए देखा। उसके वक्षःस्थल से खून की एक धार निकली। मैंने उसे लड़खड़ाते और गिरते देखा।

सभी बातें भूलकर मैं उसके पास दौड़कर गया। जिस समय मैं उसके पास ज़मीन पर बैठ गया, उस समय वह बोल नहीं सकती थी। परन्तु उसने अपना सिर उठाने की चेष्टा की। मैंने उसके ज़ख्म पर पट्टी बाँधी और उसे अपने हाथ पर उठाकर मैं उसे भीड़ के बीच से ले चला। विद्रोह शान्त हो गया। यह मरणासन्न लड़की मेरे वक्षःस्थल पर लेटी हुई थी, क्योंकि उससे मैं सदा के लिये अलग हो रहा था। तभी मुझे इस बात का पता चला कि मैं इसे संसार की सभी चीज़ों से अधिक प्यार करता हूँ।

किसी एक जन-समुदाय द्वारा निर्मित कानून पर विश्वास करने का मुझे यह दण्ड मिला। मैं इन कानून और कायदों को। सर्व साधारण की इच्छा की अपेक्षा अधिक उच्च समझता था।

अपनी बेहोशी की अवस्था में वह केवल मेरे सम्बन्ध में, मेरी मुलाक़ात के सम्बन्ध में बड़बड़ाती रही। इसके बाद वह मधु-मक्खी के समान धीमे स्वर में एक मधुर गीत गाने लगी। उसके कराहने के साथ देहाती गीत का मिश्रण बहुत हृदयग्राही जान पड़ता था। वह मेरे दिमाग़ में सदा चक्कर लगाता रहेगा। मैं अपने आँसुओं को रोक न सका। मैंने अपना सिर तकिये के अन्दर दबा-सा दिया। मैं सिसकियाँ भरने लगा।

जब मैं प्रथम दुख के आवेग से जागा, तब मैंने उसकी खुली हुई चौड़ी आँखों को मेरी ओर घूरते हुए पाया। उनमें चैतन्य का प्रकाश दिखलाई पड़ रहा था। उसकी आँखों से आँसू निकलने लगे। वह मेरी ओर बहुत देर तक प्रेम और दुःख पूर्ण भावना से देखती रही। जब तक मेरे इस पार्थिव शरीर में प्राण अवशेष हैं, तब तक मेरे दिमाग़ में यह चितवन सदा बनी रहेगी।

उसकी अन्तिम श्वास निकल जाने के बाद, मेरे जीवन का सारा आनन्द मुझ से बिदा हो गया। क्या किसी आदमी के लिये इससे भी अधिक भयंकर दुर्घटना घट सकती है कि वह जिसे हृदय से प्यार करता है, उसी को जान से मार डाले ? मैं उन लोगों की नौकरी करते हुए जो गरीबों को सताया करते हैं, उसका हत्यारा बना।

मुझे अब जाने दो और इस बात को स्मरण रखना—सर्व साधारण की आवाज़ ही ईश्वर की आवाज़ है !

दो साल के बाद जब मुझे पता चला कि पैरो ज़ाजकार के युद्ध में मार डाला गया, तब मैंने उसे इस यातना से मुक्त कर देने के लिये ईश्वर को धन्यवाद दिया। परन्तु जिस समय मैं नाजा के सम्बन्ध में विचार करता हूँ, तब मुझे आत्म-विश्वास की भावना आनन्दित करने लगती है। जिस समाज में ऐसी कन्यायें वर्त्तमान हों, उन्हें अपने भविष्य के लिये किसी भी प्रकार का भय अथवा चिन्ता न करना चहिये।